इकाई-1 पूर्वाग्रह का अर्थ एवं विशेषताएँ तथा प्रकार (Meaning, Characteristics and Types of Prejudice)

इकाई संरचना

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 पूर्वाग्रह का अर्थ
1.4 पूर्वाग्रह की विशेषताएँ
1.5 पूर्वाग्रह के प्रकार
1.6 सारांश
1.7 शब्दावली
1.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न
1.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

सामाजिक जीवन में प्रायः यह अनुभव किया जाता है कि लोग एक दूसरे के बारे में उनकी समूह सदस्यता, जाति, धर्म, भाषा, नागरिकता या उसकी सामाजिक स्थिति को आधार मानते हुए एक सकारात्मक या नकारात्मक भाव विकसित कर लेते हैं और यह जानने का प्रयत्न नहीं करते हैं कि उस व्यक्ति में उस तरह के गुण या दोष हैं भी अथवा नहीं। जैसा कि आप जानते हैं कि दैनिक जीवन में अनुकूल भावना ही नहीं प्रतिकूल भावनाएँ भी स्वाभाविक रूप से पाई जाती हैं। समाज में रहते हुए हम कुछ लोगों से प्रेम या स्नेह करते हैं, और उसी आधार पर उनके प्रति हमारे हृदय में सहयोग अथवा सहानुभूति के भाव होते हैं। परन्तु, इसके विपरीत, उसी समाज के कुछ व्यक्तियों या समूहों से हम घृणा करते हैं, या अवहेलना की दृष्टि से देखते हैं। हम प्रत्येक विषय में उनको अपने समूह से पृथक मानते हैं, हेय समझते हैं; तथा उसी के अनुसार अपने व्यवहार में अपने भावों को ढालते हैं। ऐसा करने का कोई तार्किक कारण नहीं होता, फिर भी दूसरे समूह या व्यक्तियों के प्रति जो संवेगात्मक मनोभाव हमारे

अन्दर पनप जाता है, उसी के अनुरूप हम उनके प्रति विद्वेष, घृणा और कभी-कभी अत्याचारपूर्ण व्यवहार करने को तत्पर होते हैं। अतः समूह या व्यक्तियों के प्रति हमारे इन्हीं मनोभावों तथा व्यवहार प्रतिमानों को 'पूर्वाग्रह' कहते हैं। हम यहाँ इन्हीं व्यवहारों व मनोभावों के कारण को जानने का प्रयास करेंगे।

1.2 उद्देश्य

अन्तःसमूह या बाह्य समूह के प्रति हमारे अनुकूल या प्रतिकूल विचारों तथा धारणाओं को ही 'पूर्वाग्रह' कहा जाता है, इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप:

- पूर्वाग्रह क्या है, इसे समझ सकेंगे।
- पूर्वाग्रह की क्या विशेषताएँ होती हैं, इसे जान सकेंगे।
- पूर्वाग्रह कितने प्रकार के होते हैं, जान सकेंगे।
- पूर्वाग्रह हमारे व्यवहार को कैसे प्रभावित करते हैं, समझ सकेंगे।

1.3 पूर्वाग्रह का अर्थ

'पूर्वाग्रह' अंग्रेजी शब्द 'Prejudice' का हिन्दी रूपान्तर है। अंग्रेजी शब्द 'Prejudice' लैटिन भाषा के 'Prejudicium' शब्द से बना है जिसमें 'Pre' का अर्थ है 'पूर्व' तथा 'Judicium' का अर्थ 'निर्णय' अथवा 'धारणा'। इस दृष्टिकोण से पूर्वाग्रह का शाब्दिक अर्थ हुआ 'पूर्वनिर्णय' (Prejudgement)। इसी अर्थ में कहा जा सकता है कि पूर्वाग्रह का तात्पर्य व्यक्तियों या वस्तुओं के प्रति पूर्व निर्णय, भाव या प्रतिक्रिया से है; जो पूर्व निर्धारित होने के कारण वास्तविक अनुभव पर आधारित नहीं होती। पूर्वाग्रह एक ऐसी अभिवृत्ति है जो व्यक्ति को किसी अन्य व्यक्ति या समूह के प्रति एक निश्चित ढंग से प्रतिक्रिया करने के लिए तत्पर करती है और इसमें संवेगात्मकता, दृढ़ता, आक्रामकता, पक्षपात एवं गलत सूचनाओं की छाप रहती है। उदाहरण के लिए हरिजनों को अछूत, मुसलमानों को कठोर, अंग्रेजों को धोखेबाज, जापानी को बुद्धिमान, नेपाली को साहसी कहना इत्यादि सभी अभिवृत्तियाँ पूर्वाग्रह ही हैं। सामान्यतया पूर्वाग्रह में समूह के सदस्यों का निषेधात्मक मूल्यांकन होता है, लेकिन यह विधेयात्मक भी हो सकता है। एक ही समय लोग दूसरे समूह के सदस्यों को नापसन्द कर सकते हैं तथा अपने समूह के सदस्यों का केवल समूह सदस्यता के आधार पर विधेयात्मक मूल्यांकन कर सकते हैं। दोनों ही दशाओं में व्यक्ति की व्यक्तिगत विशेषताओं का कोई महत्व नहीं होता, बल्कि वह समूह महत्वपूर्ण होता है जिसका वह व्यक्ति सदस्य होता है।

पूर्वाग्रह को विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने अपने-अपने ढंग से परिभाषित किया है। सेकार्ड तथा बैकमैन ने लिखा है, ''पूर्वाग्रह एक मनोवृत्ति है जो व्यक्ति को किसी समूह या इसके सदस्यों के प्रति अनुकूल या प्रतिकूल ढंग से सोचने, प्रत्यक्षीकरण करने, अनुभव करने तथा क्रिया करने के लिए पहले से ही तत्पर बना देती है।''

जबकि आगबर्न का मानना है, ''पूर्वाग्रह जल्दबाजी में किया गया एक ऐसा निर्णया या मत है जो उपयुक्त परीक्षण के बिना ही अस्तित्व में आ सकता है।'' क्रेच, क्रचफील्ड तथा बैलेकी ने भी पूर्वाग्रह को प्रतिकूल अभिवृत्ति के रूप में परिभाषित किया है। उनके अनुसार, ''पूर्वाग्रह किसी वस्तु के प्रति प्रतिकूल मनोवृत्ति है जो बहुत कुछ रूढ़ियुक्ति तथा संवेग से प्रभावित होती है और विरोधी सूचना द्वारा आसानी से नहीं बदलती है।''

पूर्वाग्रह सामान्य रूप से एक ऐसी सामाजिक अवधारणा है, जो सामाजिक अन्तःक्रिया के दौरान पनपती है। पूर्वाग्रह किसी समूह के प्रति सकारात्मक अथवा नकारात्मक, अनुकूल अथवा प्रतिकूल, पक्ष अथवा विपक्ष में हो सकता है। पूर्वाग्रह प्रायः व्यक्ति की अपने समूह तथा उसके सदस्यों को सकारात्मक ढंग से मूल्यांकित करने के लिए तथा दूसरे समूह एवं उनके सदस्यों को नकारात्मक ढंग से मूल्यांकित करने के लिए उन्मुख करता है। हम वास्तविकता को समझे बिना किसी समूह या व्यक्ति के बारे में उसकी जाति या धर्म के आधार पर जो प्रतिकूल या निषेधात्मक धारणा बना लेते हैं, वही पूर्वाग्रह है। मायर्स ने पूर्वाग्रह को परिभाषित करते हुए लिखा है, ''किसी समूह एवं उसके वैयक्तिक सदस्यों के प्रति निर्मित औचित्य-विहीन निषेधात्मक अभिवृत्ति ही पूर्वाग्रह है।'' वास्तव में पूर्वाग्रह अन्य धर्म अथवा प्रजाति या जाति के सदस्यों के प्रति नकारात्मक रूप में अधूरे या बिना सही ज्ञान के जल्दी में लिया गया निर्णय है। अतः स्पष्ट है कि पूर्वाग्रह वह अतार्किक एवं संवेगात्मक मनोभाव है, जो एक समूह के लोगों को दूसरे समूह के लोगों के प्रति कुछ विशिष्ट अनुकूल या प्रतिकूल व्यवहार करने की प्रेरणा देता है।

1.4 पूर्वाग्रह की विशेषताएँ

यह स्पष्ट हो चुका है कि पूर्वाग्रह एक प्रकार का पूर्व निर्णय है। यह व्यक्ति को किसी समूह तथा सदस्यों के प्रति प्रतिकूल व्यवहार करने के लिए तत्पर करता है। इसमें विवेक व तर्क का अभाव होता है। इसका स्वरूप संवेगात्मक तथा पक्षपातपूर्ण होता है। पूर्वाग्रह की अनेक विशेषताएँ होती हैं, उनमें से कुछ प्रमुख निम्नवत् हैं—

1. पूर्वाग्रह सीख़े हुए होते हैं- पूर्वाग्रह जन्मजात नहीं होते बल्कि व्यक्ति इन्हें सीखता है। पूर्वाग्रहों का विकास बच्चों में तीसरे-चौथे वर्ष से ही प्रारम्भ हो जाता है। गुडमैन ने अपने अध्ययनों के आधार पर बताया है कि बच्चों में शिक्षा और अनुभव के आधार पर दूसरी जाति के लोगों और दूसरे राष्ट्र के प्रति मित्रता या शत्रुता की भावनाएँ विकसित होती हैं। बच्चे अपने परिवार, समाज या समुदाय के मानकों, मूल्यों, परम्पराओं तथा रीति-रिवाजों से प्रभावित होकर दूसरे समूह, वर्ग या समुदाय तथा उसके सदस्यों के प्रति विशेष पूर्वाग्रह सीख लेते हैं।
2. पूर्वाग्रह अतार्किक होते हैं- पूर्वाग्रह तथ्यों पर आधारित नहीं होते हैं, इसमें विवेक, तर्क एवं संगति का कोई स्थान नहीं होता है। यही कारण है कि जब पूर्वाग्रह से सम्बन्धित सत्य तथ्य व्यक्ति के सामने उपस्थित किये जाते हैं तब भी व्यक्ति इन सही तथ्यों को मानने को तैयार नहीं होता है।

3. पूर्वाग्रह मुख्यतः अचेतन होते हैं- मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि जिन व्यक्तियों में सबसे अधिक पूर्वाग्रह होते हैं वे यह नहीं जानते हैं कि वे सचमुच पूर्वाग्रह से ग्रसित हैं। इस अचेतन गुण के कारण ही अनेक अच्छे और दयालु व्यक्ति भी हरिजनों के प्रति पक्षपातपूर्ण व्यवहार करते हैं, और उनसे सामाजिक दूरी बनाये रखते हैं।
4. पूर्वाग्रह संवेगात्मक रंग से रँगे होते हैं- पूर्वाग्रह जब किसी व्यक्ति, जाति या समूह के प्रति अनुकूल होते हैं तब व्यक्ति दूसरे लोगों, जाति या समूहों के प्रति स्नेह और प्रेम सम्बन्धी व्यवहार की अभिव्यक्ति करता है। दूसरी ओर जब पूर्वाग्रह प्रतिकूल होता है तो व्यक्ति दूसरे लोगों, जाति और समूह के प्रति घृणा, विद्वेष आदि संवेग मुख्य रूप से दिखलाता है। उच्च जाति के लोगों का निम्न जाति के लोगों के प्रति और एक धर्म के लोगों का दूसरे धर्म के लोगों के प्रति व्यवहार प्रायः संवेगात्मक रंग से रंगा होता है। चैपलिन ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि पूर्वाग्रह में संवेगात्मक दृढ़ता पाई जाती है।
5. पूर्वाग्रह दोषपूर्ण एवं दृढ़ सामान्यीकरण पर आधारित होते हैं- पूर्वाग्रह के विकास में तर्क और विवेक का विशेष महत्व नहीं है। प्रायः व्यक्ति पूर्वाग्रहों को अपने परिवार या निकट सम्बन्धियों के अनुकरण के आधार पर सीखता है। इनको व्यक्ति अपने व्यवहार का अंग इसलिए बना लेता है क्योंकि उसके परिवार के लोग और निकट सम्बन्धी भी इसी प्रकार के पूर्वाग्रह रखते हैं। पूर्वाग्रहों का आधार इतना मजबूत होता है कि वह उसमें किसी भी परिवर्तन को स्वीकृति नहीं देता है।
6. पूर्वाग्रह सन्तोष प्रदान करते हैं- पूर्वाग्रह एक अर्थ में समूह विकार का द्योतक है फिर भी लोग इसे बनाये रखते हैं क्योंकि इसके माध्यम से उन्हें सन्तोष प्राप्त होता है। इन्हीं पूर्वाग्रहों के कारण हम प्रायः श्रेष्ठता की भावना का अनुभव करते हैं। कभी-कभी यह देखा गया है कि पूर्वाग्रहों के कारण हम हिंसा व शत्रुता का बहाना ढूँढ़ निकालते हैं।
7. सत्यता का अभाव- पूर्वाग्रह का प्रायः सत्यता से कोई सम्बन्ध नहीं होता है। चूँकि इनका निर्माण ही गलत सूचनाओं के आधार पर होता है इसलिए इनमें सत्यता का अभाव होना स्वाभाविक ही है। उदाहरण के लिए, सवर्णों द्वारा शूद्र या निम्न जाति के लोगों को अछूत व निम्न कोटि मानना इत्यादि ऐसी बाते हैं जिनके पीछे सत्यता नहीं दिखाई पड़ती है।
8. पूर्वाग्रह का स्वरूप कार्यात्मक होता है- पूर्वाग्रह केवल मानसिक स्तर पर ही व्यक्ति में नहीं पाये जाते हैं बल्कि व्यवहारिक स्तर पर भी व्यक्ति में पाये जाते हैं। इन्हीं पूर्वाग्रहों के कारण व्यक्ति दूसरे व्यक्तियों, जातियों, धर्म या समूहों के लोगों से विशेष प्रकार का व्यवहार करता है। इसके द्वारा दमित इच्छाओं की सन्तुष्टि होती है, आत्मसम्मान एवं प्रतिष्ठा के भाव को मजबूत करने में मदद मिलती है तथा कुण्ठा एवं आक्रमणकारी व्यवहारों को विद्वेषपूर्ण कार्यों द्वारा व्यक्त करने का मौका मिलता है।

1.5 पूर्वाग्रह के प्रकार

पूर्वाग्रह का स्वरूप सार्वभौमिक माना गया है क्योंकि यह विश्व के सभी देशों में पाया जाता है। विभिनन जातियों, सम्प्रदायों, धर्मों, वर्गों और यहाँ तक कि पुरुषों एवं महिलाओं में भी, एक दूसरे के प्रति पूर्वाग्रह देखने को मिलता है। इसका बड़ा व्यापक स्वरूप है। इसकी व्यापकता का अनुमान लगाने के लिए पूर्वाग्रह के कुछ प्रकारों का उल्लेख किया जा रहा है।

1. **प्रजातीय पूर्वाग्रह-** प्रजातीय पूर्वाग्रह उसे कहते हैं, जिसमें एक प्रजाति के सदस्य अपने को दूसरी प्रजाति की तुलना में श्रेष्ठ मानते हैं, और उसी आधार पर बाह्य प्रजाति के प्रति घृणा, अवहेलना तथा अनादर की भावना रखते हैं। अमेरिका में गोरे लोग नीग्रो को कम बुद्धि का व असभ्य समझते हैं। इसी प्रकार ब्राह्मण यह मानते हैं कि हरिजन अछूत व अपवित्र होते हैं। इन प्रजातीय पूर्वाग्रहों की गहराई में जाकर देखें तो हमें ज्ञात होगा कि इसमें सच्चाई कम है।
2. **यौन पूर्वाग्रह-** लिंग के आधार पर जो पूर्वाग्रह विकसित होते हैं उन्हें यौन पूर्वाग्रह कहते हैं। अनेक समाज मनोवैज्ञानिक अध्ययनों से इस तथ्य की पुष्टि हुई है कि महिलाओं की अपेक्षा पुरुषों को अधिक सक्षम, प्रभावशाली, महत्वाकांक्षी एवं विचारवान माना जाता है; इसके विपरीत महिलाओं को नम्य, हँसमुख, भावुक, कमजोर, दूसरे पर निर्भर रहने वाली एवं नेतृत्व गुणों से रहित समझा जाता है। इसी आधार पर उनके साथ व्यवहार किया जाता है। परन्तु प्रसन्नता की बात है कि आज महिलाएँ हर क्षेत्र में आगे बढ़ रही हैं और धीरे-धीरे महिलाओं के प्रति इस तरह के पूर्वाग्रहों में कमी आ रही है।
3. **जाति पूर्वाग्रह**- यह पूर्वाग्रह जाति व्यवस्था पर आधारित है। हमारे देश में अनेक जाति के लोग रहते हैं। एक जाति के लोग आपस में एक दूसरे को एक ही समूह का सदस्य मानते हैं, चाहे वे किसी भी क्षेत्र, नौकरी या व्यवसाय के हों। अपनी जाति के लोगों को श्रेष्ठ मानते हुए उनके प्रति सकारात्मक तथा दूसरी जाति के लोगों को तुच्छ व हेय समझते हुए उनके प्रति नकारात्मक अभिवृत्ति रखते हैं, और उनके प्रति बैर भाव उत्पन्न हो जाता है। यही बैर भाव जब अधिक बढ़ जाता है तो जातीय दंगे जन्म लेते हैं।
4. **धार्मिक पूर्वाग्रह-** धार्मिक विश्वासों के आधार पर विभिन्न धार्मिक समूहों में श्रेष्ठता या अधमता की भावना पैदा होती है, और उसी के आधार पर एक धार्मिक समूह दूसरे समूह के सदस्यों के प्रति घृणा, अवहेलना या अनादर के भाव प्रकट करता है। लोग अपने धर्म को अच्छा तथा उपयोगी मानते हैं एवं अन्य धर्मों को निम्नस्तरीय मानते हैं। उदाहरण के लिए हिन्दू धर्मावलम्बी इस्लाम तथा मुस्लिम धर्मावलम्बी हिन्दू धर्म में अनेक प्रकार के दोषों का उल्लेख करते हैं। इन पूर्वाग्रहों के कारण समाज में तनाव तथा संघर्ष की समस्या पैदा होती है।
5. **आयु पूर्वाग्रह-** अधिक आयु के लोग कम आयु के लोगों को अपरिपक्व, कम अनुभवी व जोशीला समझते हैं वहीं दूसरी ओर बूढ़े लोगों को निष्क्रिय, असामाजिक, जराग्रस्त समझा जाता है और ऐसा समझकर

वयोवृद्ध लोगों के साथ व्यवहार किया जाता है। वयोवृद्ध लोगों के प्रति दूसरे आयु के लोग नकारात्मक अभिवृत्ति का प्रदर्शन करते हैं।

6. **भाषाई पूर्वाग्रह-** अपने देश में अनेक प्रकार की भाषा बोलने वाले लोग रहते हैं। एक तरह की भाषा बोलने वाले लोग अपने को एक समूह का सदस्य समझते हैं दूसरे प्रकार की भाषा बोलने वाले लोगों को अपना नहीं समझते हैं, उन्हें अपरिचित व उनकी भाषा को अप्रिय एवं असंगत समझा जाता है। भाषा को लेकर भी तनाव व मनमुटाव उत्पन्न होता है। इस प्रकार का व्यवहार भाषा पूर्वाग्रह के कारण उत्पन्न होता है।
7. **राजनैतिक पूर्वाग्रह-** भारतवर्ष में अनेक राजनैतिक दल हैं, जो जिस राजनैतिक दल का सदस्य है, वह उस दल के आदर्श व सिद्धान्तों को ही सर्वोच्च स्थान देता है, और दूसरे दलों को भ्रष्टाचारी व हेय समझता है। राजनैतिक पूर्वाग्रह विशेष रूप में उस दल के सदस्यों से बहुत ही कटु होता है, जिसके हाथों में सत्ता होती है। ऐसे दल का सदस्य अपने स्वार्थों की रक्षा के लिए विरोधी दलों के सदस्यों के प्रति हर दृष्टि से पक्षपात करता है। इस प्रकार एक दूसरे के प्रति पूर्वाग्रह व्यवहार का आधार राजनैतिक होता है।
8. **साम्प्रदायिक पूर्वाग्रह-** इस प्रकार के पूर्वाग्रह का आधार समुदाय या सम्प्रदाय है। दो समुदायों के बीच पाये जाने वाले पूर्वाग्रह को साम्प्रदायिक पूर्वाग्रह कहते हैं। भारतीय समाज में हिन्दू समुदाय तथा मुस्लिम समुदाय के बीच इस प्रकार का पूर्वाग्रह देखा जा सकता है। एक दूसरे के प्रति न केवल नकारात्मक मनोवृत्ति रखते हैं बल्कि बैरभाव भी। समय-समय पर होने वाले हिन्दू-मुस्लिम साम्प्रदायिक दंगे इसी तरह के पूर्वाग्रह के ही परिणाम हैं।

1.6 सारांश

मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि यदि किसी व्यक्ति की अभिवृत्ति में अन्य जातीय समूहों या वर्गों के प्रति तार्किकता, न्याय और मानवता का अभाव है तो इसे पूर्वाग्रह कहा जाता है। पूर्वाग्रह एक प्रकार का पूर्व निर्णय है। यह एक ऐसा विश्वास या मत है जो तथ्यों पर आधारित नहीं होता है। हम बिना किसी तार्किक औचित्य के, पहले से ही इस प्रकार की धारणा बना लेते हैं कि उस बाह्य समूह के सदस्य हमसे हेय हैं, हमारे साथ उठने-बैठने, मेल-मिलाप रखने, वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करने या अन्य किसी प्रकार के निकट सामाजिक सम्बन्धों के दायरे में सम्मिलित होने के पूर्णतया अयोग्य हैं। पूर्वाग्रह एक ऐसी मनोवृत्ति है जो अधिकांश परिस्थितियों में नकारात्मक या प्रतिकूल होती है और कुछ परिस्थितियों में सकारात्मक या अनुकूल होती है। इसमें कठोरता अधिक तथा लचीलापन कम पाया जाता है। पूर्वाग्रह का प्रभाव व्यक्ति के प्रत्यक्षीकरण, चिन्तन, कल्पनाशीलता, भाव तथा व्यवहार पर पड़ता है। पूर्वाग्रह सीख़े जाते हैं जिनका वास्तविकता से कोई सम्बन्ध नहीं होता है, इसमें सत्यता व मानवता का अभाव होता है। पूर्वाग्रह का कारण हमारा व्यवहार एक विशिष्ट दिशा में अभिप्रेरित होता है। वास्तव में पूर्वाग्रह अन्य धर्म अथवा प्रजाति या जाति के सदस्यों के प्रति नकारात्मक रूप में अधूरे या बिना सही ज्ञान के

शीघ्रता में लिया गया निर्णय है। पूर्वाग्रह की विशेषता होती है कि वह विवेकहीन होता है, अर्जित होने के साथ ही संवेगात्मकता से रँगा होता है, इसका वास्तविकता से कोई सम्बन्ध नहीं होता है तथा यह दृढ़ एवं स्थिर सामान्यीकरण पर आधारित होता है। जातीय, यौन, आयु, भाषाई, साम्प्रदायिक, धार्मिक, क्षेत्रीय, राजनैतिक आदि कई प्रकार के पूर्वाग्रह होते हैं।

1.7 शब्दावली

- **पूर्वाग्रह:** एक प्रकार का पूर्व निर्णय है यह एक ऐसा विश्वास या मत है, जो तथ्यों पर आधारित नहीं होता है।
- **विभेदन:** अन्य समूहों के प्रति नकारात्मक भावनाएँ, विश्वास तथा व्यवहार प्रवृत्तियाँ विभिन्न नकारात्मक कार्यों द्वारा व्यक्त होती है। इन्हीं व्यक्त व्यवहारों और कार्यों को विभेदन कहते हैं।
- **रूढ़ियुक्तियाँ:** किसी भी व्यक्ति के सम्पूर्ण विचारों या उसकी मनोवृत्तियों के संयुक्त रूप को रुढ़ियुक्ति कहा गया है, जिसके आधार पर हम किसी व्यक्ति, वर्ग, धर्म, राष्ट्र या वस्तु के सम्बन्ध में एक दृढ़ व स्थायी चित्र अपने मस्तिष्क में अंकित करते हैं।
- **साम्प्रदायिकता:** अपने ही धार्मिक तथा जातीय समूह के प्रति एक तीव्र निष्ठा की भावना है।
- **अभिवृत्ति:** व्यक्ति के मन की एक विशिष्ट दशा होती है जिसके द्वारा वह समाज की विभिन्न परिस्थितियों, वस्तुओं, व्यक्तियों आदि के प्रति अपने विचार या मनोभाव को व्यक्त करता है।
- **आक्रामकता:** दूसरों या स्वयं को हानि पहुँचाने के लिए किया जाने वाला ध्वंसात्मक व्यवहार या व्यवहार करने की इच्छा।
- **प्रत्यक्षीकरण:** वे प्रक्रियाएँ जो संवेदी सूचनाओं को संगठित करती हैं।
- **व्यवहार:** कोई भी प्रकट क्रिया/प्रतिक्रिया जो व्यक्ति करता है तथा जिसका किसी प्रकार प्रेक्षण किया जा सकता हो।
- **अन्तःक्रिया:** व्यक्तियों के बीच आदान-प्रदान, बात-चीत।
- **अन्तःसमूह:** अपने ही समूह की सदस्यता।
- **मानक:** वह व्यवहार या प्रत्याशा है जो एक समूह के सभी सदस्यों द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। इन्हीं के आधार पर समूह के व्यक्तियों की भावनाओं और व्यवहार की उपयुक्तता का मूल्यांकन किया जाता है।
- **कुण्ठा:** किसी वांछित लक्ष्य पर पहुँचने के लिए व्यक्ति द्वारा किया गया व्यवहार जब बीच में ही अवरुद्ध हो जाता है, तो इससे उत्पन्न होने वाली मनोदशा को दर्शाता है।

1.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. पूर्वाग्रह सम्बन्धित होता है:

(क) व्यक्ति के साथ (ख) समूह के साथ

(ग) क तथा ख दोनों (घ) संस्कृति के साथ

2. पूर्वाग्रह मूलतः किस मूल प्रवृत्ति पर आधारित है?

(क) सुरक्षा मूल प्रवृत्ति (ख) घृणा मूल प्रवृत्ति

(ग) जीवन मूल प्रवृत्ति (घ) आक्रमण मूल प्रवृत्ति

3. पूर्वाग्रह की एक मुख्य विशेषता है:

(क) भेदीकरण (ख) स्थिराकृति

(ग) संज्ञानात्मक विसंगति (घ) संज्ञानात्मक जटिलता

4. पूर्वाग्रह सीख़े हुए होते हैं। सत्य/असत्य
5. पूर्वाग्रह अतार्किक होते हैं। सत्य/असत्य
6. पूर्वाग्रह चेतन होते हैं। सत्य/असत्य
7. पूर्वाग्रह में सत्यता होती है। सत्य/असत्य
8. पूर्वाग्रह का स्वरूप सार्वभौमिक है। सत्य/असत्य
9. पूर्वाग्रह का एक प्रकार आयु पूर्वाग्रह भी है। सत्य/असत्य
10. यौन पूर्वाग्रह भारतवर्ष में नहीं पाया जाता है। सत्य/असत्य

उत्तर: (1) ख (2) ख (3) क (4) सत्य (5) सत्य (6) असत्य

(7) असत्य (8) सत्य (9) सत्य (10) असत्य

1.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- सिंह, अरुण कुमार, (2006): समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
- मुहम्मद, सुलेमान, (2005): उच्चतर समाज मनोविज्ञान, मनोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
- श्रीवास्तव, डी0एन0 (दसवाँ संस्कारण): 'सामाजिक मनोविज्ञान' साहित्य प्रकाशन, आगरा।
- त्रिपाठी, लालबचन, (1998.99), 'आधुनिक समाजिक मनोविज्ञान', एच0पी0 भार्गव बुक हाउस, आगरा।
- मायर्स, डी0जी0, (1999), 'सोशल साइकोलॉजी', मैक्ग्रा-हिल कॉलेज, न्यूयार्क।
- बेरान एवं बायर्न, (2000), 'सोशल साइकोलॉजी', एलन एवं बेकन, टोरन्टो।

1.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पूर्वाग्रह को परिभाषित करें तथा इसकी विशेषताओं को स्पष्ट करें।
2. पूर्वागह के सम्प्रत्यय तथा स्वरूप की विवेचना करें।
3. पूर्वाग्रह के मुख्य प्रकारों का वर्णन करें।

4. पूर्वाग्रह के नकारात्मक प्रभाव पर प्रकाश डालें।
5. भारत में जाति पूर्वाग्रह एवं यौन पूर्वाग्रह पर एक लेख लिखें।

इकाई-2 पूर्वाग्रह के कारण, पूर्वाग्रह, विभेदन एवं रुढ़ियुक्तियों में भेद (Causes of Prejudice; Difference between Prejudice, Discrimination and Stereotype)

इकाई संरचना

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 पूर्वाग्रह के कारण
2.4 विभेदन
2.5 रुढ़ियुक्तियाँ
2.6 पूर्वाग्रह एवं विभेदन में भेद
2.7 पूर्वाग्रह एवं रुढ़ियुक्तियों में भेद
2.8 सारांश
2.9 शब्दावली
2.10 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न
2.11 सन्दर्भ ग्रंथ सूची
2.12 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

पूर्वाग्रह एक ऐसी मनोवृत्ति है जो व्यक्ति को किसी समूह या उसके सदस्यों के प्रति अनुकूल अथवा प्रतिकूल ढंग से सोचने, प्रत्यक्षीकरण करने, महसूस करने, तथा कार्य करने के लिए उन्मुख करती है। जैसा कि पहले हम जाने चुके हैं कि पूर्वाग्रह के कई प्रकार होते हैं। सभी व्यक्ति में सभी तरह के पूर्वाग्रह नहीं होते। किसी में यौन, जाति, उम्र तो किसी प्रजातीय व धार्मिक पूर्वाग्रह पाया जाता है। पूर्वाग्रह के निर्माण, विकास और संपोषण को अनेक कारक प्रभावित करते हैं। यह अपेक्षाकृत स्थायी या दीर्घकालिक प्रक्रम है जो व्यक्ति से अधिक समाज के स्तर पर सक्रिय रहता है। यह व्यक्तियों द्वारा अनुभव किये जाने वाले सामाजिक यथार्थ का एक अपरिहार्य अंग होता है। यहाँ यह विचार किया जायेगा कि पूर्वाग्रहों का विकास क्यों होता है? इसे कौन-कौन से कारक प्रभावित करते हैं?

2.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद, आप निम्नलिखित बातों के बारे में जान जायेंगे-

- पूर्वाग्रह के कारण
- विभेदन का अर्थ एवं स्वरूप

- रुढ़ियुक्तियों के बारे में
- पूर्वाग्रह और विभदन में भेद
- पूर्वाग्रह एवं रुढ़ियुक्तियों में भेद

2.3 पूर्वाग्रह के कारण

आलपोर्ट ने अपनी पुस्तक 'दी नेचर ऑफ प्रिज्यूडिस' में पूर्वाग्रह के कारणों को कुछ विशेष सिद्धान्तों एवं उपागमों के अन्तर्गत बताया है। व्यक्ति के स्तर पर ये कारक उसके अधिगम एवं अन्य प्रक्रमों पर निर्भर करते हैं। पूर्वाग्रह के कारकों में मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, परिस्थितिजन्य, संज्ञानात्मक आदि हैं। इन सभी कारकों में से कुछ प्रमुख कारकों का उल्लेख किया जा रहा है-

1. **सामाजिक अधिगम-** बच्चों में अपने माता-पिता, भाई-बहनों, अध्यापकों, पड़ोसियों के व्यवहार को अनुकरण करने की प्रवृत्ति पाई जाती है। समाजीकरण के इन माध्यमों से उन्हें जैसी शिक्षा मिलती है, उनमें वैसी ही मनोवृत्ति विकसित होती है। यही कारण है कि यदि माता-पिता किसी जाति या धर्म के प्रति पूर्वाग्रह से ग्रसित होते हैं तो उनके बच्चों में भी उसी तरह का पूर्वाग्रह विकसित हो जाता है। अधिगम व अनुकरण के आधार पर ही बच्चा दूसरी जाति के लोगों के व्यवहारों और मूल्यों आदि के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करता है। इसी आधार पर वह विभिन्न प्रकार के पूर्वाग्रहों को सीख लेता है। अनेक मनोवैज्ञानिक अध्ययनों से इस तथ्य की पुष्टि हुई है कि बच्चे अपने माता-पिता की पूर्वाग्रही मनोवृत्ति को काफी कम उम्र में सीख लेते हैं।
2. **शिक्षा-** पूर्वाग्रह को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण कारक शिक्षा है। शिक्षा औपचारिक एवं अनौपचारिक दोनों तरीकों से दी जाती है। औपचारिक शिक्षा विद्यालय में दी जाती है। औपचारिक शिक्षा अधिक होने से व्यक्तियों में किसी समस्या या अन्य व्यक्तियों के बारे में तथ्यपरक रूप से सोचने-समझने की शक्ति विकसित होती है। अनौपचारिक शिक्षा परिवार के सदस्यों द्वारा बच्चों को दी जाती है। माता-पिता बच्चों को इस बात की शिक्षा देते हैं कि उन्हें किस समूह के बच्चों के साथ खेलना चाहिए, कौन समूह ठीक है, और किस समूह से दूर रहना चाहिए। इस दिशा में हुए अध्ययनों में देखा गया है कि औपचारिक शिक्षा में जैसे-जैसे वृद्धि होती है; पूर्वाग्रहों की मात्रा उसी रूप में कम हो जाती है। आलपोर्ट के अध्ययन के परिणाम से स्पष्ट हुआ है कि शिक्षित व्यक्तियों में अशिक्षित व्यक्तियों की अपेक्षा पूर्वाग्रह की मात्रा कम होती है।
3. **जाति-** अपने देश में भिन्न-भिन्न जातियों के लोग रहते हैं। कुछ जातियाँ अपने को ऊँचा व श्रेष्ठ मानती हैं। ऊँची जाति के लोग निम्न जाति के लोगों के प्रति अधिक पूर्वाग्रही होते हैं। अनेक मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में पाया गया है कि उच्च जाति के हिन्दुओं में जाति पूर्वाग्रह निम्न जाति की हिन्दुओं की अपेक्षा अधिक होती है। यह भी पाया गया है कि ब्राह्मण, कायस्थ एवं राजपूतों में निम्न जाति के लोगों की अपेक्षा अपनी जातियों को ऊँचा समझने की प्रवृत्ति अधिक होती है। कुछ अध्ययन परिणाम यह भी बतलाते हैं कि ब्राह्मण जाति के

लोग अपने को अधिक श्रेष्ठ समझते हैं। इन अध्ययनों में यह भी देखा गया है कि भिन्न-भिन्न जाति के लोग अपनी जाति वाले लोगों के प्रति धनात्मक अभिवृत्ति रखते हैं और दूसरी जाति वाले लोगों के प्रति नकारात्मक अभिवृत्ति रखते हैं।

4. **धार्मिक सम्बन्धन-** भारतवर्ष में अनेक धर्म के मानने वाले लोग रहते हैं। किसी भी धर्म को मानने वाले व्यक्तियों में उस धर्म के प्रति अगाध प्रेम व विश्वास होता है, वे उसे श्रेष्ठ समझते हैं और दूसरे धर्म के लोगों को हेय दृष्टि से देखते हैं। अपने धर्म के प्रति विधेयात्मक अभिवृत्ति जबकि दूसरे धर्म के लोगों के प्रति नकारात्मक अभिवृत्ति रखते हैं, जो पूर्वाग्रह को जन्म देते हैं। अनेक मनोवैज्ञानिक अध्ययनों से यह तथ्य सामने आया है कि हिन्दुओं की अपेक्षा मुसलमानों में हिन्दुओं के प्रति अधिक पूर्वाग्रह होता है तथा परम्परागत, सामाजिक, राजनैतिक मनोवृत्तियाँ अधिक तीव्र होती हैं। धार्मिक विश्वास और अन्य विश्वास की कड़ी इतनी मजबूत हो जाती है कि उस विशेष धर्म के समक्ष अन्य धर्म उसे तुच्छ लगते हैं। दूसरे धर्म के प्रति पूर्वाग्रह जन्म ले लेता है।
5. **जनसंचार माध्यम-** पूर्वाग्रहों के निर्माण और विकास में सिनेमा, दूरदर्शन, समाचार-पत्र, पत्रिकाओं, रेडियो आदि की भूमिका महत्वपूर्ण है। इन माध्यमों के द्वारा हमें दूसरे व्यक्तियों एवं समूहों के बारे में तरह-तरह की सूचनाएँ मिलती हैं जिसके आधार पर पूर्वाग्रह निर्मित होता है। दूरदर्शन पर दिखाये जाने वाले कार्यक्रमों के बीच-बीच में अनेक प्रकार के विज्ञापन दिखाये जाते हैं जिससे प्रभावित होकर हम इन विज्ञापनों के अनुरूप व्यवहार करना सीखते हैं। एक अध्ययन में पाया गया कि जो महिलाएँ दूरदर्शन पर केवल ऐसे कार्यक्रम देखती थीं जिसमें महिलाओं की परम्परागत भूमिका पर अधिक बल डाला जाता था, उनमें महिलाओं के परम्परागत व्यवहारों के प्रति अधिक अनुकूल पूर्वाग्रह विकसित हो गया।
6. **व्यक्तित्व विशेषताएँ-** अनेक मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में यह देखा गया है कि व्यक्ति का जैसा व्यक्तित्व होता है वैसा ही उसमें पूर्वाग्रहों का निर्माण होता है। दृढ़ चिन्तन, दण्डात्मक प्रवृत्ति आदि गुण जिन लोगों में प्रधान होता है, उनमें उन व्यक्तियों की अपेक्षाकृत पूर्वाग्रह अधिक होता है जिनमें ऐसे शीलगुण कम होते हैं। इसी प्रकार जिन लोगों में मैत्री की भावना अधिक पाई जाती है उनमें पूर्वाग्रह उन व्यक्तियों से भिन्न होते हैं जिनमें मैत्री की भावना कम मात्रा में पाई जाती है।
7. **असुरक्षा और चिन्ता-** व्यक्ति में पूर्वाग्रह असुरक्षा की भावना तथा चिन्ता से विकसित होती है। जिस समाज के लोगों में जितनी ही अधिक असुरक्षा और चिन्ता की भावना पाई जाती है उतनी ही उनमें पूर्वाग्रहों के निर्माण और विकास की सम्भावना अधिक होती है। जिस व्यक्ति में अपनी नौकरी, व्यवसाय, सामाजिक स्तर आदि के बारे में असुरक्षा की भावना नहीं होती है, वह सदैव अन्य व्यक्तियों या समूहों के प्रति एक स्पष्ट एवं वस्तुनिष्ठ विचार विकसित करता है। फलस्वरूप उसमें पूर्वाग्रह जल्दी विकसित नहीं होता। इसी तरह जब व्यक्ति में चिन्ता का स्तर अधिक होता है तो उनमें पूर्वाग्रह की मात्रा भी बढ़ जाती है।

8. **शहरी-ग्रामीण क्षेत्र**- मनोवैज्ञानिकों ने अपने अध्ययन से यह स्पष्ट किया है कि ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले व्यक्तियों में पूर्वाग्रह तथा रुढ़िवाद की मात्रा शहरी क्षेत्रों में रहने वाले व्यक्तियों की पूर्वाग्रह एवं रुढ़िवाद की मात्रा से अधिक होती है। यह भी पाया गया है कि ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले व्यक्तियों की अपेक्षा शहरी क्षेत्रों में रहने वाले व्यक्तियों की मनोवृत्ति अधिक उदार होती है। परिणामस्वरूप इनमें पूर्वाग्रह कम होता है।

2.4 विभेदन

किसी अन्य समूह के प्रति नकारात्मक भावनाएँ, विश्वास तथा व्यवहार-प्रवृत्तियाँ विभिन्न नकारात्मक कार्यों द्वारा व्यक्त होती हैं। इन्हीं व्यक्त व्यवहार और कार्यों को पक्षपात कहते हैं। पूर्वाग्रह के वास्तविक कारणों के बारे में मतभेद हो सकता है परन्तु पूर्वाग्रह की परिणति के रूप में विभेदन स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। किसी जाति, प्रजाति अथवा अल्पसंख्यक समूह के प्रति समूह सदस्यता के कारण उत्पन्न गलत अथवा अनुचित अभिवृत्तियों पर आधारित व्यवहार को विभेदन कहते हैं। यह सम्भव है कि बिना किसी पूर्वाग्रह के भी विभेदन हो और बिना किसी विभेदन के भी पूर्वाग्रह हो। पूर्वाग्रह विभेदन के रूप में परिलक्षित होगा अथवा नहीं, यह पूर्वाग्रह की तीव्रता तथा सामाजिक बाधाओं पर निर्भर करता है। फेल्डमैन का कथन है कि, ''पूर्वाग्रह की व्यवहारात्मक अभिव्यक्ति विभेदन कहलाती है। विभेदन में किसी विशेष समूह में सदस्यता के कारण उस समूह के सदस्यों के साथ धनात्मक या ऋणात्मक ढंग से व्यवहार किया जाता है।'' व्यक्ति में पूर्वाग्रह होने पर भी वह हमेशा लक्ष्य समूह के प्रति विभेदन दिखलायेगा ही, यह कोई जरूरी नहीं है। ऐसा इसलिए होता है कि सामाजिक परिस्थितियाँ ही कुछ ऐसी होती हैं जो पूर्व ग्रसित व्यक्ति को खुलकर विभेदन की अनुमति नहीं देती। उदाहरण के लिए, एक उच्च जाति का जातीय पूर्वाग्रह से ग्रसित अधिकारी कार्यालय में एक निम्न जाति के कर्मचारी के प्रति किसी प्रकार का विभेद नहीं दिखला सकता है क्योंकि दोनों ही सरकारी नौकर हैं और कानून सामाजिक विभेद की आज्ञा नहीं देता है।

2.5 रुढ़ियुक्तियाँ

रुढ़ियुक्ति के अंग्रेजी प्रतिरूप Stereotype शब्द का उपयोग सर्वप्रथम वाल्टर लिपमैन ने सन् 1922 में किया। इस शब्द से लिपमैन का अभिप्राय उन विचारों तथा प्रवृत्तियों से था, जो मस्तिष्क में जागृत होने के बाद एक चित्र या प्रतिमा अंकित कर देती है। रुढ़ियुक्त का अर्थ वह धारणा है जो हमें गलत वर्गीकरण के लिए बाध्य करती है। यह वह शब्द या सम्बोधन है, जो संक्षेप में एक व्यक्ति या समूह के प्रति हमारे मनोभावों को व्यक्त करता है, और हमारे शब्दों में उस व्यक्ति या समूह की किसी विशिष्ट विशेषता को प्रकट करता है। किम्बल यंग के अनुसार, ''सबसे अच्छी परिभाषा इस रूप में की जा सकती है कि रुढ़ियुक्त एक मिथ्या, वर्गीकरण करने वाली अवधारणा है, जिसके प्रति रुचि या अरुचि, स्वीकृति या अस्वीकृति की तीव्र संवेगात्मक अनुभूति जुड़ी रहती है।''

रुढ़ियुक्तियाँ मिथ्या या अतार्किक युक्तियाँ होती है, जिनका प्रमुख आधार तीव्र संवेग या अनुभूति होता है। रुढ़ियुक्तियों के माध्यम से हम अपने विचारों या मनोभावों को एक क्रमबद्ध रूप में इस भाँति प्रस्तुत करते हैं कि किसी वस्तु, विषय, समूह या वर्ग के प्रति हमारी अपनी रुचि या अरुचि, स्वीकृति या अस्वीकृति व्यक्त हो जाती है। रुढ़ियुक्तियाँ अतार्किक होते हुए भी संवेगात्मक रूप से शक्तिशाली तथा सामाजिक दृष्टि से महत्वपूर्ण इस कारण होती है कि इनके अध्ययन से ही हम किसी वस्तु, विषय, व्यक्ति या समूह के प्रति लोगों के विचारों तथा मनोवृत्तियों का एक सहज अनुमान लगा सकते हैं। किसी भी समूह के प्रति पूर्वाग्रह प्रायः रुढ़ियुक्तियों द्वारा सही सिद्ध और दृढ़ किया जाता है। अनेक मनोवैज्ञानिकों ने स्वीकार किया है कि रुढ़ियुक्ति विचारों का एक ऐसा पुँज है जो ऐसी गलत अथवा अधूरी सूचना पर आधारित होता है जिसे अविवेचनात्मक रूप से पूरे समूह के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

इस प्रकार किसी समूह के सभी व्यक्तियों को एक चयनात्मक तथा अधूरी सूचना के आधार पर जो सर्वथा आधार रहित व असत्य होती है, एक ही वर्ग या श्रेणी में रखने की मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया का नाम रुढ़ियुक्ति है। जैसे 'पाकिस्तानी कट्टर होते हैं','अंग्रेज बुद्धिमान होते हैं','हिप्पी गन्दे होते हैं'आदि वर्ण या श्रेणियाँ रुढ़ियुक्तियाँ कहलाती है। सिकार्ड तथा बेकमैन के अनुसार यह व्यक्तियों का सामान्यतः अतिरंजित वर्गीकरण है। किसी भी धार्मिक, जातीय अथवा प्रजातीय समूह के सभी व्यक्ति कभी भी समान नहीं हो सकते। उनमें आवश्यक रूप से वैयक्तिक भिन्नता पाई जाती है। इसलिए किसी भी समूह के सभी सदस्यों को एक ही वर्ग में रखना सम्भव नहीं है। कभी-कभी रुढ़ियुक्तियों के कारण अन्य समूहों के बारे में गलत प्रत्याशित व्यवहार के कारण समूहों के आपसी सम्बन्ध बिगड़ जाते हैं और एक दूसरे के प्रति पूर्वाग्रह एवं पक्षपात जन्म लेते हैं और विकसित होते हैं।

2.6 पूर्वाग्रह एवं विभेदन में भेद

पूर्वाग्रह तथा विभेदन शब्दों का व्यवहार हम अक्सर करते हैं और प्रायः दोनों शब्दों का प्रयोग समान अर्थ में करते हैं। लेकिन यह सही नहीं है, दोनों दो भिन्न अर्थ वाले शब्द हैं। दोनों में निम्नलिखित अन्तर है-

1. पूर्वाग्रह एक तरह की अभिवृत्ति है, जबकि विभेदन पूर्वाग्रह को व्यक्त करने वाली क्रिया है। बेरान एवं बायर्न ने कहा है कि अपने से भिन्न किसी सामाजिक समूह के सदस्यों के प्रति व्यक्ति की नकारात्मक मनोवृत्ति को पूर्वाग्रह कहेंगे जबकि उसकी नकारात्मक क्रियाओं को विभेदन कहेंगे।
2. पूर्वाग्रह के तीन पक्ष हैं जिन्हें संज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक कहते हैं, जबकि विभेदन में केवल क्रियात्मक पक्ष ही प्रधान होता है। उदहारण के लिए एक ब्राह्मण हरिजनों के प्रति नकारात्मक तथा बैर पूर्ण मनोवृत्ति रखता है, यह पूर्वाग्रह है। इससे प्रभावित होकर वह हरिजनों को मन्दिर में जाने से रोकता है तथा धार्मिक व पवित्र पुस्तकों को पढ़ने पर पाबन्दी लगा देता है और इसका उल्लंघन करने पर शारीरिक दण्ड देता है, उसका यह व्यवहार विभेदन है।

3. पूर्वाग्रह का क्षेत्र अधिक व्यापक होता है। इसका सम्बन्ध तीन विमाओं अर्थात् संज्ञानात्मक, भावनात्मक एवं क्रियात्मक होता है। इसके विपरीत विभेदन का क्षेत्र सीमित होता है इसका सम्बन्ध केवल क्रियात्मक विमा से होता है।
4. विभेदन के लिए पूर्वाग्रह एक कारण है जबकि विभेदन स्वयं उसका परिणाम है।
5. पूर्वाग्रह के बिना विभेदन सम्भव नहीं है जबकि विभेदन के बिना भी पूर्वाग्रह सम्भव है। उदाहरण के लिए यदि किसी ब्राह्मण में हरिजनों के प्रति नकारात्मक तथा बैरपूर्ण मनोवृत्ति नहीं हो तो वह हरिजनों के साथ विभेदमूलक व्यवहार नहीं करेगा, दूसरी ओर विभेदमूलक व्यवहार नहीं करने पर भी उस ब्राह्मण में नकारात्मक मनोवृत्ति हो सकती है।

2.7 पूर्वाग्रह एवं रुढ़ियुक्तियों में भेद

पूर्वाग्रह एवं रुढ़ियुक्तियों को हम कभी-कभी समान समझ लेने की भूल कर बैठते हैं। वास्तव में इन दोनों में अन्तर है-

1. पूर्वाग्रह, मनोवृत्ति का एक विशेष प्रकार है। दूसरी ओर रुढ़ियुक्ति एक धारणा या प्रतिमा है, जिसके आधार पर अवास्तविक वर्गीकरण किया जाता है। नीग्रो के प्रति श्वेतों की नकारात्मक मनोवृत्ति पूर्वाग्रह है जबकि कुछ विशेष शीलगुण (जैसे रंग, रूप) के आधार पर नीग्रो तथा श्वेत वर्ग का विभाजन रुढ़ियुक्ति है।
2. पूर्वाग्रह की अपेक्षा रुढ़ियुक्ति में स्थिरता अधिक पाई जाती है। अतः रुढ़ियुक्ति की अपेक्षा पूर्वाग्रह में परिवर्तन की सम्भावना अधिक रहती है।
3. पूर्वाग्रह एक समूह के सदस्यों के अपरिपक्व या पक्षपातपूर्ण मत हैं दूसरी ओर रुढ़ियुक्ति गलत वर्गीकरण करने वाली धारणाएँ हैं।
4. पूर्वाग्रह अनुकूल या प्रतिकूल होते हैं, जबकि रुढ़ियुक्तियों में यह विशेषता नहीं पाई जाती है।
5. पूर्वाग्रह एक समूह के मानदण्डों के निष्कर्ष स्वरूप प्राप्त होते हैं, दूसरी ओर रुढ़ियुक्तियाँ निष्कर्ष स्वरूप प्राप्त नहीं होती है, यह निर्णय और प्रत्यक्षीकरण के उत्कृष्ट उदाहरण हैं।

2.8 सारांश

भारतवर्ष में रहने वाले लोग भिन्न-भिन्न जाति, धर्म, सम्प्रदाय के ही नहीं हैं बल्कि भिन्न-भिन्न भाषाओं को बोलने वाले भी हैं। लेकिन फिर भी सभी में सांस्कृतिक एकता है। इसके बावजूद भी हम विभिन्न जातियों, धर्मों व सम्प्रदायों के प्रति पूर्वाग्रह से ग्रसित हैं। जैसा कि आपको बताया जा चुका है कि पूर्वाग्रह के कई प्रकार होते हैं। इनके विकास के कारण भी अलग-अलग होते हैं। पूर्वाग्रह के कारणों का अध्ययन समाजशास्त्रियों, मानवशास्त्रियों, इतिहासविदों ने भी किया है। इनमें मुख्य रूप से सामाजिक कारक यथा सामाजिक शिक्षण, औपचारिक, धार्मिक विश्वास तथा अन्धविश्वास, सामाजिक-आर्थिक स्थिति, ग्रामीण-शहरी क्षेत्र, सामाजिक

परिवेश, सामाजिक श्रेणीकरण आदि, मनोवैज्ञानिक कारकों में कुण्ठा तथा आक्रमण, सामाजिक संज्ञान, व्यक्तित्व, इसके अलावा सांस्कृतिक, प्रचार, आघातजन्य अनुभव, विफलता एवं नैराश्य भी पूर्वाग्रह के कारण हैं।

पूर्वाग्रह के लक्ष्य समूह के सदस्यों के प्रति किया जाने वाला ऋणात्मक व्यवहार विभेदन है। पूर्वाग्रह के कारण व्यक्ति जिस समूह के प्रति पूर्वाग्रहग्रस्त होता है, उस समूह के सदस्य के साथ सामान्य बर्ताव नहीं करता है। उसे उन अधिकारों और लाभों से वंचित कर दिया जाता है जो अन्य समूह के सदस्य स्वाभाविक रूप से प्राप्त करते हैं। विभेदन और पूर्वाग्रह के बीच वही सम्बन्ध है जो व्यवहार और अभिवृत्ति के बीच होता है। पूर्वाग्रह की अभिवृत्ति के कारण कोई व्यक्ति विभेदन व्यवहार करेगा या नहीं? यदि करेगा तो कैसा करेगा? यह कई अन्य कारणों पर निर्भर करता है। पूर्वाग्रह एक तरह की मनोवृत्ति है और उसका क्रियात्मक प्रदर्शन विभेदन है।

किसी सामाजिक वर्ग के बारे में बना हुआ मानसिक चित्र ही रुढ़ियुक्तियाँ हैं। वास्तव में रुढ़ियुक्त एक धारणा है, जिसके आधार पर व्यक्तियों को एक निश्चित वर्ग में विभाजित कर दिया जाता है। उस वर्ग के कुछ निश्चित शीलगुण या विशेषताएँ निर्धारित कर दी जाती हैं, जिनके आधार पर उस वर्ग या उसके सदस्यों को पहचाना जाता है। रुढ़ियुक्तियों एवं पूर्वाग्रह में महत्वपूर्ण सम्बन्ध है। वास्तव में पूर्वाग्रहों को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण कारक रुढ़ियुक्तियाँ हैं। अनेक पूर्वाग्रह रुढ़ियुक्तियों के आधार पर बनते हैं। पूर्वाग्रह प्रतिकूल या अनुकूल होते हैं जबकि रुढ़ियुक्तियों में यह विशेषता नहीं पाई जाती है।

2.9 शब्दावली

- **सामाजिक यथार:** सामाजिक अर्थों से निर्मित हमारे द्वारा प्रत्याशित संसार जो प्रायः अन्य व्यक्तियों द्वारा प्राप्त सूचनाओं के आधार पर निर्मित होता है।
- **समाजीकरण:** वह प्रक्रिया जिसके द्वारा हम समाज का सदस्य बनना सीखते हैं।
- **सामाजिक दूरी:** किसी समाज में समूहों या व्यक्तियों के बीच अलगाव की मात्रा ।
- **मूल्य:** व्यक्ति या समूहों द्वारा माना जाने वाला विचार कि क्या जरूरी है, सही है, अच्छा है या बुरा।
- **अनुकरण:** दूसरों के व्यवहारों या कार्यों को जानबूझकर अपनाना।

2.10 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. रुढ़ियुक्त का तात्पर्य ऐसे समूह विश्वास से है-
   (क) जो सीधा परिवर्तनशील होता है।
   (ख) जो अत्यधिक दृढ़ होता है।
   (ग) जो समय बीतने के साथ क्रमशः बदलता है।
   (घ) जो स्वतः बदल जाता है।
2. रुढ़ियुक्त में -

(क) व्यक्तियों का अतिरंजित वर्गीकरण किया जाता है।

(ख) समूहों के बीच भिन्नताओं को अर्जित समझा जाता है।

(ग) विभिन्न समूहों के बीच भिन्नताओं को वंशागत समझा जाता है।

(घ) उपरोक्त सभी।

3. पूर्वाग्रह एक प्रकार है -

(क) मनोवृत्ति का (ख) मूल प्रवृत्ति का

(ग) संवेग का (घ) प्रेरणा का

4. पूर्वाग्रह का एक मुख्य कार्य है-

(क) स्वधारणा का निर्माण (ख) आत्मविश्वास का प्रोत्साहन

(ग) अहं प्रतिरक्षा (घ) इनमें से कोई नहीं

5. पूर्वाग्रह जन्मजात होते हैं। सत्य/असत्य

6. पूर्वाग्रह एक पक्षपातपूर्ण मत है। सत्य/असत्य

7. विभेदन पूर्वाग्रह की व्यवहारात्मक अभिव्यक्ति है। सत्य/असत्य

8. पूर्वाग्रह के कारण व्यक्ति विभेदन दिखायेगा ही। सत्य/असत्य

उत्तर : (1) ख (2) ग (3) क (4) ग (5) असत्य (6) सत्य (7) सत्य (8) असत्य

2.11 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

- श्रीवास्तव, डी0एन0, (दसवाँ संस्करण), : ‘सामाजिक मनोविज्ञान’, साहित्य प्रकाशन, आगरा।
- सिंह,अरुण कुमार,(2006):‘समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा’, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
- हस्नैन, एन0, (1994) : ‘नवीन सामाजिक मनोविज्ञान’, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
- त्रिपाठी, लालबचन, (1998.99) : ‘आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान’, एच0पी0 भार्गव बुक हाउस, आगरा।
- मायर्स, डी0जी0, (1999) : ‘सोशल साइकोलॉजी’, मैक्ग्रा हिल कॉलेज, न्यूयार्क।
- सीकार्ड बेकमैन, (1974) : ‘सोशल साइकोलॉजी’, मैक्ग्रा हिल इण्टरनेशनल बुक कम्पनी, टोकियो।

2.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पूर्वाग्रह तथा विभेदन में भेद बतलाइए।
2. पूर्वाग्रह के मुख्य कारणों का वर्णन कीजिए।
3. रुढ़ियुक्ति की परिभाषा दें तथा इसकी विशेषताओं का उल्लेख करें।
4. रुढ़ियुक्ति किसे कहते हैं?
5. रुढ़ियुक्ति तथा पूर्वाग्रह में अन्तर स्पष्ट करें।

इकाई-3 पूर्वाग्रह दूर करने की विधियाँ, भारत में सम्प्रदायिकता(Methods of reducing prejudice, Communalism in India)

इकाई संरचना

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 पूर्वाग्रह दूर करने की विधियाँ

3.4 भारत में सम्प्रदायिकता

3.5 सारांश

3.6 शब्दावली

3.7 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

3.8 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

पूर्वाग्रह एक ऐसी मनोवृत्ति है जिसका सामाजिक कुप्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। पूर्वाग्रह के कारण अन्तर-धार्मिक, जातीय व अन्तरवैयक्तिक संघर्ष देखने को मिलते हैं। इससे लोगों में भेदभाव, तनाव, साम्प्रदायिक दंगे आदि उत्पन्न होते हैं। पूर्वाग्रह को दूर व कम करने की विभिन्न विधियों का उल्लेख समाज मनोवैज्ञानिकों ने किया है। आपको भी इन विधियों से अवगत होना चाहिए ताकि हम इन्हें दूर कर सकें या कम कर सकें।

साम्प्रदायिकता अपने ही जातीय समूह के प्रति तीव्र निष्ठा की भावना है। साम्प्रदायिकता के कारण लोग अपने जातीय समूह को विशेष महत्व देते हैं। यह एक अन्तर-धार्मिक संघर्ष की स्थिति पैदा करता है जिसमें आपसी घृणा, पक्षपात, पूर्वाग्रह तथा सन्देह पाये जाते हैं जिसके कारण सामाजिक तनाव उत्पन्न होता है।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप इस योग्य होंगे कि:

- पूर्वाग्रह को दूर करने की विधियों को जान सकें,
- पूर्वाग्रह को कैसे कम किया जाय इसे जान सकें,
- साम्प्रदायिकता का अर्थ जान सकें, और
- भारत में साम्प्रदायिकता के बारे में जान सकें।

3.3 पूर्वाग्रह दूर करने की विधियाँ

पूर्वाग्रह समाज के अधिकांश लोगों के जीवन का एक बड़ा हिस्सा है। पूर्वाग्रह के कारण समाज में अनेक समस्याएँ पैदा होती हैं और व्यक्ति के सामाजिक चिन्तन का स्वरूप विकृत हो जाता है। समाज में तनाव व संघर्ष की स्थिति उत्पन्न होती है। समाज तथा व्यक्ति दोनों ही स्तरों पर पूर्वाग्रह मानव हितों को नुकसान पहुँचाता है। इसके प्रभाव के कारण अनावश्यक मनमुटाव, वैमनस्य और लड़ाई-झगड़े पैदा होते हैं। पूर्वाग्रहों के परिणामों को देखते हुए समाज मनोवैज्ञानिकों ने इसे दूर करने व कम करने के उपायों पर भी विचार किया है। यहाँ पर पूर्वाग्रह को दूर व कम करने की कुछ विधियों का उल्लेख किया जा रहा है।

1. **शिक्षा-** समाज मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि उचित शिक्षा प्रदान कर पूर्वाग्रह को कम किया जा सकता है। इनका मानना है कि औपचारिक शिक्षा जो स्कूल, मदरसा, कॉलेज आदि द्वारा दी जाती है, इनके शिक्षकों को चाहिए कि बच्चों को ऐसी शिक्षा न दें जिससे उनमें किसी प्रकार की पूर्वाग्रह की वृद्धि होती है। ऐसे पाठ्यक्रम का निर्माण करना चाहिए जिनको पढ़ने से बच्चों में अच्छा मानसिक स्वास्थ्य विकसित हों एवं किसी प्रकार का पूर्वाग्रह इनके मन में न विकसित हो। कुछ मनोवैज्ञानिकों ने अपने अध्ययन में पाया है कि शिक्षा का स्तर ऊँचा होने से व्यक्ति में पूर्वाग्रह की मात्रा कम हो जाती है क्योंकि शिक्षा से व्यक्ति में उदारता बढ़ती है। अनौपचारिक शिक्षा माता-पिता, परिवार के अन्य सदस्यों तथा पास-पड़ोस के लोगों द्वारा बच्चों को दी जाती है। इन लोगों को चाहिए कि बच्चों के सामने ऐसी बातें नहीं करें जिससे वे किसी समुदाय, जाति या वर्ग के लोगों के प्रति पूर्वाग्रही हो जायें।
2. **अन्तर समूह सम्पर्क-** सर्वप्रथम आलपोर्ट ने इस बात पर बल दिया कि पूर्वाग्रह से ग्रस्त व्यक्ति और लक्षित व्यक्ति अर्थात् जिस व्यक्ति के प्रति पूर्वाग्रह है, इन दोनों व्यक्तियों में उचित सम्पर्क कराया जाता है, एक दूसरे के निकट आते हैं, तो पूर्वाग्रही व्यक्ति को उनके बारे में समझने का अधिक अवसर मिलता है। परिणामस्वरूप लक्ष्य व्यक्ति के बारे में बहुत सारी गलतफहमियाँ अपने आप दूर हो जाती हैं और व्यक्ति में पूर्वाग्रह कम हो जाता है। एक अध्ययन से यह भी ज्ञात हुआ है कि अन्तर समूह सम्पर्क रखने वाले जब समान स्तर के होते हैं तब इस स्थिति में अन्तर समूह सम्पर्क का पूर्वाग्रह को कम करने में अधिक प्रभाव पड़ता है। जब भिन्न-भिन्न जातीय समूहों, धार्मिक समूहों के सदस्यों को आपस में प्रत्यक्ष रूप से मिलने-जुलने का तथा नजदीक से एक-दूसरे से बातचीत करने का मौका मिलता है तो वे जान पाते हैं कि वे एक-दूसरे को जितना भिन्न समझते थे, वास्तव में वे उतना भिन्न नहीं है। उनकी नकारात्मक मनोवृत्ति सकारात्मक बन जाती है या नकारात्मक मनोवृत्ति की प्रबलता घट जाती है। इस कारण एक दूसरे के प्रति आकर्षण बढ़ता है और पूर्वाग्रह दूर हो जाता है।
3. **विधान-** विधान या कानून के माध्यम से पूर्वाग्रह को दूर किया जा सकता है। विधान द्वारा सामाजिक संरचना में परिवर्तन लाने से पूर्वाग्रह को विकसित व सम्पोषित करने वाले परिवेश सम्बन्धी कारक कमजोर हो जाते

हैं या समाप्त हो जाते हैं जिससे पूर्वाग्रह दूर या कम हो जाता है। भारतवर्ष में हरिजनों से सम्बन्धित अनेक तरह के पूर्वाग्रह मौजूद थे जिनमें छुआछूत प्रमुख था। सरकार ने सामाजिक कानून बनाकर छुआछूत को गैर कानूनी घोषित किया, फलस्वरूप हरिजनों से छुआछूत सम्बन्धी पूर्वाग्रह अब करीब-करीब समाप्त हो गया है। इसी तरह जातीय पूर्वाग्रह को कम करने के लिए भारत सरकार ने अन्तरजातीय विवाह को कानूनी घोषित किया है इससे भी एक जाति का दूसरे जाति के प्रति पूर्वाग्रह कम हुआ है।

4. **प्रचार-** पूर्वाग्रहों को कम करने में प्रचार द्वारा वांछित परिणाम प्राप्त किया जा सकता है। रेडियो, फिल्म, दूरदर्शन, समाचार-पत्रों के माध्यम से किया गया प्रचार पूर्वाग्रह को कम करने में काफी सहायक हुआ है। मायर्स ने अपने अध्ययनों के आधार पर यह परिणाम प्राप्त किया है कि पूर्वाग्रह विरोधी प्रचार से पूर्वाग्रह 60 प्रतिशत तक कम हो जाते हैं।
5. **व्यक्तित्व परिवर्तन-** समाज मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व में परिवर्तन मनोचिकित्सा की विभिन्न विधियों एवं विरेचन द्वारा करके उनमें व्याप्त पूर्वाग्रह को कम करने पर जोर दिया है। अतः यदि व्यक्तित्व में परिवर्तन उत्पन्न किया जाय तो पूर्वाग्रहों में भी परिवर्तन हो सकता है। परन्तु यह विधि अधिक समय लेती है और व्यक्तित्व परिवर्तन कठिन भी है, इसलिए यह अपेक्षाकृत कम उपयोगी सिद्ध हो पाती है। व्यक्तित्व परिवर्तन के साथ-साथ परिस्थितियाँ भी परिवर्तित की जाय तो अधिक सहायता मिल सकती है।
6. **समूह सदस्यता में परिवर्तन-** पूर्वाग्रह के निर्माण में सामाजिक समूहों का सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है। अतः यदि किसी पूर्वाग्रसित व्यक्ति को उस समूह की सदस्यता मिल जाय जिसके प्रति वह पूर्वाग्रसित है तो उसके पूर्वाग्रह में कमी आयेगी, ऐसा इसलिए होगा क्योंकि वह समूह का अनुमोदन तथा प्रशंसा प्राप्त करने के लिए समूह के साथ तादात्मीकरण करेगा और अनुकूल विचार विकसित करेगा। वाटसन ने भी यह निष्कर्ष दिया है कि नवीन समूहों की सदस्यता ग्रहण करने पर उसके प्रति विचार परिवर्तित हो जाते हैं और पूर्वाग्रहों में कमी आती है। इसी प्रकार विभिन्न राजनैतिक दल एक दूसरे के प्रति पूर्वाग्रसित बातें करते हैं, परन्तु जब वे अपनी पार्टी छोड़कर किसी अन्य पार्टी में चले जाते हैं तो उस पार्टी के प्रति उनका भाव बदल जाता है।
7. **अलगाव विरोधी नीति-** भिन्न-भिन्न समूहों के बीच अलगाव नीति के कारण पूर्वाग्रह के विकास तथा सम्पोषण में सहायता मिलती है। अतः सरकारी अधिकारियों व समाज सुधारकों को चाहिए कि समूह अलगाव नीति का विरोध करें तथा समूह समाकलन नीति पर अमल करें। आज भी देखा जा रहा है कि हरिजनों, दलितों, शोषितों के लिए अलग आवासीय योजना चलाई जा रही है, जातीय छात्रावास बनाये जा रहे हैं। इसी प्रकार अलग-अलग जाति व धर्म के लोग अपनी आवासीय योजनाएँ चलाते हैं। अनेक शहरों व कस्बों में जाति और वर्ग के आधार पर अलग-अलग मुहल्ले व बस्तियाँ हैं। इस तरह के अलगाव का यदि समाज में विरोध किया जाये तो इससे भी पूर्वाग्रह को कम किया जा सकता है क्योंकि भिन्न-भिन्न जाति, धर्म और सम्प्रदाय के लोगों की साथ रहने की प्रवृत्ति जब बढ़ेगी तो पारस्परिक सम्पर्क के कारण उनमें पूर्वाग्रह कम होंगे।

8. **नागरिक संगठन-** पूर्वाग्रहों को दूर या कम करने में नागरिक संगठन या नागरिक समितियों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। इन नागरिक संगठनों में भिन्न-भिन्न जाति, वर्ग, धर्म व सम्प्रदाय के लोगों, वरिष्ठ व सम्मानित लोगों को रखा जाय जो आपस में भाई-चारा बढ़ाने और पूर्वाग्रहों को कम करने का कार्य करें तो इससे समाज में शान्ति स्थापित होगी और पूर्वाग्रह दूर होगा।

3.4 भारत में सम्प्रदायिकता

साम्प्रदायिकता वह संकीर्ण मनोवृत्ति है जो एक धर्म अथवा सम्प्रदाय के लोगों में अपने धार्मिक एवं राजनीतिक स्वार्थों की पूर्ति के लिए पाई जाती है तथा उसके परिणामस्वरूप विभिन्न धार्मिक समूहों में तनाव एवं संघर्ष पैदा होते हैं। साम्प्रदायिकता अपने ही जातीय समूह के प्रति, न कि सम्पूर्ण समाज के प्रति, तीव्र निष्ठा की भावना है। किसी विद्वान ने ठीक ही लिखा है कि अपने धार्मिक सम्प्रदाय से भिन्न अन्य सम्प्रदायों के प्रति उदासीनता, उपेक्षा, हेय दृष्टि, घृणा, विरोध और आक्रमण की वह भावना साम्प्रदायिकता है, जिसका आधार वह वास्तविक या काल्पनिक भय या आशंका है कि उक्त सम्प्रदाय हमारे अपने सम्प्रदाय और संस्कृति को नष्ट कर देने या हमें जान-माल की क्षति पहुँचाने के लिए कटिबद्ध है। वास्तव में साम्प्रदायिकता के अन्तर्गत वे सभी भावनाएँ व क्रियाकलाप आ जाते हैं जिनमें किसी धर्म अथवा भाषा के आधार पर किसी सम्प्रदाय विशेष के हितों पर बल दिया जाये। साम्प्रदायिकता के कारण व्यक्ति अपने सम्प्रदाय या जातीय एवं धार्मिक समूह को अधिक महत्व देता है और अन्य समाजों एवं राष्ट्रों के हितों की अवहेलना करता है।

भारत में जनसंख्या के आधार पर हिन्दू (82.63 प्रतिशत), मुसलमान (11.36 प्रतिशत), ईसाई (2.43 प्रतिशत), सिख (1.96 प्रतिशत), बौद्ध (0.71 प्रतिशत) तथा जैन (0.48 प्रतिशत) रहते हैं। आँकड़ों को देखने से लगता है कि पूरे राष्ट्र में बहुसंख्यक धार्मिक समूह के रूप में हिन्दू हैं। लेकिन सच्चाई यह है कि कुछ प्रान्तों में ये अल्संख्यक हैं, जैसे-जम्मू एवं कश्मीर में मुसलमान 64.19 प्रतिशत, नागालैण्ड एवं मिजोरम में ईसाई क्रमशः 80.19 प्रतिशत तथा 83.80 प्रतिशत तथा पंजाब में सिख 60.17 प्रतिशत हैं, जनसंख्या के आधार पर भारत में मुसलमान यद्यपि अल्पसंख्यक हैं फिर भी इनकी संख्या पाकिस्तान की तुलना में यहाँ अधिक है। हिन्दू कई सम्प्रदायों जैसे-आर्यसमाजी, सनातनी और वैष्णव में बँटे हुए हैं। इसी प्रकार मुसलमान शिया और सुन्नी में विभक्त हैं। हिन्दूओं और मुसलमानों के पारस्परिक सम्बन्ध एक लम्बे अन्तराल से तनावपूर्ण रहे हैं जबकि हिन्दुओं और सिखों ने एक-दूसरे को कुछ वर्षों विशेष कर 1984 से 1990 के बीच से सन्देह की दृष्टि से देखना शुरू किया। यहाँ हम मुख्यतः हिन्दू-मुसलमान और हिन्दू-सिख सम्बन्धों का विश्लेषण करेंगे।

1. हिन्दू-मुसलमान साम्प्रदायिकता- भारत में मुसलमानों के आक्रमण दसवीं शताब्दी में आरम्भ हो गये थे, परन्तु मोहम्मद गजनवी और मोहम्मद गोरी जैसे प्रारम्भिक मुसलमान विजेता धार्मिक आधिपत्य जमाने की अपेक्षा लूटमार में अधिक दिलचस्पी रखते थे। उस समय जब कुतुबुद्दीन दिल्ली का पहला सुल्तान बना तब इस्लाम ने भारत में पैर जमाये, इसके पश्चात् मुगलों ने अपने साम्राज्य तथा इस्लाम को काफी संगठित तथा

विकसित किया। मुगल शासकों द्वारा किये जा रहे कुछ कार्य जैसे मंदिरों को तोड़कर मस्जिद बनवाना, तथा हिन्दुओं को मुसलमान बनाने के लिए बाध्य करना आदि से हिन्दू और मुसलमानों के बीच साम्प्रदायिक झगड़े बढ़े। इसके बाद जब ईस्ट इण्डिया कम्पनी के माध्यम से अंग्रेजों ने भारत पर अपना आधिपत्य जमाया, तो उन्होंने प्रारम्भ में हिन्दुओं को संरक्षण देने की नीति अपनाई तथा मुसलमानों को भी खुश करने का भरसक प्रयत्न किया। 1857 में जब प्रथम स्वतंत्रता संग्राम प्रारम्भ हुआ तो हिन्दुओं एवं मुसलमानों ने कंधे से कंधा मिलाकर लड़ाई लड़ी। इस लड़ाई में उन्हें सफलता तो नहीं मिली परन्तु अंग्रेजों को यह समझ में आ गया कि इन दोनों के मिल जाने पर भारत में वे पैर नहीं जमा पायेंगे। अतः अंग्रेजों ने 'फूट डालो और राज करो' की नीति अपनाई जिसके परिणामस्वरूप हिन्दू एवं मुसलमानों के साम्प्रदायिक झगड़ों को प्रोत्साहन मिला। यद्यपि हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच पारस्परिक विरोध एक पुराना मामला है परन्तु भारत में हिन्दू-मुस्लिम साम्प्रदायिकता स्वतंत्रता संग्राम के दौरान अंग्रेजी शासन की विरासत है।

हम भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन से उपलब्ध तथ्यों पर विचार करें तो यह स्पष्ट होगा कि 1918 तथा 1922 के बीच जितने गम्भीर प्रयास हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए हुए, वे इन समुदायों एवं कांग्रेस के शीर्षस्थ नेताओं के वार्तालाप के रूप में हुए। इन नेताओं के बीच प्रारम्भ से ही एक अप्रत्यक्ष सहमति थी कि हिन्दू, मुसलमान एवं सिख ऐसे पृथक समुदाय हैं जिनके धार्मिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रथाओं में एकता न होकर केवल राजनीतिक एवं आर्थिक मामलों में ही एकता है। इस तरह हिन्दू-मुस्लिम साम्प्रदायिकता के बीज तो इसी अवधि में ही पड़ चुके थे। 1942 के बाद मुस्लिम लीग एक सशक्त राजनीतिक दल की तरह उभरी और उसके नेता एम0ए0 जिन्ना ने कांग्रेस को एक 'हिन्दू' संगठन कहा जिसका अनुमोदन अंग्रेजों ने इस आशय से किया कि वे मुसलमानों को हिन्दुओं के विरूद्ध भड़का सकने में सफल हो पायें। कांग्रेस के अन्दर भी मदनमोहन मालवीय, सरदार वल्लभ भाई पटेल एवं के0एम0 मुंशी जैसे कुछ नेताओं ने हिन्दू-समर्थक दृष्टिकोण अपनाया जिससे साम्प्रदायिक तत्वों का मनोबल ऊँचा हुआ। पाकिस्तान का नारा मुस्लिम लीग ने लाहौर में सर्वप्रथम 1940 में दिया। बाद में जब कांग्रेस नेताओं ने 1946 में विभाजन की स्वीकृति दे दी, तो उससे 1947 में लाखों की संख्या में हिन्दुओं, मुसलमानों और सिखों का रक्तपात हुआ। लगभग 2 लाख लोगों के मारे जाने का अनुमान है और लगभग 60 लाख मुसलमान और साढ़े चार लाख हिन्दू एवं सिख शारणार्थी हो गये। विभाजन के बाद भी कांग्रेस साम्प्रदायिकता पर काबू नहीं पा सकी। इसलिए यह कहा जा सकता है कि भारत में हिन्दू-मुस्लिम साम्प्रदायिकता के राजनीतिक-सामाजिक स्रोत थे और उनमें झगड़े के लिए केवल धर्म ही कारण नहीं था। आर्थिक स्वार्थ, सांस्कृतिक और सामाजिक रीति-रिवाज (जैसे त्यौहार, सामाजिक प्रथाएँ और जीवनशैलियाँ) भी महत्वपूर्ण कारक थे जिन्होंने दोनों समुदायों को और विभाजित किया।

आज भारत में मुसलमान दूसरा सबसे बड़ा धार्मिक समुदाय है और विश्व में दूसरे सबसे बड़े मुस्लिम अल्पसंख्यक हैं। लगभग 12 करोड़ मुसलमान हमारे देश के सभी भागों में फैले हुए हैं। जम्मू और कश्मीर, असम

और पश्चिम बंगाल जैसे कुछ राज्यों में हिन्दू जनसंख्या की तुलना में मुस्लिम अनुपात अधिक है। मुसलमान भी भाषा, संस्कृति और सामाजिक आर्थिक स्थितियों में इतने ही भिन्न हैं जितने कि हिन्दू। उत्तर प्रदेश के मुसलमानों और केरल के मुसलमानों में कोई समानता नहीं है। उनको मिलाने वाला कारक केवल धर्म है, यहाँ तक कि उनकी भाषा भी एक नहीं है। सूक्ष्म अवलोकन से यह स्पष्ट है कि 16 शहर जो हिन्दू-मुस्लिम दंगों के लिए अतिसंवेदनशील हैं वे हैं--उत्तर प्रदेश में मुरादाबाद, मेरठ, अलीगढ़, आगरा और वाराणसी; महाराष्ट्र में औरंगाबाद; गुजरात में अहमदाबाद, आन्ध्र प्रदेश में हैदराबाद, बिहार में जमशेदपुर और पटना; असम में सिल्चर और गौहाटी; पश्चिम बंगाल में कलकत्ता; मध्य प्रदेश में भोपाल; जम्मू और कश्मीर में श्रीनगर, और उड़ीसा में कटक। आधुनिक भारत में हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्ध किन-किन कारकों से प्रभावित होता है, एक मनोवैज्ञानिक ने स्पष्ट किया है कि हिन्दू एवं मुस्लिम की मनोवृत्ति एवं प्रत्यक्षण में काफी अन्तर है जो इन दोनों के आपसी सम्बन्ध को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है। 1992-93 के रामजन्मभूमि-बाबरी मस्जिद के फैसले ने साम्प्रदायिक सद्भाव के सन्तुलन को गड़बड़ा दिया है। आज मुसलमान अपनी सुरक्षा और बचाव के लिए अधिक चिन्तित हैं।

2. हिन्दू-सिख साम्प्रदायिकता- भारत की जनसंख्या में लगभग 2 प्रतिशत से कम (1.3 करोड़) सिखों की संख्या है। ये पूरे देश में दूर-दूर तक फैले हुए हैं। उनका सबसे बड़ा केन्द्रीयकरण पंजाब में है जहाँ वे बहुमत में हैं। इतिहास से यह तथ्य सामने आया है कि सिख धर्म का आरम्भ हिन्दू धर्म के सिद्धान्तों के विरुद्ध एक सुधार आन्दोलन के रूप में हुआ था। दसवें गुरु के बाद सिखों में गुरुओं की परम्परा समाप्त हो गई और ग्रन्थ साहब को सर्वाधिक आदर दिया जाने लगा। सिख आन्दोलन जो अस्सी के दशक में प्रारम्भ में हुआ। जब एक स्थानीय सम्पादक की हत्या कर दी गई, श्रीनगर की उड़ानों पर एक वायुयान का अपहरण हुआ और एक कल्पित राष्ट्र, खलिस्तान के लिए पासपोर्ट जारी किये गये, तब से यह आन्दोलन तेजी पकड़ने लगा। हत्याओं की संख्या बढ़ने लगी और सिखों का विरोध संगठित उग्रवादी एवं अधिक हिंसक हो गया। 1984 में जब अमृतसर के स्वर्ण मन्दिर में उग्रवादी सिखों द्वारा इकट्ठे किये गये हथियारों को जब्त करने और आतंकवादियों को निकालने के लिए पुलिस ने गुरुद्वारे में 'आपरेशन ब्लू स्टार' योजना के अन्तर्गत प्रवेश किया तो यह सिख बर्दाश्त नहीं कर पाये और अनेक सिख सरकार एवं कुछ हिन्दुओं के विरुद्ध हो गये। फिर 31 अक्टूबर 1984 को तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी की हत्या की गयी तो भारत के अनेक शहरों में हजारों सिखों की हत्या की गयी व उनके मकान एवं दुकान जलाये गये एवं सम्पत्ति लूट ली गयी। इससे सिखों में हिन्दुओं के प्रति आक्रोश उत्पन्न हो गया और कुछ आतंकवादी सिखों ने ट्रेन और बसों में यात्रा करने वाले हिन्दुओं को चुन-चुनकर मार डाला। हिन्दुओं और सिखों के बीच साम्प्रदायिक सद्भाव के लिए प्रयत्नशील हरचन्द सिंह लोगोंवाल की हत्या सन् 1985 में एक सिख हठधर्मी द्वारा की गयी। 1988 में जब अमृतसर के स्वर्ण मन्दिर में पुनः 'आपरेशन ब्लैक थन्डर' योजना द्वारा अनेक उग्रवादियों को दस दिन तक घेरे रहने के उपरान्त समर्पण करने के लिए मजबूर किया गया तब सिख उग्रवादियों ने पुनः अपना

आन्दोलन तीव्र किया तथा कई शहरों में बम विस्फोट किये। यहाँ तक कि कनाडा से भारत आने वाले एक जहाज को बम-विस्फोट द्वारा उड़ाकर सैकड़ों हिन्दुओं को मार डाला गया। बहुत से हिन्दू उनके इन आतंकवादी गतिविधियों से डरकर पंजाब छोड़कर अन्य राज्यों में बस गये।

पंजाब में आतंकवाद की समस्या अब समाप्त हो चुकी है। परिणामस्वरूप हिन्दू-सिख समुदाय के बीच उत्पन्न मनमुटाव, अविश्वास, वैमनस्य, नकारात्मक मनोवृत्ति में थोड़ी कमी आई है और दोनों समुदायों के बीच सम्बन्ध पहले जैसे सामान्य होने लगे हैं।

3.5 सारांश

पूर्वाग्रह सामाजिक रूप से परिभाषित समूह तथा उसके सदस्यों के प्रति एक निषेधात्मक अभिवृत्ति है। पूर्वाग्रह एवं विभेद के कारण अन्तर्वैयक्तिक संघर्ष तथा अन्तःसमूह संघर्ष उत्पन्न होते हैं। इससे लोगों में भेदभाव, तनाव, साम्प्रदायिक दंगे आदि उत्पन्न होते हैं। व्यक्ति तथा समाज दोनों ही स्तर पर पूर्वाग्रह के भयंकर परिणाम को देखते हुए समाज मनोवैज्ञानिकों ने पूर्वाग्रह को दूर करने हेतु अनेक तकनीकों का विकास किया है। इसके अन्तर्गत माता-पिता तथा अध्यापकों द्वारा समाजीकरण, शिक्षा, पूर्वाग्रहयुक्त व्यक्ति तथा लक्ष्य व्यक्ति के बीच सम्पर्क, कानून, व्यक्तित्व परिवर्तन, अलगाव विरोधी नीति, समूह सदस्यता में परिवर्तन, नागरिक संगठन आदि का उपयोग पूर्वाग्रह के निराकरण में किया गया है।

साम्प्रदायिकता का अर्थ है अपने सम्प्रदाय का हित चाहना और दूसरे सम्प्रदाय या सम्प्रदायों के हितों की उपेक्षा करना। साम्प्रदायिकता के अन्तर्गत वास्तव में वे सभी भावनाएँ व क्रियाकलाप आ जाते हैं जिनमें किसी धर्म अथवा भाषा के आधार पर किसी समुदाय विशेष के हितों पर बल दिया जाय और उन हितों के ऊपर भी प्राथमिकता दी जाये तथा उस समूह में पृथकता की भावना उत्पन्न की जाये या उसको प्रोत्साहन दिया जाये। भारत में साम्प्रदायिकता मुख्य रूप से अंग्रेजों की 'फूट डालो और शासन करो' नीति की ही एक उपज है। भारत में देश के विभाजन से उत्पन्न हिन्दू मुस्लिम सम्बन्ध सामाजिक तनाव तथा साम्प्रदायिकता का एक महत्वपूर्ण स्रोत रहा है।

3.6 शब्दावली

- **औपचारिक शिक्षा:** ऐसी शिक्षा जो विद्यालय या अन्य शिक्षण संस्थाओं द्वारा दी जाती है।
- **अनौपचारिक शिक्षा:** अनौपचारिक शिक्षा माता-पिता, परिवार के अन्य सदस्यों व पास-पड़ोस के लोगों द्वारा बच्चों को दी जाती है।
- **मानसिक स्वास्थ्य:** व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का पूर्ण रूप से अच्छी तरह तालमेल बिठाते हुए कार्य करते रहना।
- **तादात्मीकरण:** किसी व्यक्ति के साथ स्व को आत्मसात करके उसी के अनुरूप व्यवहार करने तथा उसके व्यक्तित्व के अनुरूप अपना भी व्यक्तित्व विकसित करने से है।

- **विरासत:** जो हमें अपने पूर्वजों से प्राप्त होती है।
- **प्रथा:** समाज से मान्यता प्राप्त, पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तान्तरित होने वाली सुव्यवस्थित दृढ़ जनरीतियाँ।
- **परम्परा:** उन सभी विचारों, आदतों और प्रथाओ का योग, जो व्यक्तियों के एक समुदाय का होता है, और एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होता रहता है।

3.7 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. पूर्वाग्रह का अर्थ है-
   (क) वह मनोवृत्ति जो युक्ति संगत न हो।
   (ख) वह व्यवहार जो किसी समूह के प्रति अनुचित हो।
   (ग) वह व्यवहार जो विभेदन पर आधारित हो।
   (घ) उपर्युक्त सभी।
2. व्यक्तिगत सम्पर्क द्वारा पूर्वाग्रह को कम करना तभी सम्भव होता है, जबकि:
   (क) परिचय क्षमता हो (ख) समान हैसियत हो
   (ग) सहकारी पुरस्कार हो (घ) उपर्युक्त सभी।
3. साम्प्रदायिकता की विशेषता नहीं है:
   (क) साम्प्रदायिकता एक व्यवस्था है।
   (ख) साम्प्रदायिकता एक विचाराधारा है।
   (ग) साम्प्रदायिकता एक विशेष धर्म के प्रति अन्धभक्ति है।
   (घ) साम्प्रदायिकता चरमवादी होती है।
4. साम्प्रदायिकता के परिणाम नहीं कहे जा सकते:
   (क) पारस्परिक विश्वास (ख) राष्ट्रीय एकता में बाधक
   (ग) राष्ट्रीय सुरक्षा में बाधक (घ) पारस्परिक तनाव
5. सम्प्रदायवाद के कारण हैं:
   (क) संकीर्णता (ख) राजनीति
   (ग) मतान्ध धार्मिक मूल्य (घ) उपर्युक्त सभी
6. पूर्वाग्रह को अन्तर समूह सम्पर्क द्वारा दूर किया जा सकता है। सत्य/असत्य
7. समूह सदस्यता में परिवर्तन करके पूर्वाग्रह को कम किया जा सकता है। सत्य/असत्य
8. साम्प्रदायिकता अपने ही जातीय समूह के प्रति तीव्र निष्ठा की भावना है। सत्य/असत्य
9. भारत में मुसलमानों की संख्या पाकिस्तान की तुलना में अधिक है। सत्य/असत्य

10. भारत में सिखों की जनसंख्या 2 प्रतिशत से अधिक है। सत्य/असत्य

उत्तर : (1) घ (2) घ (3) क (4) क (5) घ (6) सत्य

(7) सत्य (8) सत्य (9) सत्य (10) असत्य

3.8 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

- सिंह, अरुण कुमार, (2006) : 'समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा', मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
- त्रिपाठी, लालबचन, (1998-99) : 'आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान', एच0पी0 भार्गव बुक हाउस, आगरा।
- रामआहूजा, (2000) : 'सामाजिक समस्याएँ', रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।
- मिश्र, गिरीश्वर एवं जैन उदय, (1994) : 'समाज मनोविज्ञान के मूल आधार', मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
- मो0 सुलेमान एवं दिनेश कुमार (2010) : 'मनोविज्ञान और सामाजिक समस्याएँ', मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
- श्रीवास्तव, डी0एन0, (दसवाँ संस्करण) : 'सामाजिक मनोविज्ञान', साहित्य प्रकाशन, आगरा।

3.9 निबन्धात्मक प्रश्न

1. पूर्वाग्रह क्या है? इसे कैसे कम किया जा सकता है?
2. पूर्वाग्रह को दूर करने की विधियों का संक्षेप में वर्णन करें।
3. साम्प्रदायिकता का अर्थ स्पष्ट करें।
4. हिन्दू-मुस्लिम साम्प्रदायिकता के बारे में उल्लेख करें।
5. भारत में साम्प्रदायिकता पर एक संक्षिप्त निबन्ध लिखिए।

इकाई -4 संस्कृति का अर्थ, विशेषतायें एवम प्रकार (Meaning, Characteristics and Types of Culture)

इकाई संरचना

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 संस्कृति का आशय
4.4 संस्कृति की विशेषताएँ
4.5 संस्कृति के प्रकार
4.5.1 व्यक्त संस्कृति
4.5.2 अव्यक्त संस्कृति
4.5.3 भौतिक संस्कृति
4.5.4 अभौतिक संस्कृति
4.6 सारांश
4.7 शब्दावली
4.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न
4.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची
4.10 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

मनुष्य को सभी प्राणियों में श्रेष्ठ माना जाता है श्रेष्ठ इसलिए माना जाता है क्योंकि उसके पास अपनी एक संस्कृति है संस्कृति के अभाव में मानव एवं पशुओं में तुलना करना मुश्किल होगा संस्कृति मानव जीवन की एक धरोहर है जो पीढ़ी दर पीढ़ी एक दूसरे से हस्तान्तरित होती रहती है। इसलिए प्रत्येक समाज समूह एवं देश की अपनी संस्कृति होती है शिशु जिस समाज में पैदा होता है उस समाज की भाषा बोली रहन सहन हाव-भाव एवं व्यवहार से संस्कृति को सीखने लगता है अर्थात बच्चा वहीं करता है जो वह अपने आस-पास के वातावरण में देख रहा होता है विकास के साथ-साथ बच्चा भाषा बोली रहन-सहन मूल्य विश्वास आदि सभी कुछ सीखने लगता है जो उसके व्यक्तित्व के विकास का महत्त्वपूर्ण स्तम्भ होते हैं।

प्रत्येक समाज समूह एवं देश की एक अलग संस्कृति होती है उसका अपना ताना बाना होता है प्रत्येक समाज अपने लोगों को अपने मूल्य परम्परायें विश्वास, रूढियों कानून आदर्श सभी कुछ यानि प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से अपने व्यवहार के द्वारा शिशु को अपनी संस्कृति हस्तान्तरित करता है जैसे बच्चा बड़ा होता है परिवार व

अन्य लोगों से अर्न्तक्रिया करने लगता है व भाषा मूल्य आदर्श परम्परायें विश्वास रूढ़िया कानून नैतिकता आदि सभी कुछ सीखने लगता है वह बौद्धिक रूप से अन्य प्राणियों से उत्कृष्ठ है। उस संस्कृति का प्रभाव उसके व्यक्तित्व पर दिखाई देता है अगर हम यों कहें कि व्यक्ति का सामाजिक व्यवहार उसकी संस्कृति की देन है तो यह कहना गलत नहीं होगा व्यक्ति के व्यक्तित्व की संरचना व्यक्ति की अपनी सांस्कृतिक विशेषताओं द्वारा निर्धारित की जाती है अर्थात व्यक्तित्व एवं संस्कृति का घनिष्ठ सम्बन्ध है शायद इसलिए व्यक्तित्व को संस्कृति का आधार और व्यक्तित्व को संस्कृति का परिणाम कहा जाता है अतः किसी व्यक्ति के सामाजीकरण को समझने से पूर्व और व्यक्तित्व के सन्दर्भ में बताने से पूर्व उसके सांस्कृतिक परिवेश को समझना आवश्यक होगा।

4.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई में संस्कृति का अर्थ एवं उसकी विशेषताओं का वर्णन किया गया है तांकि विद्यार्थी संस्कृति के स्वरूप को जान सके।

- इकाई प्रथम में संस्कृति के अर्थ को बताया गया है तांकि विद्यार्थी संस्कृति क्या है ये जान सकें।
- संस्कृति की विभिन्न विशेषताएँ होती है इन विशेषताओं के द्वारा ही चारित्रिक निर्माण होता है अतः इन विशेषताओं की जानकारी दी गई है।
- विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने संस्कृति के प्रकार बताये उन प्रकारों का वर्णन करते हुए भौतिक एवं अभौतिक संस्कृति के अन्तर बताये गये हैं तांकि विद्यार्थियों का संस्कृति के संदर्भ में सम्प्रतम स्पष्ट हो सके।
- इकाई प्रथम में संस्कृति के सन्दर्भ में जानकारी दे रहे हैं कि संस्कृति क्या है, इसकी विशेषताएँ क्या हैं और इसको कितने प्रकार में बांटा जा सकता है। मुख्यतः इस इकाई का उद्देश्य है कि हम बालक एवं बालिकाओं को संस्कृति से अवगत करायें तांकि वो विभिन्न सांस्कृतिक विभिन्नताओं के बारे में जान सकें।
- इस इकाई में यह बताने की कोशिश की गई है कि सामाजीकरण के दौरान जब शिशु विकास के क्रम में होता है वह अपने वातावरण से ही भाषा बोली विश्वास परम्परायें आदि सब कुछ सीखता जाता है यह क्रिया प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष दोनों रूपों में होती है।
- जब व्यक्ति अपनी संस्कृतिक विरासतों को सीख जाता है तो वह व्यक्त व अव्यक्त तरीके से उसे अपनी अगली पीढ़ी को हस्तान्तरित कर देता है इसी कारण से एक समाज सदियों तक अपनी संस्कृति को बचाये रखता है।

4.3 संस्कृति का आशय

संस्कृति एक व्यापक एवं जटिल अवधारणा है जिसके अर्थ को विभिन्न प्रकार से स्पष्ट किया जाता रहा है शाब्दिक रूप से संस्कृति शब्द की उत्पत्ति ‘‘संस्कृत‘‘ शब्द से हुई है संस्कृत का अर्थ होता है ‘‘परिष्कृत‘‘इस प्रकार संस्कृति का सम्बन्ध उन सभी तत्वों की समग्रता से है जो समूह में व्यक्ति का परिष्कार कर सके।

मानवविज्ञानी लोगों के किसी समूह की सामाजिक राय को बताने के लिए संस्कृति शब्द करते है यह आदतों, अभिवृत्तियों एवं मूल्यों के न्यूनाधिक संगठित एवं दृढ़ ताने बताते है जो एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को मिलती है- इसका तात्पर्य यह है कि प्रत्येक मानव शिशु पर संस्कृति का प्रभाव ही नहीं पड़ता वरन वह उसको आत्मसात भी करता है और बदले में दूसरों को देता है सामान्यतः सामाजिक एवं सांस्कृतिक शब्दों का प्रयोग समानार्थक रूप में भी किया जाता है परन्तु यह गलत है क्योंकि समाज संस्कृति से पूर्व अवस्था है उदाहरणार्थ- संस्कृति को सामाजिक विरासत के रूप में देखा जाता है इसमें सन्देह नहीं कि सांस्कृतिक प्रतिमान सामाजिक अर्न्तक्रियाओं को सामाजिक अर्न्तक्रियायें नहीं कह सकते हैं किम्बल यंग ने कहा है कि ‘‘समाज संस्कृति से पहले होता है‘‘ पशुओं में घनिष्ठ सामाजिक सम्बन्ध होता है और उसमें द्वन्द एवं सहयोग तथा कुछ हद तक आयु भेद एवं लिंग भेद भी मापा जाता है।‘‘

संस्कृति के अन्तर्गत भौतिक वस्तुऐं तथा अभौतिक मान्यतायें विचार विश्वास मूल्य आदर्श तथा जीवन शैली आती है इसी कारण किसी संस्कृति विशेष के सदस्यों के सामाजिक व्यवहार में सामाजिक परिवर्तनों के बावजूद भी काफी हद तक समानता रहती है।

संस्कृति की परिभाषाएँ

- टायलर (E.B.Tylor) संस्कृति एक जटिल समग्रता है जिसके अन्तर्गत ज्ञाप विश्वास कला आचार कानून प्रथा तथा इसी प्रकार की उन सभी क्षमताओं एवं आदतों का समावेश होता है। जिन्हें मनुष्य समाज के सदस्य होने के नाते प्राप्त करता है।‘‘

”Culture is that complex which includes knowledge, belief, art morals, law, custom and any other capabitities and habits acquired by man as a member of society.”- E.B.Tylor

- क्रचफील्ड एवं बैलकी (1962) के अनुसार ‘‘ भौतिक तथा अभौतिक सभी व्यवस्थाओं का ऐसा प्रतिमान, जिसका सदस्यों की समस्याओं के पारस्परिक रूप में समाधान हेतु उपयोग होता रहता है संस्कृति कहा जाता है। इसमें व्यवहार (आचरण) निर्देशित करने सम्बन्धित सभी तरीकों तथा अव्यक्त, विश्वास, प्रतिमान मूल्य तथा आधार वाक्य ;च्तमउपेमेद्ध आदि सन्निहित होते हैं।
- लिण्डग्रेन (1971) के अनुसार संस्कृति का आशय मूल्यों विश्वासों मानकों, कौशलों तथा प्रतीकों की उन सभी व्यवस्थाओं में है जिनका विकास समाज द्वारा किया जाता है और जिन्हें सभी सदस्य अंगीकार भी करते है।‘‘

Culture consists of the systems of values, beliefs, norms, artifacts and symbols that have been developed by a society and are shared by its members.”--Lindgrain

- हर्सकोविट्स (Herskohits) के शब्दों में संस्कृति पर्यावरण का मानव निर्मित भाग है।

Culture is the man made part of environment" ---M.J. Herskohits

- केम्पर (Koseret. Al) (1983) के अनुसार संस्कृति को सरलतम ढंग से उभयनिष्ठ विचारों या प्रथाओं, विश्वासों तथा जीवन पद्दति को विशिष्ठता प्रदान करने वाले ज्ञान के सम्मुचय के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।''

Culture can be most simply difined as a set of shared ideas or the customs, belifes and the knowledge that characterizes a way of life." (Koseret. Al)

- लिंटन-संस्कृति को परिभाषित करते हुए लिखते हैं -'' संस्कृति धारणायें, प्राकृतिक व्यवहार के प्रतिमानों का कुल योग है जिसके सभी भागीदार होते हैं तथा जो हस्तान्तरित की जाती है।

Culture may be defined as the sum total of knowledge attitudes and natural behaviour palterems shered transitted by members of a particular society."

- ब्रिकरहाफ एवं हवाईट (1985) किसी समाज के सदस्यों द्वारा अपनाई जाने वाली सम्पूर्ण जीवन शैली को संस्कृति कहते हैं इसमें भौतिक वस्तुएं (उत्पादन) तथा साथ ही साथ चिन्तन भाव एवं कार्य करते के प्रतिमानित पुर्नवत्यात्मक तरीके भी सम्मिलित हैं।

" Culture is the total of life shared by member of society. It includes material products as well as patterned repetitive ways of thinking, feeling and acting. Brinckerhaff and white."

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है ''संस्कृति में किसी समाज या समाज के किसी भाग के लोगों का पारस्परिक व्यवहार, विश्वास आदतें रूढ़ियाँ, परम्परायें अभिवृत्तियाँ मूल्य एवं भौतिक वस्तुएँ होती है।''

संस्कृति में व्यवहार सम्बन्धित सभी मापदण्ड होते हैं इसी कारण संस्कृति को सामाजिक विरासत (Social Heritage) कहते हैं, अन्य कारणों की तरह संस्कृति भी यह संकेत देती है कि किसी परिस्थिति विशेष में कोई व्यक्ति क्या और कैसे व्यवहार करेगा। यह संस्कृति का ही प्रभाव है कि संस्कृति विशेष के लोगों में खानपान वेशभूषा भाषा आदि में समानता पाई जाती है जबकि दो भिन्न-भिन्न संस्कृतियों के लोगों में काफी विभिन्नता देखने को मिलती है (Robertsion 1981)|

4.4 संस्कृति की विशेषताएँ

संस्कृति को समझने व जानने के लिए प्रस्तुत इकाई में विभिन्न परिभाषाओं का प्रयोग किया जा चुका है, संस्कृति को ओर अधिक स्पष्टतः समझने के लिए हम उसकी विशेषताओं का वर्णन करने जा रहे हैं:

1. **संस्कृति मानव निर्मित है –**

संस्कृति मात्र मानव समाज में पाई जाती है सभी प्राणियों में मानव श्रेष्ठ माना जाता है-क्योंकि उसके पास एक विकसित मस्तिष्क, केन्द्रित की जा सकने वाली आँखें, हाथ, अंगूठे की स्थिति, गर्दन की रचना आदि उसे अन्य प्राणियों से भिन्न बनाती है।

मनुष्य के पास भाषा जैसा एक सशक्त माध्यम है वह भाषा, प्रतीकों एवं लोकज्ञान से अपने ज्ञान एवं संस्कृति को सम्प्रेषित करता है। चूकि एक विकसित मस्तिष्क का स्वामी है सो विभिन्न प्रकार के आविष्कारों से निरन्तर या सतत् आगे बढ़ता है और पीछे की खोजों ,विचारों विश्वासों परम्पराओं को संजोता जाता है इसलिए संस्कृति को मानव निर्मित माना गया है और मनुष्य की इन्हीं खूबियों के कारण ही उसे अन्य प्राणियों से सर्वश्रेष्ठ कहा गया है।

2. संस्कृति सीखी जाती है -

संस्कृति शिशु को अपने माता-पिता द्वारा वंशानुक्रम में प्राप्त नहीं होती , हमें वंशानुक्रम में मात्र शरीर प्राप्त होता है, संस्कृति एक सीखा हुआ व्यवहार प्रतिमान का योग है मानव अपनी संस्कृति के साथ पैदा नहीं होता वरन जिस समाज में रहता है उसकी संस्कृति धीरे-धीरे सामाजीकरण के द्वारा सीखता है।

हाबेल कहते हैं- ''संस्कृति सीखा हुआ व्यवहार है''

उदाहरण- अगर किसी भारतीय बच्चे को जन्म के समय ही अमेरीकावासियों को गोद दे दिया जाय तो देखेंगे कि वह अमेरिका की संस्कृति को सीखेगा क्योंकि उसका समाजीकरण उसी संस्कृति में होगा। इसलिए हम कह सकते हैं कि यह एक सीखा हुआ व्यवहार है।

सीखने की क्षमता मानव में ही नहीं पशुओं में भी होती है किन्तु उनके द्वारा सीखा व्यवहार संस्कृति नहीं बन जाता, पशु द्वारा सीखा व्यवहार मानव की तरह सामूहिक व्यवहार नहीं हैं अपितु केवल पशु का व्यक्तिगत व्यवहार है। सामूहिक व्यवहार विश्वास, मूल्य, रूढियों, परम्पराओं, जनरीतियों आदि को जन्म देते हैं जो मात्र मानव समाज में होता है। उदाहरणार्थ- पशु में अगर हम चिम्पाजी या बन्दरों का निरीक्षण करें तो पाते हैं कि उनकी वही स्थिति आज भी है जो सौ वर्ष पूर्व थी, जबकि मानव आज वह नहीं है जो दस वर्ष पूर्व था। नित्य नये ढंग से प्रकृति का विकास मानव ही कर सकता है और कर रहा है।

3. संस्कृति पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित होती है -

संस्कृति मात्र सीखी नहीं जाती वरन एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित की जाती है। ऐसा नहीं है कि पशुओं में सीखने की क्षमता नहीं है परन्तु उनके सीखे हुए व्यवहारों एवं अनुभवों का दूसरे पशु लाभ नहीं उठा सकते क्योंकि अपने विचारों एवं अनुभवों को दूसरों तक पहुँचाने की क्षमता उनमें नहीं होती। मानव के पास भाषा जैसा सशक्त माध्यम है इसलिए वह अपने विचारों एव अनुभवों को बड़ी सरलता से दूसरों तक पहुँचा देता है। उसके पास अपने पूर्वजों के ज्ञान का अर्जित भंण्डार है जिसमें वह स्वयं के अनुभव जोड़ते हुए आगे बढ़ता जाता है। उदाहरण- यदि एक पीढ़ी ने फोन का आविष्कार किया है तो दूसरी पीढ़ी को उसका पुनः आवष्किार

करने की आवश्यकता नहीं पड़ती। नई पीढ़ी उससे अपने ज्ञान से और सुगम और सरल बनाती जाती है। वर्तमान में हम देख रहे हैं कि फोन के प्राचीन रूप से निकलकर हम आधुनिक मोबाइल सैट तक पहुँच गये हैं इस प्रकार यह एक पीढ़ी का ज्ञान दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होता जाता है।

4. संस्कृति समाज की देन है -

कोई भी समाज, समूह या राष्ट्र अपने नागरिकों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कुछ नियम मूल्य या व्यवहार निर्धारित करता है। धीरे-धीरे यही मूल्य व नियम समाज के व्यवहार में दिखाई देने लगते हैं। शिशु के जन्म के समय से ही सामाजीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है वहीं से वह अपने समूह या समाज की संस्कृति को आत्मसात करने लगता है इसलिए कहा जाता है कि संस्कृति समाज की देन है।

किम्बल यंग ने कहा है कि ‘‘समाज संस्कृति से पहले होता है।‘‘ चूकि संस्कृति किसी व्यक्ति विशेष की देन नहीं होती वरन समाज की देन होती है उसका जन्म व विकास समाज के कारण ही है समाज के अभाव में संस्कृति की कल्पना करना भी व्यर्थ है संस्कृति सामूहिक आदतों व्यवहारों की उपज होती है वह किसी व्यक्ति विशेष की विशेषता को प्रकट नहीं करती वरन सम्पूर्ण समाज का प्रतिनिधित्व करती है।

5. संस्कृति में विशिष्टता का गुण होता है -

प्रत्येक समाज की भौगोलिक एवं सामाजिक परिस्थितियाँ दूसरे समाज से भिन्न होती हैं। व्यक्ति अपने सामाजिक एवं भौगोलिक परिस्थितियों को अपने अनुकूल बनाने के लिए आविष्कार करता है इसलिए कहा गया है कि संस्कृति पूर्णतया सामाजिक आविष्कार का परिणाम होता है। आविष्कार व्यक्ति की आवश्यकता के कारण होते हैं। चूंकि सामाजिक आवश्यकताऐं प्रत्येक समाज में भिन्न-भिन्न होती है इस कारण संस्कृति का रूप व स्वरूप भी हर समाज में अलग-अलग होता है। इन सांस्कृतिक विभिन्नताओं के कारण ही एक समाज के सदस्यों के व्यवहारों की विशेषताऐं दूसरे समाज के सदस्यों से अलग होती है इसलिए कहा जाता है संस्कृति में विशिष्टता का गुण पाया जाता है। उदाहरणार्थ पर्वतीय क्षेत्र में रहने वाले लोगों का खान-पान, रहन-सहन व गीत-संगीत वहाँ की सामाजिक व भौगोलिक परिस्थिति के अनुकूल होता है जबकि मैदानी क्षेत्रों में रहने वाले लोगों का खान-पान, रहन-सहन वहाँ की जलवायु व सामाजिकता पर निर्भर करती है। ये दोनों परिस्थितियाँ दोनों प्रकार के समाजों की संस्कृति में विशिष्टता का गुण पैदा कर देती है। जैसे -पर्वतीय क्षेत्र में धान रोपाई के समय महिलाओं द्वारा सामूहिक कार्य करने के लिए श्रमगीत (हुड़कीबौल) के द्वारा कार्य किया जाता है जो उनकी कार्यक्षमता को बढ़ाता है उनके तनावों को कम करता है और सामूहिक एकता का भाव दे जाता है और यह उनकी संस्कृति में विशिष्टता का गुण ले आती है जो अन्य समाजों से भिन्नता प्रकट करती है।

चित्र 1- वैशाखी पर भांगड़ा करते हुए लोग, जो पंजाबी संस्कृति का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं।

चित्र 2 - आदिवासी संस्कृति- दोनों चित्र दो संस्कृतियों की विशिष्ठता प्रदर्शित कर रहे हैं

6. समूह के लिए संस्कृति आदर्श होती है -

व्यक्ति जिस समूह में पैदा होता है उसमें उस संस्कृति का प्रभाव होता है और वह उसी के सांचे में ढल जाता है यह एक ऐसा ढांचा है जिसमें व्यक्ति बढ़ता और विकसित होता है। प्रत्येक समूह के सदस्यों की दृष्टि में उनकी संस्कृति सामाजिक व्यवहार का एक आदर्श मान है इस कारण वह अपने व्यवहार को उसी के अनुरूप ढालता

है। जब अपनी संस्कृति की तुलना अन्य संस्कृति से करने की आवश्यकता होती है तो अपनी संस्कृति को आदर्श रूप में प्रस्तुत करने का मनोभाव उस समाज के अधिकतर लोगों में पाया जाता है और अधिकांशतः समूह के लोगों की यह कोशिश रहती है कि वह अपनी संस्कृति के आदर्शता होने की बात करें। उदाहरणार्थ-यदि दो देशों की संस्कृति की बात करें तो प्रत्येक देश अपने देश के संस्कृति की सकारात्मक पहलुओं का गुणगान अधिक करने लगता है जैसे-भारतवासी को प्रायःभारतीसंस्कृति का गुणगान करते हुए देखा जा सकता है और पश्चिमी देश अपने संस्कृति का गुणगान करते हैं। यह मनोभाव प्रत्येक समाज के व्यक्ति में पाया जाता है क्योंकि जन्म के बाद वह उसी संस्कृति के सांचे में ढला होता है।

7. संस्कृति मानव आवश्यकताओं की पूर्ति करती है -

किसी संस्कृति की निरन्तरता इसी बात पर निर्भर होती है कि उसमें शारीरिक तथा सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति करने की क्षमता है या नहीं ? बाह्य रूप में एक संस्कृति की एक प्रथा विशेष हमारे लिए अर्थहीन ओर अनोखी प्रतीत हो सकती है परन्तु यदि सम्पूर्ण सांस्कृतिक ढाँचे के सन्दर्भ में उस प्रथा के कार्यों की हम सावधानी से विवेचना करें तो उसी प्रथा का वैज्ञानिक अर्थ स्पष्ट हो जायेगा। फिर वह एक अनोखी या बेतुकी प्रथा न रहकर सामाजिक तौर पर एक महत्त्वपूर्ण कार्य करने वाली प्रतीत होगी। इस प्रकार संस्कृति के अन्तर्गत प्रत्येक इकाई का एक विशिष्ट महत्त्व तथा कार्य होता है जो सम्पूर्ण सांस्कृतिक व्यवस्था की स्थिरता तथा निरन्तरता को बनाए रखने में सहायक होता है। प्रत्येक के बिना सम्पूर्ण का अस्तित्व असम्भव है औरसम्पूर्ण के बिना प्रत्येक अर्थहीन भी है। जिस प्रकार शरीर के प्रत्येक अंग का सम्पूर्ण शरीर को जीवित रखने में महत्त्वपूर्ण योगदान होता है, उसी प्रकार प्रथा या प्रत्येक संस्था का सम्पूर्ण सांस्कृतिक व्यवस्था की जीवनविधि को कायम रखने में महत्त्वपूर्ण योगदान रहता है।

8. संस्कृति में अनुकूलनने का गुण होता है -

संस्कृति की इस विशेषता या गुण के दो स्पष्ट पहलू हैं- पहला, संस्कृति जड़ और स्थिर नहीं होती, गतिशीलता उसकी एक उल्लेखनीय विशेषता है और दूसरा इस गतिशीलता या समय-समय पर संस्कृति में होने वाले परिवर्तनों के फलस्वरूप इसका अनुकूलन बाहरी शक्तियों से होता रहता है। इस प्रकार के अनुकूलन में संस्कृति का भौगोलिक पर्यावरण से अनुकूलन विशेष रूप से उल्लेखनीय और महत्त्वपूर्ण है। एक जंगल में रहने वाला समुदाय अपनी सांस्कृतिक व्यवस्था का अनुकूलन जंगल की परिस्थितियों से करता है। परन्तु इसका यह मतलब नहीं कि भौगोलिक पर्यावरण संस्कृति को निश्चित करता है, इसका तात्पर्य केवल इतना ही है कि भौगोलिक पर्यावरण सांस्कृतिक विकास की सीमाओं को निश्चित करता है, जिसके आगे एक निश्चित सांस्कृतिक स्तर के लोग नहीं जा सकते। संस्कृति का उददेश्य मानसिक तथा सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना होता है। अतः इन आवश्यकताओं के अनुसार संस्कृति का स्वरूप भी प्रभावित होता है औरइनमें होने वाले प्रत्येक महत्वपूर्ण परिवर्तन के साथ-साथ संस्कृति के ढाँचे तथा स्वरूप में भी परिवर्तन होता रहता है। प्रत्येक युग की माँग

अलग होती है, समय परिवर्तन के साथ-साथ अनेक पुरानी आवश्यकताऐं समाप्त हो जाती हैं इन दोनों अवस्थाओं के साथ ही अपना अनुकूलन कर सकने का गुण संस्कृति में होता है। अनेक मानवीय आवश्यकताओं तथा पर्यावरण सम्बन्धी व ऐतिहासिक परिस्थितियों या घटनाओं के कारण संस्कृति के ढाँचे में परिवर्तन होता रहता है और इन परिवर्तनों के कारण यह आवश्यक हो जाता है कि दूसरे अंग या इकाइयाँ भी अपना अनुकूलन परिवर्तित भागों या इकाइयों के अनुरूप करती रहें। चूकि अपनी विविध आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए मनुष्य संस्कृति या इसकी विभिन्न इकाइयों को काम में लाता है, इसीलिए मनुष्य को भी निरन्तर परिवर्तनशील इकाईयों के साथ अपना अनुकूलन करना पड़ता है। अतः स्पष्ट है कि संस्कृति के अपने स्वयं के ढाँचे के परिवर्तन कर सकते के गुण ने समस्त प्राणियों में मनुष्य को सर्वाधिक अनुकूलशील प्राणी बना दिया है।

9. संस्कृति मानव व्यक्त्वि के निर्माण में सहायक -

जन्म के समय शिशु मात्र जैविक प्राणी होता है बाहरी समाज में पदार्पण करते हीं उसका अपने समाज से परिचय होने लगता है वहीं से वह अपनी संस्कृति को आत्मसात करने लगता है। बच्चा जिस वातावरण में पलता है उसके व्यक्तित्व का निमार्ण उसी प्रकार होता है संस्कृति में प्रचलित धर्म, दर्शन, कला विज्ञान प्रथाऐं रीतिरिवाज आदि सभी का व्यक्ति के व्यक्तित्व पर स्पष्ट छाप होती है इसलिए एक संस्कृति में पले व्यक्ति का व्यक्तित्व दूसरी संस्कृति में पले व्यक्ति से भिन्न होता है।

उदाहरण-भारत में पले व्यक्ति का व्यक्तित्व चीन में पले व्यक्ति से भिन्न होता है क्योंकि दोंनों का पर्यावरण व संस्कृति भिन्न होती है।

10. संस्कृति में संगठन एवं सन्तुलन होता है –

संस्कृति के अन्तर्गत अनेक खण्ड एवं इकाईयाँ होती है जैसे-प्रथा, परंपरा, नियम भौतिक मानक आदि संस्कृति के इन खण्डों या इकाईयाँ में एक पारस्परिक सम्बन्ध तथा अन्तःनिर्भरता होती है सांस्कृतिक इकाईयां जिन्हें हम सांस्कृतिक तत्व कहते हैं इन इकाईयों के कारण संस्कृति में एक प्रकार का सन्तुलन एवं संगठन पाया जाता है। संस्कृति की प्रत्येक इकाई सांस्कृतिक ढंग से एक दूसरे से सम्बन्धित होती है हर इकाई की एक निश्चित अवधि तथा कार्य होता है इस सब के परिणामस्वरूप संस्कृति की विभिन्न इकाईयों में सन्तुलन एवं संगठन होता है इस प्रकार अगर संसकृति के किसी इकाई में थोड़ा परिवर्तन होता है । उसका प्रभार दूसरे भाग में कुछ न कुछ दिखाई देता है।

11. संस्कृति में परिवर्तन का गुण होता है –

प्रत्येक समाज की संस्कृति हमेशा एक सी नहीं रहती है उसमें समयानुसार कुछ-कुछ परिवर्तन भी दिखाई देते हैं अगर व्यक्ति दूसरे संस्कृति के व्यक्ति से मिलता है तो उसका उसमें कुछ न कुछ प्रभाव अवश्य पड़ता है।

वर्तमान समय वैश्वीकरण का युग है हम तकनीक में इतना अधिक बढ़ गये हैं कि पूरी दुनिया की खबरें व संस्कृति घर बैठे ही कम्प्यूटर एवं दूरदर्शन में देख सकते हैं और वहाँ की संस्कृति पर कुछ न कुछ प्रभाव प्रत्यक्ष व

अप्रत्यक्ष रूप से अवश्य पड़ता है। उदाहरण- भारत के शहरों में पाश्चात्य देशों का पहनावा तेजी से फैल रहा है जो हमारे गांवों तक को प्रभावित कर रहा है इस लिए हम कह सकते हैं कि संस्कृति में परिवर्तन का गुण भी होता है।

4.5 संस्कृति के प्रकार

क्रेच क्रेचफील्ड एवं बैलकी (1962) संस्कृति को दो भागों में विभक्त किया है।

4.5.1 व्यक्त संस्कृति –

किसी भी संस्कृति के वो भाग जिनका प्रत्यक्ष अवलोकन किया जाता है या जिन्हें व्यक्ति की विभिन्न प्रकार की अन्तःक्रियायें भूमिका निर्वाह तथा विशिष्ठ सामाजिक परिस्थितियों में किये गये व्यवहार सम्मिलित होते हैं व्यक्त संस्कृति कहलाती है।

4.5.2 अव्यक्त संस्कृति -

किसी भी संस्कृति के वो अवयव जिनकाप्रत्यक्ष अवलोकन सम्भव नहीं है उन्हें अव्यक्त संस्कृति कहा जाता है यथा -विचार,ज्ञान, जनश्रुति, अंधविश्वास मूल्य आदि इनका कोई भौतिक स्वरूप नहीं होता है पर इनका व्यक्ति के व्यवहार पर गहन प्रभाव पड़ता है इन्हीं व्यवहारों के कारण एक संस्कृति के व्यक्तियों में समानता दिखाई देती है वहीं समानता के कारण एक संस्कृति में विशिष्ठता का गुण उत्पन्न होता है।

पिडिंगटन तथा आर्गबन ने संस्कृति को दो भागों में विभक्त किया है -

4.5.3 भौतिक संस्कृति -

भौतिक संस्कृति में यंत्र उपकरण पुस्तकें भवन मशीनें आदि होते हैं जो संस्कृति के अंग होते हैं इस संस्कृति में मानव द्वारा निर्मित सभी मूर्त वस्तुओं को रखा गया है ‘‘जिन्हें हम देख सकते हैं और छू सकते हैं तथा इन्द्रियों द्वारा जिनका आभास कर सकते हैं।‘‘ भौतिकसंस्कृति कहलाती है भौतिक संस्कृति को गिनना सरल नहीं है,प्राचीन व आदिम समाजों की अपेक्षा जटिल व आधुनिक समाजों में भौतिक संस्कृति

की संख्या अधिक है अर्थात पुरानी पीढ़ी की अपेक्षा नई पीढ़ी में भौतिक संस्कृति की संख्या अधिक है।

भौतिक संस्कृति की विशेषतायें-

- भौतिक संस्कृति मूर्त होती है अर्थात उनको देखा जा सकता है जैसे मकान, फर्नीचर कम्प्यूटर आदि।
- भौतिक संस्कृति को मापा जा सकता है चूकि मूर्त होती है इसलिए इसे मापना आसान व सरल होता है। उपयोगिता एवं लाभ का मूल्यांकन करना सरल होता है।
- भौतिक संस्कृति की उपयोगिता एवं लाभ का मूल्यांकन करना सरल होता है।
- भौतिक संस्कृति में परिवर्तन शीघ्र होते हैं जैसे कम्प्यूटर में दिन प्रतिदिन कुछ न कुछ परिवर्तन होते जा रहे है। व्यक्ति की कोशिश रहती है कि वह ज्यादा से ज्यादा सुविधजनक हो।

- भौतिक संस्कृति का सम्बन्ध मुख्यतः हमारे बाहय जीवन से होता है जैसे मकान फोन फर्नीचर, कपड़े आदि, भौतिक वस्तुएं हमारे बाहरी जीवन को प्रभावित करती है।
- भौतिक संस्कृति बिना परिवर्तन के ही एक स्थान से दूसरे स्थान पर ग्रहण कर ली जाती है जैसे, अमेरिका के पैन, फर्नीचर, वेशभूषा हम बिना परिवर्तन के ग्रहण कर लेते हैं।

4.5.4 अभौतिक संस्कृति -

अभौतिक संस्कृति के अन्तर्गत उन सभी सामाजिक तथ्यों को सम्मिलित किया जाता है जो अमूर्त है जिनका कोई माप तौल रंग आकर नहीं होता है। इन्द्रियों द्वारा जिनका स्पर्श नहीं होता है वरन जिन्हें हम केवल महसूस कर सकते हैं।''

अभौतिक संस्कृति में हम सामाजिक विरासत से प्राप्त विचार, विश्वास, मानदण्ड,व्यवहार, प्रथा, रीतिरिवाज, मनोवृत्तियाँ, साहित्य, ज्ञान, कला, भाषा, नैतिकता आदि को सम्मिलित करते हैं। अभौतिक संस्कृति सामाजीकरण व सीखने की प्रक्रिया द्वारा पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित होती है।

अभौतिक संस्कृति की विशेषताऐं-

- अभौतिक संस्कृति अमूर्त होती है अर्थात विचार, विश्वास, धर्म, भाषा, नैतिकता अभिवृत्तियों का कोई मूर्त रूप नहीं होता है ये मात्र महसूस की जाती हैं।
- अमूर्त होने के कारण अभौतिक संस्कृति को मापा नहीं जा सकता हम किसी के विचारों एवं मनोवृत्तियों को माप नहीं सकते हैं।
- अभौतिक संस्कृति की उपयोगिता एवं लाभ का मूल्यांकन भौतिक संस्कृति की तरह नहीं किया जा सकता ऐसा नहीं है कि अभौतिक संस्कृति का लाभ नहीं होता किसी के विचार से प्रभावित होकर समाज बड़े-बड़े कार्य कर देता है पर उसका मूल्यांकन किसी वस्तु की तरह प्रकट करना असम्भव है।
- अभौतिक संस्कृति में परिवर्तन बहुत कम एवं धीमी गति से होते हैं व्यक्ति जिस संस्कृति में पला- बढ़ा होता है उस संस्कृति से सम्बन्धित विचार, विष्वास, अभिवृत्तियाँ धर्म आदि में परिवर्तन करना मुश्किल कार्य है यह परिवर्तन अगर होते भी हैं तो बहुत धीमी गति से और अत्यन्त कम होते हैं।
- सांस्कृतिक प्रचार-प्रसार के दौरान अभौतिक संस्कृति के तत्व को उसी रूप में ग्रहण नहीं किया जाता है जिस रूप में उसका प्रसार होता है बल्कि उसमें थोड़ा परिवर्तन आ जाता है।
- अभौतिक संस्कृति का सम्बन्ध मानव के आन्तरिक जीवन से होता है।

भौतिक एवं अभौतिक संस्कृति की विशेषताओं को स्पष्टतः समझने के लिए भौतिक एवं अभौतिक संस्कृति के अन्तर को समझना आवश्यक है। प्रस्तुत इकाई में हम इन अन्तरों का एक संक्षिप्त व्यौरा प्रस्तुत कर रहे हैं।

❖ भौतिक एवं अभौतिक संस्कृति में अन्तर :

भौतिक संस्कृति	अभौतिक संस्कृति
1. भौतिक संस्कृति मूर्त होती है। 2. भौतिक संस्कृति की माप करना आसान व सरल है। 3. भौतिक संस्कृति की उपयोगिता एवं लाभ का मूल्यांकन सरल होता है। 4. भौतिक संस्कृति में परिवर्तन अत्यधिक तीव्र गति से होते हैं। जैसे पिछले कुछ वर्षो में या दो दशकों में भौतिक अविष्कार तेजी से हुए हैं बहुत सी नई मशीन एवं तकनीक आ गई है। 5. भौतिक संस्कृति सरल होती है। 6. भौतिक संस्कृति का सम्बन्ध व्यक्ति के बाहय जीवन से होता है जैसे घर, फर्नीचर गाड़ी उसके बाह्य जीवन को प्रभावित करता है। 7. दूसरे समाज या संस्कृति को भौतिक वस्तुओं को व्यक्ति शीघ्र ग्रहण कर लेता है और जैसे-उसे रूप में करता है जिस रूप में वह आती है जैसे अमेरिका का पेन जापान की तकनीक आदि।	1. अभौतिक संस्कृति अमूर्त होती है। 2. अभौतिक संस्कृति की मापा नहीं जा सकता है। 3. अभौतिक संस्कृति की उपयोगिता एवं लाभ का मूल्यांकन करना कठिन होता है। 4. अभौतिक संस्कृति में परिवर्तन बहुत ही कम एवं धीमी गति से होते हैं। जैसे व्यक्ति के विचारों अभिवृत्तियों प्रभावों जनरीतियों में बहुत कम या धीमे-धीमे परिवर्तन होता है। 5. अभौतिक संस्कृति कठिन होती है। 6. अभौतिक संस्कृति का सम्बन्ध उसके आन्तरिक जीवन से होता है। जैसे व्यक्ति के विचार चिन्तन, मनोवृत्तियाँ आदि, उसे आन्तरिक रूप से प्रभावित करती है। 7. भिन्न समाज या संस्कृति के विचारों अभिवृत्तियों, धर्म भाषा को अपनाना अर्थात दूसरी संस्कृति के अभौतिक वस्तुओं को ग्रहण नहीं करती है अगर किसी कारणवश ग्रहण भी करती है तो उसमें बहुत हद तक परिवर्तन कर देती है।

4.6 सारांश

उपर्युक्त इकाई से यह स्पष्ट है कि संस्कृति सामाजिक विरासत के रूप में जानी जाती है संस्कृति व्यक्ति के ज्ञान, विश्वास, अभिवृत्तियाँ व्यवहार भाषा खान-पान रीतियों धर्म आदि सभी भौतिक व अभौतिक स्थितियों में पाई जाती है व्यक्ति अपने संस्कृति को प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित करता है। चूंकि मानव एक विकसित मस्तिष्क वाला प्राणी है जो अपने पूर्व पीढ़ी से मिले ज्ञान में नये ज्ञान का मिश्रण कर

वह निरन्तर आगे बढ़ते जाता है। व्यक्ति जिस समूह में पैदा होता है उस समूह की संस्कृति के सॉचे में आ जाता है संसकृति के इसी ढॉचे में व्यक्ति बढ़ता व विकसित होता है इसलिए हम कह सकते हैं कि ''संस्कृति में किसी समाज/समूह एवं राष्ट्र के लोगों का पारस्परिक व्यवहार उनके विश्वास, नियम, अभिवृत्तियाँ, कानून, धर्म भाषा आदि भौतिक व अभौतिक वस्तुएं होती है।''

4.7 शब्दावली

- **संस्कृति:** संस्कृति में किसी समाज या समाज के किसी भाग के लोगों का पारस्परिक व्यवहार, विश्वास आदतें रूढ़ियाँ, परम्परायें अभिवृत्तियाँ मूल्य एवं भौतिक वस्तुएँ होती है।

4.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. संस्कृति जीवन का निर्वाहन करती है। (सत्य/ असत्य)
2. घर फर्नीचर गाड़ी आदि उदाहरण है-
   (अ) भौतिक संस्कृति का (ब) अभौतिक संस्कृति का
3. संस्कृति में विशिष्ठता का गुण पाया जाता है। (सत्य/ असत्य)
4. संस्कृति समाज की देन है। (सत्य/ असत्य)
5. अमूर्त संस्कृति को कहते हैं
   (अ) भौतिक संस्कृति (ब) अभौतिक संस्कृति
6. भूमिका निर्वाह एक उदाहरण है
   अ) व्यक्त संस्कृति का (ब) अव्यक्त संस्कृति का

उत्तर: 1- सत्य 2- (अ) 3- सत्य 4- सत्य 5-(ब) 6- (अ)

4.9 संदर्भ ग्रन्थ सूची

- सिंह डा0आर0एन- आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान, रीडर मनोविज्ञान विभाग, डी0डी0 कालेज, जौनपुर, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।
- अग्रवाल डा0 जी0के0/पाण्डेय डा0 एस0एस0- सामाजिक मनोविज्ञान साहित्य भवन, पब्लिकेशन एवं डिस्ट्रीव्यूटर।
- मुखर्जी डा; रवीन्द्र नाथ अग्रवाल डा0 भरत---यूनीफाईट समाजशास्त्र, विवके प्रकाशन, जवाहर नगर, दिल्ली।
- गुप्ता एम0एल/शर्मा डी0डी0- समाजशास्त्र साहित्य भवन पब्लिकेशन।
- कुप्पुस्वामी बी- समाज मनोविज्ञान एक परिचय, हरियाणा, साहित्य अकादमी, चण्डीगढ़।

- डा0 सिंह ए0के- समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा, मोतीलाल बनारसी दास बंग्लो रोड दिल्ली द्वारा प्रकाशित।
- डा0 श्रीवास्तव डी0एन0- समाजिक मनोविज्ञान साहित्य प्रकाशन आगरा।

4.10 निबन्धात्मक प्रश्न

1. संस्कृति से आप क्या समझते हैं ? संस्कृति की विशेषता स्पष्ट कीजिये।
2. एक संस्कृति दूसरी संस्कृति से भिन्न होती है स्पष्ट कीजिए।
3. संस्कृति क्या है ? उसके कितने प्रकार है उनमें अन्तर स्पष्ट कीजिए।
4. टिप्पणी लिखिये- (अ) संस्कृति का जीवन पर प्रभाव
   (ब) भौतिक एवं अभौतिक संस्कृति में अन्तर

इकाई-5 संस्कृति एवं व्यक्तित्व में सम्बन्ध, व्यक्तित्व विकास पर संस्कृति का प्रभाव (Relationship between Culture and Personality, Effects of culture on Personality Development)

इकाई संरचना

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 व्यक्तित्व का आशय
5.4 व्यक्तित्व की परिभाषाएँ
5.5 व्यक्तित्व के प्रकार
5.6 व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले कारक
5.7 संस्कृति एवं व्यक्तित्व में सम्बन्ध
5.8 व्यक्तित्व विकास पर संस्कृति का प्रभाव
5.9 सारांश
5.10 शब्दावली
5.11 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न
5.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
5.13 निबंधात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

संस्कृति एवं व्यक्तित्व एक दूसरे के पूरक हैं दोंनो का एक दूसरे के बिना अस्तित्व नहीं हो सकता, शिशु के जन्म के साथ ही वह एक सामाजिक प्राणी बनने लगता है, परिवार व समाज के नियम आचार-व्यवहार सभी कुछ वह सीखने लगता है यहीं से संस्कृति उसे प्रभावित करने लगती है बच्चा जिस समूह या समाज में पलता या विकसित होता है उसी समाज या समूह की संस्कृति को आत्मसात् करने लगता है।

जन्म के समय शिशु मात्र एक जैविक प्राणी होता है उसके पास एक शारीरिक ढॉचा होता है धीरे-धीरे समाजीकरण के साथ वह अपनी संस्कृति में भाषा, ज्ञान, विश्वास, मनोवृत्तियँ व्यवहार, नियम कानून प्रथायें, परम्परायें, रूढ़ियँ आदि सभी कुछ सीखने लगता है, ये तमाम कारक उसके व्यक्तित्त्व को हर पल प्रभावित करते

हैं इसलिए एक संस्कृति एवं समाज विशेष के लोगों के व्यक्तित्त्व में काफी हद तक समानतायें होती हैं और हम पहचान जाते हैं कि ये किस संस्कृति के लोग हैं। अगर भारतीय लोग पूरी दुनिया के किसी कोने में भी चले जायेंगे तो अपनी बोली, भाषा, खान-पान प्रथाओं आदि से भारत की संस्कृति का प्रतिनिधित्व करते हुए पाये जायेंगे।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि संस्कृति व्यक्तित्त्व का निर्धारण करती है इसलिए यह मानना ही पड़ेगा कि संस्कृति एवं व्यक्तित्त्व एक दूसरे के बिना अधूरे हैं चूंकि संस्कृति एवं व्यक्तित्त्व के सम्बन्धों की पूरी जाँच पड़ताल करने से पूर्व यह आवश्यक है कि हम व्यक्तित्त्व क्या है यह जानें।

5.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप -

- व्यक्तित्व शब्द का अर्थ एवं उसकी परिभाषाओं को जान सकेंगे।
- व्यक्तित्व की विशेषताओं एवं प्रकारों की संक्षिप्त जानकारी प्राप्त होगी।
- संस्कृति एवं व्यक्तित्त्व में क्या सम्बन्ध है इसका अध्ययन कर सकेंगे।
- व्यक्तित्व के विकास को प्रभावित करने वाले सांस्कृतिक कारकों का विस्तृत रूप में जानकारी देने की कोशिश की गई है।

5.3 व्यक्तित्व का आशय

अपने रोजमर्रा के जीवन में हम व्यक्तित्त्व का प्रयोग कई बार करते हैं। सामान्यतः जब हम किसी पार्टी, उत्सव आदि में किसी आकर्षक या हष्टपुष्ट व्यक्ति को देखते हैं तो अनायास ही कहने लगते हैं ‘‘ वाह क्या परसैनलिटी है‘‘ आम जन जीवन में सामान्यतः व्यक्तित्त्व का अर्थ व्यक्ति के बाह्य जीवन से ही लगाया जाता है। व्यक्तित्त्व शब्द मुख्यतः लैटिन भाषा के से बना है जिसका अर्थ नकाब होता है, । परसोना शब्द के अनुसार व्यक्तित्त्व का अर्थ बाह्य गुणों से लगाया जाता है लेकिन मनोविज्ञान में हम मात्र व्यक्तित्त्व के बाह्य गुणों का व्यक्तित्त्व नहीं कहते वरन व्यक्तित्त्व में व्यक्ति के मानसिक व शारीरिक गुणों का समावेश किया जाता है।

व्यक्तित्त्व को स्पष्टतः समझने के लिए उसकी परिभाषाओं को जानना जरूरी है।

5.4 व्यक्तित्व की परिभाषाएँ

- Child 1968 - व्यक्तित्त्व से तात्पर्य कमोबेश उन स्थायी आन्तरिक कारकों से होता है, जो व्यक्ति के व्यवहार को एक समय तक संगत बनाता है तथा उन व्यवहारों से भिन्न करता है जिसे तुल्य परिस्थितियों में व्यक्त करता है।

- Eysenck 1972- व्यक्ति की अभिप्रेरणात्मक व्यवस्थाओं का व्यक्तित्त्व सापेक्ष रूप में वह स्थिर संगठन है जिसकी उत्पत्ति जैविक अर्न्तनोदों सामाजिक तथा भौतिक वातावरण की अन्तःक्रिया के फलस्वरूप होती है।
- J.P.Guildford 1960- व्यक्तित्त्व शीलगुणों का एक समन्वित पैटर्न है।
- Allport (1937)- व्यक्तित्त्व व्यक्ति के उन मनोवैज्ञानिक गुणों का गत्यात्मक संगठन है जो वातावरण में उसके अपूर्व समायोजन को निर्धारित करता है।

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्व की कुछ विशेषताओं का उल्लेख किया है जो निम्न हैः-

परिभाषाओं के आधार पर व्यक्तित्व की विशेषताएँ -

1. मनोवैहिक तंत्र (Psychophysical system) व्यक्तित्त्व एक ऐसा तंत्र है जिसमें शारीरिक तथा मानसिक दोनों तंत्र होते हैं। यह दोनों तंत्र एक दूसरे से पूर्णतया अलग होते हुए एक दूसरे पर आश्रित होते हैं।
2. गत्यात्मक संगठन (Dynamic organization) गत्यात्मक संगठन से तात्पर्य यह है कि मनोशारीरिक तंत्र के विभिन्न तत्व, आदत, शीलगुण आदि एक दूसरे से सम्बन्धित होकर संगठित रहते हैं ओर इसमें परिवर्तन भी होता रहता है।
3. संगतता (Consistancy) व्यक्तित्त्व में कमोवेश स्थायित्व रहता है साथ ही व्यवहार में निरन्तरता भी बनी रहती है।
4. वातावरण में अपूर्व समायोजन का निर्धारण (Determination of unique adjustment to environment) प्रत्येक व्यक्ति में मनोशारीरिक गुणों का एक गत्यात्मक संगठन पाया जाता है कि उसका व्यवहार वातावरण में अपने -अपने ढंग का अपूर्व होता है।

5.5 व्यक्तित्व के प्रकार

मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्त्व के विभिन्न प्रकार बतायें है।

1. **हिप्पोक्रेटस का वर्गीकरण** : सर्वप्रथम हिप्पोंक्रेटस ने व्यक्तित्त्व के चार प्रकारों का वर्गीकरण किया है। हिप्पोक्रेटस के अनुसार व्यक्ति के शरीर में चार प्रकार के द्रव्य पाये जाते हैं।
   - **i.** पीलापित्त (Yellow bile) पीले पित्त प्रधान व्यक्तियों का स्वभाव या चित्त प्रकृति चिड़चिड़ा होता है तुनक मिजाज होते हैं। तथा गुस्सैल प्रकार के होते हैं।
   - **ii.** काले पित्त (Black bile) काले पित्त प्रधान व्यक्तियों का स्वभाव उदास व विषादी प्रकार का होता है विषादी व्यक्ति निराशावादी होते हैं।

iii. रक्त प्रधान पित्त (Blood bile) रक्त प्रधान व्यक्तियों का स्वभाव प्रसन्नतापूर्ण एवं खुशमिजाज, दृष्टिगोचर होता है इस प्रकार के व्यक्ति आशावादी व उत्साही होते हैं।

iv. कफ प्रधान (Phlegm) कफ प्रधान व्यक्तियों का स्वभाव षान्त ओर निष्क्रिय प्रकार का होता है इसमें भाव शून्यता पाई जाती है।

2. **क्रेश्मर का वर्गीकरण** : जर्मन मनोचिकित्सक क्रेश्मर **(1925)** ने शारीरिक गुणों के आधार पर चार प्रकार के व्यक्ति बतायें।

i. स्थूलकाय प्रकार (Pyknic type) इस प्रकार के व्यक्ति छोटे-मोटे स्थूलकाय व गोल प्रकार के होते हैं चित्तप्रकृति की दृष्टि से ये लोग मिलनसार, प्रश्नचित्त तथा मित्रता वाले होते हैं।

ii. कृशकाय प्रकार (Asthemic type) इनका शरीर दुबला पतला होता है लेकिन कद की दृष्टि से अधिक लम्बे होते हैं ये लोग आत्मकेन्द्रित तथा शान्त स्वभाव के होते हैं व एकान्तप्रिय तथा अर्न्तमुखी प्रकार के होते हैं।

iii. पुष्टकाय प्रकार (Athletic type) ये लोग हष्ट-पुष्ट प्रकार के होते हैं इनके स्वभाव में जोश तथा साहस बहुत दिखाई देता है।

iv. मिश्रितकाय प्रकार (Dysplatic type) इस प्रकार के व्यक्तियों में उपर्युक्त तीनों प्रकार के व्यक्तित्त्व के शारीरिक-मानसिक लक्षण पाये जाते हैं।

3. **शेल्डन का वर्गीकरण**: शेल्डन ने शारीरिक बनावट के आधार पर व्यक्तित्त्व के तीन प्रकार बताये।

i. एण्डोमर्फी (Endomorphy) इस प्रकार के व्यक्ति मोटे एवं नाटे होते हैं और इनका शरीर गोलाकार दिखता है इस प्रकार के शारीरिक गठन वाले व्यक्ति आराम पंसद, खुशमिजाज तथा सामाजिक तथा खाने-पीने की चीजों में रूचि दिखलाते हैं।

ii. मेसोमर्फी (Mesomorphy) इस प्रकार के व्यक्तियों का शारीरिक गठन हष्ट-पुष्ट एवं सुडौल होता है, इनमें जोखिम तथा बहादुरी का कार्य करने की तीव्र प्रवृत्ति, आक्रमकता आदि गुण पाया जाता है।

iii. एक्टोमर्फी (Ectomorphy) इस प्रकार के व्यक्ति दुबले पतले एवं लम्बे होते हैं, ऐसे व्यक्तियों को अकेला रहना तथा लोगों से कम मिलता जुलना अधिक पसंद आता है।

मनोवैज्ञानिक गुणों के आधार पर- कुछ मनोवैज्ञानिकों ने व्यक्तित्त्व का अध्ययन मनोवैज्ञानिक गुणों के आधार पर किया है इसमें युंग, आईजेक एवं गिलफोड प्रमुख हैं।

4. **युंग के आधार पर व्यक्तित्त्व के प्रकार** : युंग ने मुख्यतः दो प्रकार बताये हैं **-**

i. बर्हिमुखी व्यक्तित्त्व (Extrovert Personality) इस प्रकार के व्यक्तित्त्व वाले व्यक्ति समाजवादी, यथार्थवादी, व्यवहारकुशल, भावप्रधान, संकोचरहित, भौतिकवादी, अधिक वाल शक्ति वाले, कार्यशील वर्तमान को महत्त्व देने वाले, शीघ्र निर्णय लेने वाले तथा वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण वाले होते हैं।

ii. अर्न्तमुखी (Introvert Personality) इस प्रकार के व्यक्तित्त्व वाले व्यक्ति संकोची, विचार प्रधान, एकांतप्रिय, कम व्यवहार कुशल आदर्शवादी, देर से निर्णय लेने वाले आत्मगत कोण वाले, कम वाक शक्ति वाले तथा भविश्य को महत्त्व देने वाले होते हैं।

iii. उभयमुखी व्यक्तित्त्व (Ambivert Personality)आधुनिक मनोवैज्ञानिक ने युंग के व्यक्तित्त्व के दो प्रकारों की आलोचना करते हुए कहा कि अधिकांशतः लोगों में दोनों प्रकार के गुण पाये जाते हैं और उन्हें उभयमुखी कहा गया है।

5.6 व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले कारक

उपरोक्त विवेचन से व्यक्तित्त्व का अर्थ स्पष्ट हो जाता है लेकिन जब तक हम व्यक्तित्त्व को प्रभावित करने वाले कारकों को नहीं जान पाते तब तक व्यक्तित्त्व के बारे में समुचित जानना मुश्किल है, हम यह जानते हैं कि व्यक्ति के जीवन की प्रत्येक घटना उसके व्यक्तित्त्व को प्रभावित करती है।

1) जैविक आधार-

जैविक कारक से तात्पर्य जैसे कारकों से होता है जो आनुवांशिक होते हैं जो जन्म या जन्म से पहले गर्भधारण के समय से ही व्यक्ति में मौजूद होते हैं तथा व्यक्तित्त्व को प्रभावित करते हैं। जीवविज्ञानी मानते हैं कि व्यक्तित्त्व को प्रभावित करने में शरीर रचना प्रमुख होती है, उनका मानना है कि शारीरिक विषेशताओं के अनुसार ही व्यक्ति अपनी विभिन्न परिस्थितियों में अनुकूल करता है इस प्रकार अनेक विद्वान आज भी व्यक्ति की सफलता/असफलता को शरीर रचना से सम्बन्धित मानते हैं। जीववादी व्यक्तित्त्व को प्रभावित करने में शरीर रचना के योगदान में वंशानुक्रम, नाड़ीतंत्र, अन्तःश्रावी ग्रन्थिया और वौद्धिक योगिता के महत्त्व को स्वीकारा है।

a) वंशानुक्रम-वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा बच्चा अपने माता-पिता के गुणसूत्र तथा वाहकाणुओं;हमदमेद्धे द्वारा विभिन्न शारीरिक व मानसिक विशेषतायें प्राप्त करता है शारीरिक रचना से सम्बन्धित ये शीलागुण वंशानुगत होते हैं। जैसे- प्रायः देखा गया है कि लम्बे माता-पिता के बच्चे लम्बे तथा गोरे माता-पिता के बच्चे गोरे होते हैं। कभी-कभी बच्चों की शारीरिक रचना अपने माता-पिता से न मिलकर पूर्वजों से भी मिलते हैं। एक व्यक्ति गोरा लम्बा सुस्त मेहनती आकर्षक भद्दा, मूर्ख,बुद्धिमान आदि कैसा होगा, यह इस बात पर निर्भर करता है कि अपने वंशानुक्रम में किस प्रकार के जीन प्राप्त हुए हैं।

b) नाड़ीतंत्र- नाड़ीतंत्र का कार्य शरीर रचना को गति देने के साथ विचारों एवं आदतों का निर्माण करना है व्यक्ति का केन्द्रीय नाड़ीतंत्र तीन भागों में विभक्त है।

c) मस्तिष्क व्यक्ति को विचार करने की क्षमता देने एवं शरीर को क्रियाशील बनाये रखने का काम करता है जीवविज्ञानी मानते हैं कि अगर व्यक्ति में बुद्धि अधिक है तो समायोजन करने की क्षमता भी अधिक होगी।

d) रीढ़ सम्बन्धी तन्तु रीढ़ सम्बन्धी तन्तु शरीर की बाहरी रचना को एक विशेष स्वरूप देते हैं।

e) सेरेब्रल कोर्टेक्स मस्तिष्क व्यक्ति को विचार करने की क्षमता देने और शरीर को क्रियाशील बनाये रखने का कार्य करता है इसका तात्पर्य यह है कि नाड़ीतंत्र ही व्यक्ति के विभिन्न अनुभवों को संचित करने और इन अनुभवों को आगामी पीएियों के लिए हस्तान्तरित करने का प्रयत्न करता है।

f) अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ-अन्तःस्रावी ग्रन्थियों का महत्त्व व्यक्तित्त्व के निर्धारण में बहुत है इससे निकलने वाला स्श्राव हारमोन्स करता जाता है और व्यक्तित्त्व के विकास को प्रभावित करता है-जैसे कण्ठ ग्रन्थि से थाईराक्सिन नाम हारमौन्स निकलता है अगर थायराक्सिन नाम हारमोन्स बचपन में ही कम हो जाता हे तो व्यक्ति बौना हो जाता हे। इस प्रकार विभिन्न अन्तःस्श्रावी ग्रन्थियाँ व्यक्ति को प्रभावित करती है। इस प्रकार जीवविज्ञानी मानते हैं कि व्यक्तित्त्व का विकास जैविक कारकों द्वारा होता है लेकिन मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि शरीर रचना एक कारक मात्र की तरह है जिन्हें सामाजिक एवं सांस्कृति कारक प्रभावित करते हैं।

2) सामाजिक कारक -

उपरोक्त तीनों आधारों को देखने के बाद यह कहना उचित है कि व्यक्तित्त्व के विकास में मात्र एक कारक को श्रेष्ठता देना अन्य कारकों की अवहेलना करना जैसा है व्यक्ति**,** समाज एवं संस्कृति के तीनों कारण ही मिलकर किसी व्यक्ति के व्यक्तित्त्व का निर्माण करते हैं इसलिए किम्बल यंग ने कहा है- ‘‘ व्यक्तित्त्व का विकास सामाजिक सांस्कृतिक घेरे में ही काम करता है जो व्यक्ति के जैविकीय आधार पर निर्भर है।‘‘

व्यक्ति की शारीरिक रचना केवल एक निष्क्रिय कारक है जबकि समाज व्यक्तित्त्व के निर्माण का सक्रिय कारक है। इसे स्पष्ट करते हुए किम्बालयंग ने लिखा है**,** ‘‘ समाज वह रंगमंच है जिस पर व्यक्तित्त्व का विकास होता हैं‘‘ समाज व्यक्तित्व को जिन दो प्रमुख प्रक्रियाओं के द्वारा प्रभावित करता है**,** उन्हें हम सामाजिक अन्तर्क्रियाओं की प्रक्रिया तथा समाजीकरण की प्रक्रिया कह सकते हैं।

समाजिक अन्तर्क्रियाएं व्यक्तित्व के निर्माण का महत्वपूर्ण माध्यम है। यह अन्तर्क्रियाएं मुख्यतः तीन प्रकार की होती है**‘1-** व्यक्ति की व्यक्ति के प्रति अन्तर्क्रिया**, 2-** समूह और व्यक्ति के अन्तर्क्रिया**, 3-** एक समूह की दूसरे समूह से अन्तर्क्रिया। इन्हीं अन्तर्क्रियाओं के द्वारा व्यक्ति दूसरे व्यक्तियों से समायोजन करना सीखता है**,** उनसे अपनी अनुरूपता स्थापित करता है जो व्यक्तित्व के विकास के लिए आवश्यक है। वास्तव में सामाजिक अन्तर्क्रियाओं की सफलता ही व्यक्ति के समाजीकरण का आधार है। इन अन्तर्क्रियाओं की सफलता अथवा

असफलता के अनुसार ही व्यक्ति की उन आदतों , मनोवृत्तियों , विचारों तथा धरणाओं का निर्माण होता है जिनकी समग्रता को हम व्यक्ति का व्यक्तित्व कहते हैं। सामाजिक अन्तर्क्रियाओं के अनुसार ही व्यक्ति को समाज में एक विशेष प्रस्थिति प्राप्त होती है। व्यक्ति अपने आरम्भिक जीवन से लेकर अन्त तक अपनी विभिन्न प्रस्थितियों के अनुसार ही अपने ' आत्म' को विकसित करता है विलियम जेम्स का कथन है कि ''सामाजिक आत्म का तात्पर्य उस सामाजिक स्वीकृति से है जिसे एक बच्चा अथवा व्यक्ति अपने साथियों से प्राप्त करता है।'' समाज ही वह रंगमंच है जिस पर अन्तक्रिया करके व्यक्ति एक सामाजिक प्राणी बनता है। व्यक्ति की अन्तक्रिया ही यह निश्चित करती हैं कि एक व्यक्ति नेता, अनुयायी,निडर, कायर, झगड़ालू, शान्तिप्रिय, विचारवान अथवा मूर्ख में से किस तरह का व्यक्तित्व अर्जित करेगा। व्यक्ति के व्यवहार और उसकी मनोवृत्तियँ भी एक बड़ी सीमा तक उसकी सामाजिक परिस्थितियों तथा उनसे किए गये अनुकूलन पर निर्भर होती है इस दृष्टिकोण से व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले कारकों में सामाजिक कारकों की भूमिका अत्यधिक प्रभावी होती है।

3) सांस्कृतिक आधार -

सांस्कृतिक सिद्धान्त के अनुसार व्यक्तित्व के निर्माण का आधारभूत कारक व्यक्ति का सांस्कृतिक पर्यावरण है। सांस्कृतिक पर्यावरण ही यह निश्चित करता है कि व्यक्ति में किस प्रकार की मनोवृत्तियँ ,विचार आदतें और सामाजिक मूल्यों के प्रतिनिष्ठ उत्पन्न होगी। व्यक्ति के व्यवहार-प्रतिमानों का निर्धारण भी उसकी सांस्कृतिक विशेषताओं के आधार पर ही होता है। व्यक्ति जिस समूह में रहता है, उस समूह के सांस्कृतिक प्रतिमान ही यह निर्धारित करते हैं कि व्यक्ति अपने परिस्थितियों के अनुसार विभिन्न भूमिकाओं का निर्वाह किस प्रकार करेगा, वह कितना अधिक नैतिक अथवा अनैतिक होगा, उसमें शिष्टता और सम्मान-प्रदर्शन का स्तर कैसा होगा। सांस्कृतिक कारकों को हम व्यक्तित्व एवं संस्कृति के सम्बन्ध में आगे स्पष्ट करेंगे।

5.7 संस्कृति एवं व्यक्तित्व में सम्बन्ध

संस्कृति का व्यक्तित्त्व पर व्यापक प्रभाव पड़ता है, जन्म के समय से ही बच्चा अपनी संस्कृति को सीखने लगता है वह अपने आस-पास के वातावरण से भाषा ज्ञान विश्वास रीतियाँ, मनोवृत्तियाँ सीखने लगता है। शिशु को जिस संस्कृति में रखा जाय बड़े होकर उसका व्यक्तित्त्व उसी संस्कृति का होकर निखरता है। इसलिए कहा गया है कि ''व्यक्ति अपनी संस्कृति का आईना होता है'' संस्कृति एवं व्यक्ति हमेशा एक दूसरे को प्रभावित रहते हैं अर्थात् संस्कृति व्यक्ति को और व्यक्ति संस्कृति को प्रभावित करता है।

क्रेच, क्रेचफील्ड एवं बैलक **(1962)-** व्यक्ति एवं संस्कृति के मध्य सम्बन्ध एक तरफा नहीं है अपितु दोनों का एक दूसरे पर प्रभाव पड़ता है संस्कृति व्यक्ति को व्यापक रूप से प्रभावित करके समाज में स्थायित्व लाती है तथा संस्कृति की निरन्तरता बनाये रखती हैं व्यक्ति भी अपनी संस्कृति को प्रभावित करता है और इस प्रकार सामाजिक परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त होता है।''

क्रेच, क्रेचफील्ड ने संस्कृति एवं व्यक्तित्त्व के मध्य सम्बन्ध बताने पर कहा कि व्यक्तित्त्व एवं संस्कृति का सम्बन्ध काफी जटिल है इसे इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है-

- प्रत्येक व्यक्ति अपनी संस्कृति का एक अंग ;ब्तमंजनतमद्ध होता है। वह सांस्कृतिक मान्यताओं के अनुसार अनुरूपता का प्रदर्शन भी करता है।
- प्रत्येक व्यक्ति अपनी संस्कृति विरासत का वाहक होता है। अतः वह अपने बाद की पीढ़ियों को उससे अवगत भी कराता है ताकि सांस्कृतिक निरन्तरता बनी रहे।
- व्यक्ति संस्कृति में परिवर्तन भी करता है ताकि समकालीन परिस्थितियों के अनुरूप उसे बनाया जा सके।
- व्यक्ति आवश्यकतानुसार नवीन विचारों एवं मूल्यों की स्थापना भी करता है। इस दृष्टि से उसे संस्कृति का सृजनकर्त्ता**(Creator)** भी कहा जाता है।

व्यक्तित्व एवं संस्कृति में सम्बन्ध बताते हुए रयूटर एवं हार्ट (Reuter and Hart) ने कहा है कि ‘‘समाज मनुष्य को पशु जीवन से अवश्य अलग करता है लेकिन इस बात का निर्धारण संस्कृति ही करती है कि व्यक्ति के व्यक्तित्व का रूप किस प्रकार होगा।‘‘

अर्थात जब बच्चा जन्म लेता है वह मात्र शरीर होता है अर्थात कच्चे माल की तरह वह जिस संस्कृति में जन्म लेता है संस्कृति उसके अनुभवों व व्यवहारों को प्रभावित करना प्रारम्भ कर देती है संस्कृति में ही बच्चे का व्यक्तित्व विकसित होने लगता है। व्यक्ति को भी अगर अपनी संस्कृति में किसी प्रकार की बुराई नजर आती है तो उसमें परिवर्तन करने के लिए वह अन्य व्यक्तियों को भी प्रेरित करता है इस प्रकार व्यक्ति एवं संस्कृति लगातार एक दूसरे को प्रभावित करते रहते हैं ओर यही प्रभाव संस्कृति में एक निरन्तरता बनाये रखता है, व्यक्ति अपने आगामी पीढ़ी को अपनी संस्कृति को हस्तान्तरित करता है इसलिए मानव अपनी बुद्धि विवके एवं संस्कृति के कारण निरन्तर आगे बढ़ रहा है।

यहाँ किसी एक पक्ष अर्थात व्यक्ति या संस्कृति महत्व देना कठिन होगा क्योंकि संस्कृति से व्यक्तित्व प्रभावित होता है और व्यक्तित्व से संस्कृति। प्रत्येक व्यक्ति अपने संसकृति का अंग है- शिशु को जन्म के समय से ही कुछ सांस्कृतिक मान्यतायें प्राप्त होती हैं वह जिस सस्कृति में पैदा हुआ है उसके नियम कानून नैतिकता प्रथायें एवं मान्यताऐं विरासत में मिलती हैं वह अपने से बड़ों को जैसा व्यवहार करते देखता है उसके अनुरूप व्यवहार करने लगता है न करने पर बचपन से दण्ड व सजा मिलती है जिससे वह अपनी संस्कृति के अनुरूप व्यवहार करने लगता है इसलिए कहा जाता है संस्कृति में अनुरूपता का गुण पाया जाता है।

- व्यक्ति सांस्कृतिक विरासत का अंग होता है- व्यक्ति एवं संस्कृति को अलग-थलग नहीं किया जाता है प्रत्येक व्यक्ति को अपनी संस्कृति से विरासत में बहुत कुछ मिलता है भाषा ज्ञान अभिवृत्तियाँ, मनोवृत्तियाँ विश्वास, व्यवहार आदि और यही विरासत से वह अपने बाद की पीढ़ियों को अवगत कराता है तांकि सांस्कृतिक निरन्तरता बनी रहे।

- व्यक्ति संस्कृति में परिवर्तन भी करता है जब कभी संस्कृति परिस्थिति या मान्यताऐं समाज के अनुकूल नहीं होती है तो समकालीन परिस्थितियों को अपने अनुकूल बनाने के लिए व्यक्ति या समूह उसमें परिवर्तन भी करता है। जैसे- सती प्रथा जैसी रूढ़िया जब संस्कृति के लिए कलंक हो गई तो कुछ गणमान्य व्यक्तियों उसके खिलाफ आवाज उठाई और समाज तथा सरकारों को उसके विरुद्ध कानून बनाना पड़ा इस प्रकार समय-समय पर संस्कृति में आई कुरीतियों को दूर कर व्यक्ति संस्कृति में परिवर्तन लाते हैं।
- व्यक्ति आवश्यकतानुसर नवीन विचारों एवं मूल्यों की स्थापना करता है- प्रत्येक समूह या समाज की अपनी सांस्कृति होती है व्यक्ति अपनी आवश्यकतानुसार नये विचारों एवं मूल्यों को स्थापित भी करते हैं। जैसे उत्तराखण्ड की धरती पर लगातार हो रहे पेड़ों के कटान के पश्चात व्यक्तियों ने यह सोचना प्रारम्भ किया कि यह उनके जीवन व उनकी आने वाली पीढ़ी के जीवन के लिए नुकसानदायक है, ऐसी स्थिति में, कुछ समाज सुधारकों ने वृक्षों को लगाने के लिए उसे वैवाहिक संस्कार में जोड़ना प्रारम्भ किया और यह निश्चित किया कि दूल्हा-दुल्हन शादी के बाद वृक्षारोपण करेंगे, जिसे दुल्हन की याद में उसके मायके वाले सुरक्षित रखेंगे यह संस्कृति का एक हिस्सा होने लगा ओर उत्तराखण्ड के कई गांवों में यह एक प्रथा के रूप में संस्कृति का हिस्सा बन गया अतः हम कह सकते हैं कि आवश्यकतानुसार नये विचारों एवं मूल्यों को स्थापित किया जाता है। अतः हम कह सकते हैं कि ये दोनों ही एक दूसरे के पूरक हैं और एक दूसरे के बगैर दोंनों ही अर्थात संस्कृति एवं व्यक्तित्व अस्तित्वविहीन है। इसलिए दोंनों के सम्बन्धों को समानता के परिपेक्ष्य में देखना उचित होगा।

5.8 व्यक्तित्व विकास पर संस्कृति का प्रभाव

प्रत्येक समूह या समाज की अपनी मान्यतायें होती है मानव को उन मान्यताओं के अनुरूप ही व्यवहार करना पड़ता है ऐसा न करने पर समूह तथा समाज व्यक्ति को दण्ड, आलोचना एवं तिरस्कार का सामना करना पड़ता है। चूंकि शिशु जब पैदा होता है तो उसे मानव निर्मित पर्यावरण मिलता है। उसी पर्यावरण में वह जीवन जीने का सलीका सीखता है, यह पर्यावरण ही उसकी संस्कृति होती है। व्यक्ति का सम्पूर्ण जीवन संस्कृति से होकर गुजारता है अर्थात कहने का तात्पर्य यह है कि संस्कृति व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्त्व को विभिन्न कारकों द्वारा प्रभावित करती रहती है। इन कारकों एवं तथ्यों की विवेचना निम्न प्रकार की गई है।

1. पालन पोषण की विधियों का व्यक्तित्त्व विकास पर प्रभाव -

पालन पोषण की विधि एक विशेष सांस्कृतिक तत्व है जिसका व्यक्तित्व के निर्माण में महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। बच्चे के जन्म के बाद पालन पोषण एवं प्रशिक्षण देने का कार्य माता-पिता एवं पारिवारिक सदस्यों का होता है। बच्चे की खान-पान की आदतें, मल-मूत्र त्याग, शिष्टाचार, उत्तरदायित्व आदि सभी तरह का प्रशिक्षण पालन-पोषण से सम्बन्धित है इस सन्दर्भ में मनोवैज्ञानिकों ने कई अध्ययन किये है। बोर्नफेन ब्रेनर

(1970) में अपने अध्ययन में पाया कि यदि माता-पिता अपने बच्चों से कम सम्पर्क रखते हैं तो उनमें आत्मनियंत्रण की कमी आ जाती है।

श्रीमती मीड ने आरापेश जनजाति के अध्ययन के आधार पर मानव व्यक्तितव पर पालन-पोषण के प्रभावों को स्पष्ट किया है इस जनजाति में बच्चों को बचपन से ही बड़ी कोमलता से पाला जाता है, ये लोग बच्चों की भावनाओं एवं आवश्यकताओं के प्रति सदैव जागरूक रहते हैं। इसी कारण इस जनजाति के लोगों में दया, प्रेम सहानुभूति, एवं मृदुलता के गुण अधिक पाये जाते हैं जबकि मुण्ड गुमार जनजाति में बच्चों के पालन पोषण पर बिल्कुल भी ध्यान नहीं दिया जाता है, इन बच्चों में आक्रमकता, ईर्ष्या, कठोरता अधिक पायी जाती है।

उपरोक्त अध्ययनों से स्पष्ट है कि समाज अपने बच्चों के पालन पोषण में जिस प्रकार की संस्कृति को अपनाता है व्यक्तित्व का विकास उसी प्रकार होता है।

2. भाषा एवं व्यक्तित्व -

भाषा अपने विचारों को दूसरों तक पहुँचाने का महत्त्वपूर्ण माध्यम है, व्यक्ति अपने विचार, भावनाऐं, कला, साहित्य एवं सृजन आदि सभी कुछ बताने के लिए भाषा को प्रयोग करता है। भाषा जितनी सुस्पष्ट एवं निपुण होगी व्यक्तित्व के विकास पर उसका उतना सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। एक समुदाय के लोगों को दूसरे समुदाय से जोड़ने में भाषा महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। बच्चा जब बोलना प्रारम्भ करता है सबसे पहला सम्पर्क उसका भाषा से होता है भाषा जितनी कोमल व मधुर होती है, व्यक्तित्व का विकास उतना ही प्रभावशाली होता है इसलिए हम कह सकते हैं कि भाषा संस्कृति का अभिन्न अंग है।

3. संस्थाएँ एवं व्यक्तित्व -

प्रत्येक संस्कृति में सामाजिक, पारिवारिक आर्थिक एवं राजनैतिक संस्थाएँ होती हैं इन संस्थाओं के नियम एवं मानकों को मानने की सभी व्यक्तियों से उम्मीद की जाती है सभी संस्थाएँ व्यक्तित्व को हर पल प्रभावित करती है। संस्थाओं के नियमानुसार ही व्यक्तित्व में सहयोग एवं संघर्ष की मनोवृत्तियाँ उत्पन्न होती हैं। उदाहरण-जैसे विवाह एक संस्था है, किसी समूह में एक विवाह प्रचलित होता है, और कई समूहों में बहुपति एवं बहुपत्नी का विवाह प्रचलन में है। जहॉ एक पति या पत्नी के विवाह का चलन है वहाँ के समूह के लोगों का व्यक्तित्व दूसरे समूह या समाज से भिन्न होता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि तमाम तरह की संस्थायें चाहे वो आर्थिक हो या राजनैतिक अथवा पारिवारिक व्यक्ति के व्यक्तित्व को प्रभावित करती हैं।

4. परम्पराएँ एवं व्यक्तित्व –

परम्पराएँ व्यवहार के मान्य तरीकों को घोतक है, सामान्यतः परम्पराओं का सम्बन्ध एक समुदाय की सभी आदतों विचारों से होता है जो दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होता है परम्पराओं से हम यह जान जाते हैं कि एक निश्चित परिस्थिति में व्यक्ति कैसा व्यवहार करेगा। परम्पराओं के पीछे अनेक पीढ़ी के अनुभवों पर सामाजिक

सहमति होती है जो व्यक्ति के व्यवहारों पर नियंत्रण करती हैं और उसकी इच्छाओं को समाज के मान्य तरीके द्वारा पूरा करती हैं जिससे व्यक्ति का व्यक्तित्व सन्तुलित एवं समायोजित रह सके। परम्परायें संस्कृति का महत्त्वपूर्ण भाग होती हैं, भारत के हर सम्प्रदाय या समूह की अपनी अलग-अलग परम्पराएँ हैं यही परम्परायें व्यक्तित्व में विशिष्टता का गुण पैदा करती हैं और समूह या समाज को भी सामूहिक मनोबल प्रदान करती हैं।

5. धर्म एवं नैतिकता का व्यक्तित्व पर प्रभाव -

जन्म लेते ही बच्चा मानव निर्मित वातावरण में प्रवेश करता है जहाँ भौतिक (मकान, फर्नीचर, आदि) तथा अभौतिक संस्कृति(धर्म प्रथा, विश्वास आदि) उसे घेरे रहते हैं। धर्म का सम्बन्ध आध्यात्मिक शक्ति से है जो समस्त प्राणी जगत की सेवा करने एवं कर्तव्यनिष्ठ बने रहने की प्रेरणा देती है, धर्म के द्वारा व्यक्ति संसारिक निराशाओं से बचकर अपने कर्तव्य की दिशा में आगे बढ़ने की कोशिश करता है तथा गलत कार्य करने पर अलौकिक शक्ति द्वारा दण्ड दिये जाने का भय भी उसमें बना रहता है। नैतिकता का सम्बन्ध मनुष्य के आन्तरिक भावना से है जो उचित एवं अनुचित का भेद कराती है। नैतिकता व्यक्ति में ईमानदारी पवित्रता एवं सदगुणों के अनुसार चलने की प्रेरणा देता है। धर्म एवं नैतिकता दोनों ही व्यक्ति के व्यक्तित्व में सदगुणों, अच्छे आचरण एवं आदर्शो का विकास करते हैं। बच्चा जिस परिवार में जन्म लेते हैं वह किसी धर्म का अनुयायी होता है बच्चा उसी धर्म को मनने लगता है बड़े होने के बाद व्यक्ति अन्य धर्मो को समाज में देखता है और उनसे सीखता है। धर्म में मात्र श्रद्धा का ही भाव नहीं होता वरन् भय भी उसमें शामिल होता है इसी कारण मानव सामान्यतः धर्म की अवहेलना नहीं करता। इस प्रकार स्पष्ट है कि धर्म नैतिकता मिलकर व्यक्ति के व्यवहारों को नियन्त्रित एवं सन्तुलित करते हैं इस प्रकार के मिश्रित व्यक्तित्व समाज के लिए आदरणीय होते हैं ओर लोग उनका अनुकरण करते है। जैसे- विवेकानन्द अतः स्पष्टतः कहा जा सकता है कि धर्म एवं नैतिकता संस्कृति के महत्वपूर्ण घटक हैं और व्यक्तित्व विकास में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं।

6. प्रथाऐं एवं व्यक्तित्व -

व्यक्तित्व के विकास में प्रथाओं का भी महत्वपूर्ण स्थान है। समाज द्वारा मान्यता प्राप्त ऐसी जनरीतियाँ जो पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित होती रहती है तथा जिन्हें समूह कल्याण के लिए आवश्यक समझा जाने लगता है, उन्हीं को हम प्रथाऐं कहते हैं। प्रथाएँ सीखने की प्रक्रिया को सरल बनाती हैं ओर सीखने की प्रक्रिया ही व्यक्तित्व के विकास की आधारशिला है। सामाजिक समस्याओं का समाधान करने के लिए व्यक्ति उन्हीं क्रियाओं को चुनता है जो उसके लिए उपयोगी होती हैं। ऐसी क्रियाएँ जब किसी लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल रहती हैं तब वे पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तान्तरित होने लगती हैं। यही क्रियाएँ धीरे-धीरे प्रथा का रूप ले लेती हैं।

7. लोकाचार एवं व्यक्तित्व -

‘‘लोकाचारों कार्य करने के वे सामान्य तरीके हैं जिन्हें जनरीतियों की अपेक्षा अधिक सही और अधिक उचित समझा जाता है तथा जिनकी अवहेलना करने पर व्यक्ति को अधिक निश्चित रूप से कठोर दण्ड दिया जाता है।

''लोकाचार में जनकल्याण की भावना निहित होती है तथा यह एक सामाजिक आदत के रूप में स्थापित हो जाते हैं।'' लोकाचार सकारात्मक भी होते हैं और नकारात्मक भी। सकारात्मक लोकाचार जीवन में उचित समझे लाने वाले व्यवहारों की प्रेरणा देते हैं। उदाहरण के लिए, सच बोलना, ईमानदारी रखना तथा परिश्रम करना आदि सकारात्मक लोकाचार हैं। नकारात्मक लोकाचार वे होते हैं जो व्यक्ति को अनुचित व्यवहार करने से रोकते है। जैसे-चोरी न करना, भीख न माँगना, झूठ न बोलना आदि। वास्तविकता यह है कि जोकाचार जनप्रिय विचारों, दृष्टिकोणों और आदर्शों का प्रतिनिधित्व करते हैं। अतः इन्हें अपनाने का अर्थ व्यक्तित्व का सन्तुलित विकास करना होता है।

8. सामाजिक मान्यताऐं एवं व्यक्तित्व -

प्रत्येक समाज या समूह चाहे व आधुनिक हो या जनजातिय, अपराधिक हो या पुरातनपंथी उस समूह के अपने निश्चित मान्यतायें होती हैं और उस समाज समूह से उन मान्यताओं को अपनाने की आशा की जाती है नहीं अपनाने पर उन्हें दण्ड एवं तिरस्कार दिया जाता है सामाजिक मान्यतायें व्यक्ति के व्यक्तित्व में उत्तरदायित्व की भावना उत्पन्न करती हैं इस प्रकार संस्कृति एक निश्चित स्थितियों में मानक व्यवहार अपनाने की सीख देकर अपने समूह व समाज को व्यवस्थित जीवन प्रदान करती हैं। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य सांस्कृतिक कारण भी व्यक्तित्व को प्रभावित करते हैं-

उपरोक्त तथ्यों से हम जान चुके हैं कि संस्कृति विभिन्न प्रकार जैसे- धर्म, भाषा, नैतिकता, परम्परायें, प्रथायें आदि से व्यक्तित्व को लगातार प्रभावित कर सिकतित करती हैं बच्चा बचपन से ही अपने आस-पास के परिवेश से सीखने लगता है संस्कृति प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष तरीके से उसके व्यक्तित्व को विकसित करती है और एक जिम्मेदार नागरिक के रूप में उसे जीना सिखाती है, संस्कृति उसके व्यक्तित्व में इस प्रकार रची-बसी होती है कि उसको अलग से देखना मानव के लिए मुश्किल कार्य होता है अतः हम कह सकते हैं कि संस्कृति व्यक्तित्व का विकास ही नहीं करती वरन् व्यक्तित्व का निर्माण भी कर देती है।

- संस्कृति व्यक्ति में उत्तरदायित्व की भावना उत्पन्न करती है उदाहरण-जैसे भारतीय संयुक्त परिवारों में बच्चों को कठोर अनुशासन में रखा जाता है तथा सामाजिक उत्तरदायित्वों को पूरा करने के लिए तरह-तरह का प्रशिक्षण दिया जाता है इसी के परिणामस्वरूप भारत में अपने माता-पिता, भाई-बहनों या पारिवारिक सदस्यों के सन्दर्भ में उत्तरदायित्व की भावना जितनी अधिक पाई जाती है वह यूरोप के लोगों में देखने को नहीं मिलती है।
- कष्ट सहने की क्षमता सभी व्यक्तियों के जीवन में सुख-दुख दोनों ही आते हैं। व्यक्ति के जीवन में आये कष्टों से जो जितनी सहनशीलता व निडरता से सह लेता है उसका व्यक्तित्व उतना ही सहनशील बन जाता है।

प्रो0 वुडवर्थ- के अध्ययन् से यह ज्ञात हुआ है '' सामान्य अमेरिकनों की तुलना में वहाँ के रेड इण्डियन जनजाति के लोगों में कष्ट सहने की क्षमता अधिक होती है इसका कारण रेड इण्डियन की वह संस्कृति है कि वह अपने बच्चे को आरम्भ से ही तरह-तरह के कष्टों को सहन करने का अभ्यास कराते हैं।

इसी तरह भारतीय संस्कृति में भी सुख-दुख में समान बने रहने व सहनशील बने रहने की सीख दी जाती है जो उनके व्यक्तित्व में दिखाई देता है।

9. मनोवृत्तियों का निर्माण –

व्यक्ति के मानसिक झुकाव को मनोवृत्ति कहा जाता है अर्थात् विचारों, परिस्थितियों, ईच्छाओं, वस्तुओं आदि के सन्दर्भ में व्यक्ति किन वस्तु परिस्थितियों व विचारों की ओर समर्पित होता है यही उसकी मनोवृत्ति कहलाती है। मनोवृत्तियों से ही व्यवहार का निर्धारण होता है बचपन से ही बच्चा जिस संस्कृति का प्रतिनिधित्व करता है वैसा ही व्यवहार उसका दिखाई देता है। जैसे- गोरे अमेरिकन बच्चों को प्रारम्भ से ही नीग्रो के प्रति घृणा करना सिखाया जाता है। वह नीग्रो के मिलने पर वैसी ही मनोवृत्ति जाहिर करते हैं। वास्तव में संस्कृति अनेक लोक गाथाओं , पौराणिक गाथाओं से आरम्भ से ही बच्चों को शिक्षा देती है जिसके द्वारा समूह, समाज, देश व दुनिया के बारे में बच्चों में तरह-तरह की मनोवृत्तियों का विकास हो जाता है। मनोवृत्तियाँ यह निर्धारित करती हैं कि व्यक्ति का व्यक्तित्व उदार होगा या संकीर्ण, स्वार्थी होगा या दयालु निडर होगा या कायर, इन मनोवृत्तियों का निर्धारण समाज या समूह का सांस्कृतिक स्वरूप करता है।

10. सम्मान प्रदर्शन-

व्यक्ति की एक प्रमुख विशेषता अन्य लोगों के प्रति सम्मान प्रदर्शित करना है प्रत्येक संस्कृति अपने समूह या सामज के लोगों को दूसरों का सम्मान करना सीखाती है। जैसे-भारतीय संस्कृति पैर छूकर, हाथ जोड़कर, अथवा खड़े होकर दूसरों का सम्मान करना सीखाती है जबकि अफ्रीका की मसाई जनजाति किसी के प्रति स्नेह अथवा सम्मान प्रदर्षित करने के लिए उस पर थूकना अच्छा समझती है, जबकि हमारी संस्कृति में थूकना घृणित व्यवहार माना जाता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रत्येक समूह/समाज संस्कृति का सम्मान प्रदर्षित करने का तरीका अलग-अलग होता है और उसी के अनुसार व्यक्तित्व का विकास होता है यही अलग-अलग संस्कृति के तरीके हर समाज में विभिन्नता एवं विषिश्टता का गुण उत्पन्न करते है।

11. संस्कृति व्यवहारों का निर्धारण करती है -

कोई व्यक्ति घर में पिता,पति एवं भाई हो सकता है कार्यालय में उसकी भूमिका कर्मचारी की हो सकती है- अलग-अलग परिस्थितियों में तरह-तरह का व्यवहार करना संस्कृति ही सीखाती है कि पिता को पुत्र या पुत्री से कैसा व्यवहार करना चाहिए। पति के रूप में उसे कैसा होना चाहिए साथ ही समाज या कार्यालय में उसे कैसा

व्यवहार करना चाहिए या किसी नेता के अपने अनुयायिओं के साथ कैसा बर्ताव रखना चाहिए- वे तमाम तरह की भूमिकायें व्यक्तित्व के व्यवहार का निर्धारण करते हुए उसके विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट है कि संस्कृति के प्रतिमानें में हम सभी तरह के विश्वास मनोवृत्तियों प्रथायें धर्म नैतिकता परम्पराओं, समाजीकरण एवं उत्तरदायित्व की भावनाओं आदि सभी विषेशताओं को सम्मिलित करते हैं ये सभी विशेषतायें अथवा गुण व्यक्तित्व के निर्माण एवं विकास के वास्तविक आधार है।

5.9 सारांश

व्यक्तित्व के विकास पर संस्कृति का प्रभाव जन्म से ही पड़ता है जन्म से ही बच्चा जिस संस्कृति में पैदा होता है वह संस्कृति उसके व्यक्तित्व को आकार देने लगती है संस्कृति में व्याप्त भाषा ज्ञान परम्परायें विश्वास अभिवृत्ति प्रथायें आदि तमाम घटक हर पल व्यक्तित्व को प्रभावित करते है और यह प्रभाव जीवन पर्यन्त तक चलता रहता है। लेकिन यहाँ यह कहना भी समीचीन होगा कि व्यक्तित्व भी संस्कृति के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है व्यक्तियों को संस्कृति में अगर कुरीति दिखाई देती है तो वह उसमें परिवर्तन करके समाज को नई दिशा भी देता है। इस प्रकार व्यक्ति एवं संस्कृति हमेशा एक दूसरे पर आश्रित भी होती है संस्कृति से व्यक्तित्व का निर्माण होता है और व्यक्तित्वों से संस्कृति को नई दिशा प्राप्त होती है अतः हम कह सकते हैं कि संस्कृति एवं व्यक्तित्व में सम्बन्ध अटूट है। ये एक दूसरे के पूरक हैं प्रस्तुत सारांश में संस्कृति का व्यक्तित्व विकास में प्रभाव देखने के लिए कुछ पुरातन अध्ययन का उल्लेख किया है जो व्यक्ति एवं संस्कृति में सम्बन्ध तथा व्यक्तित्व के विकास में सांस्कृतिक कारकों के प्रभाव को स्पष्ट करते हैं।

5.10 शब्दावली

- **व्यक्तित्त्व:** व्यक्तित्त्व शीलगुणों का एक समन्वित पैटर्न है।

5.11 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1) व्यक्तित्व व्यक्ति के बाह्य रूप को कहते है।

(अ) सत्य (ब) असत्य

2) व्यक्तित्व एवं संस्कृति एक दूसरे के पूरक हैं।

(अ) सत्य (ब) असत्य

3) संस्कृति के तत्व हैं-

(अ) भाषा (ब) धर्म एवं नैतिकता (स) परम्परायें (द) उपरोक्त सभी

4) मनोवृत्तियों का निर्धारण संस्कृति की देने है-

(अ) सत्य (ब) असत्य

5) संस्कृति पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तान्तरित होती है।

(अ) सत्य (ब) असत्य

5.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डा**0** श्रीवास्तव डी**0**एन**0**- व्यक्तित्व मनोविज्ञान
2. डा**0** सिंह ए**0** के**0**- व्यक्तित्व मनोविज्ञान
3. डा**0** सिंह आर**0**एन**0**- आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान
4. डा**0** सिंह अरूण कुमार- समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा
5. डा**0** अग्रवाल पी**0**के,डा**0** पाण्डेय एस**0**एस**0**- सामाजिक मनोविज्ञान
6. कुप्पुस्वामी बी- समाज मनोविज्ञान
7. डा**0** मुकर्जी- युनीफाईट समाजशास्त्र
8. डा**0** बघेल्डी**0**एस, डा**0** अग्रवाल- उच्चतर समाजशास्त्र

5.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. व्यक्ति से आप क्या समझते है**?** इसके विभिन्न प्रकारों का वर्णन कीजिये।
2. संस्कृति से आप क्या समझते है**?** संस्कृति एवं व्यक्तित्व में सम्बन्ध स्पष्ट कीजिये।
3. व्यक्तित्व पर संस्कृति के प्रभाव का विस्तृत वर्णन कीजिये।
4. जनजातीय उदाहरणों द्वारा सांस्कृतिक प्रभावों का विवेचन कीजिये।
5. टिप्पणी लिखिये- **i.** संस्कृति एवं व्यक्तित्व में सम्बन्ध।

   ii. व्यक्तित्व को प्रभावित करने वाले कारक।

इकाई-6 राष्ट्रीय चरित्र:- अर्थ एवं सिद्धान्त (National Character:- Meaning and Theory)

इकाई संरचना

6.1 प्रस्तावना
6.2 उद्देश्य
6.3 राष्ट्रीय चरित्र का आशय
6.4 राष्ट्रीय चरित्र के निर्धारक
6.4.1 भौगोलिक कारक
6.4.2 सामाजिक कारक
6.4.3 आर्थिक कारक
6.4.4 आर्थिक राजनैतिक कारक
6.4.5 धार्मिक कारक
6.5 राष्ट्रीय चरित्र के सिद्धान्त
6.5.1 मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त
6.5.2 क्षेत्र सिद्धान्त
6.5.3 शिक्षण सिद्धान्त
6.5.4 प्रेरणात्मक सिद्धान्त
6.6 सारांश
6.7 शब्दावली
6.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न
6.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
6.10 निबंधात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

सामान्य तौर पर एक ऐसा व्यक्तित्व जो राष्ट्र के लिए एक आदर्श प्रस्तुत करें उस व्यक्ति के व्यक्तिगत चरित्र की पहचान से राष्ट्र की पहचान का या उसके व्यवहार का आदर्श झलकता हो, ऐसे व्यक्तित्व को राष्ट्रीय चरित्र की श्रेणी में रखा जाता है जिसे हम अंग्रेजी में माडल परसैनलिटी कहते हैं।

किसी भी राष्ट्र के लिए उसका राष्ट्रीय चरित्र बहुत महत्वपूर्ण होता है अगर किसी भी देश के व्यक्तियों के समूह में कोई गुण या अवगुण प्रदर्शित होता है जो उसे हम उस देश या राष्ट्र की पहचान के रूप में प्रदर्शित करते हैं। राष्ट्रीय चरित्र के निर्माण में वहाँ की भौगोलिक, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक वातावरण का प्रभाव अवश्य पड़ता है। समय बीतने के साथ अगर सामाजिक आर्थिक स्थितियों में परिवर्तन हो जाता है तो राष्ट्रीय चरित्र में भी परिवर्तन दिखाई देने लगता है। यहाँ यह बता दें कि राष्ट्रीय चरित्र एक जटिल अवधारणा है अतः इसे विस्तृत रूप से समझना आवश्यक है।

6.2 उद्देश्य

इकाई तृतीय में हम राष्ट्रीय चरित्र के अर्थ को जान पायेंगे -

- राष्ट्रीय चरित्र को समझने के लिए यह आवश्यकीय है कि हम राष्ट्र की अवधारणा को जाने, इस इकाई में राष्ट्र का अर्थ एवं उसकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को संक्षिप्त रूप में बताया गया है।
- राष्ट्रीय चरित्र किस प्रकार का होता है इम सन्दर्भ में विभिन्न विद्वानों ने अपने सिद्धान्त दिये हैं तांकि छात्र-छात्रायें राष्ट्रीय चरित्र के सामान्य व सैद्धान्तिक पृष्ठभूमि को पूर्णतः जान सकें।

6.3 राष्ट्रीय चरित्र का आशय

राष्ट्रीय चरित्र की अवधारणा एक नवीनतम अवधारणा है जो राष्ट्र राज्यों के अस्तित्व में आने के बाद विकसित हुई जब कभी हम राष्ट्रीय चरित्र की बात करते हैं तो हम सभी के लिए 'राष्ट्र' बहुत की महत्वपूर्ण हो जाता है राष्ट्रीय चरित्र मुख्यतः दो शब्दों से मिलकर बना है राष्ट्रीय चरित्र, इसलिए आवश्यक है कि हम पहले थोड़ा राष्ट्र के बारे में जानें।

मानव के विकास के प्रारम्भिक दौर में मानव गुफाओं में रहता और आखेट कर अपना जीवनयापन करता अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उसने अग्नि का आविष्कार किया और जीवन सुरक्षा के लिए खेती प्रारम्भ की। धीरे-धीरे कबिलाई समाज बना प्रत्येक कबीला अपने प्रभुत्व को बनाये रखने के लिए दूसरे कबिले पर आक्रमण करता। मध्यकालीन युग में राज्य अस्तित्व में आये राजा व प्रजा के सम्बन्ध विकसित हुए पर उसे हम राष्ट्र की संज्ञा नहीं दे सकते जैसे- अकबर के दरवार में नौ रत्न थे पर उनको राष्ट्रीय चरित्र का दर्जा नहीं दिया जा सकता क्योंकि तब तक राष्ट्र राज्य की अवधारणा विकसित ही नहीं हुई थी, या यों कहें कि आधुनिक युग के साथ औद्योगिक क्रान्ति का विकास हुआ और पूंजीवाद एवं औद्योगिक क्रान्ति के विकास के साथ ही राष्ट्र राज्यों का विकास हुआ जैसे-भारत, बंगलादेश, पाकिस्तान आदि।

इस प्रकार अगर हम किसी राष्ट्र की बात करते हैं तो राष्ट्र की एक निश्चित सीमा होती है उसकी एक सरकार होती है ओर एक संप्रभुता होती है अर्थात ये तीन कारक राष्ट्र के निर्माण में बहुत उपयोगी होते हैं। अर्थात

एक निश्चित सीमा या भूखंड, एक सरकार व एक संप्रभुता ये तीनों मिलकर राष्ट्र राज्य का निर्माण करती है इस प्रकार राष्ट्र की एक परिभाषा दी जा सकती है।

''राष्ट्र से तात्पर्य विभिन्न प्रजातियों के व्यक्तियों के एक ऐसे समूह से होता है जिसका अपना एक स्वतंत्र भूखण्ड होता है और जिसके सदस्यों में लगभग समान विचार, भाव, भाषा एवं एक सामान्य उद्देश्य होता है''

इस प्रकार अगर हम चरित्र की बात करें तो चरित्र से तात्पर्य व्यक्ति के ऐसे व्यवहार श्रंखला से होता है जिसके संदर्भ में व्यक्ति या उसके व्यवहारों का मूल्यांकन किया जाता है। कई बार हम चरित्र को व्यक्ति के नैतिक आंकलन के रूप में भी परिभाषित करते हैं जिसके द्वारा व्यक्ति का स्वयं से, व्यक्ति का दूसरों से व्यक्तियों के समूह का, दूसरे समूह से आंकलन कर विभिन्नता देखी जाती है। इस प्रकार राष्ट्र एवं चरित्र के अर्थ समझ लेने के पश्चात् विद्यार्थियों के लिए राष्ट्रीय चरित्र को समझना ज्यादा आसान होगा।

राष्ट्रीय चरित्र का पर्यायवाची शब्द रूपात्मक, व्यक्तितव माना जाता है जिस तरह से किसी व्यक्ति का एक निश्चित चरित्र होता है इसी प्रकार राष्ट्र के निवासियों का भी एक निश्चित चरित्र होता है जिसे राष्ट्रीय चरित्र की संज्ञा दी जाती है वास्तव में राष्ट्रीय चरित्र से तात्पर्य विशिष्ट व्यवहार प्रतिमान, मनोवृतियों, विश्वास, मूल्य एवं मानकों आदि से होता है जो एक राष्ट्र के अधिकांश व्यक्तियों में पाया जाता है। अर्थात जब राष्ट्र के अधिकांश व्यक्तियों के व्यवहारों के स्वरूप में एक विशिष्टता दिखाई देती है उनकी मनोवृत्तियों से एक राष्ट्र की छवि झलकती है। उनके मूल्य व विश्वास अपने राष्ट्र के मान्य मूल्यों एवं मानकों के समान हो तो उसे राष्ट्रीय चरित्र कहा जा सकता है।

क्रेच एवं क्रेचफील्ड(1948) कहा कि समाज मनोवैज्ञानिकों ने राष्ट्रीय चरित्र का प्रयोग दो अर्थ में किया है।

राष्ट्रीय चरित्र एक साँख्यकीय सम्प्रत्यय है अर्थात् एक राष्ट्र की जनसंख्या में विभिन्न शीलगुण (जैसे विनम्रता, आक्रामकता मणता, ईमानदारी, बईमानी आदि) के औसत वितरण से होता है अर्थात् देश की औसत जनसंख्या में कोई विशेष गुण या व्यवहार अधिकांश रूप से पाया जाता है तो उसे उस देश की राष्ट्रीय चरित्र माना जाता है।

उदाहरणार्थ-कहा जाता है कि बिट्रेन के राष्ट्रीय चरित्र की तुलना में जर्मनी के राष्ट्रीय चरित्र में विनम्रता अधिक पाई जाती है और भारत के राष्ट्रीय चरित्र में पाश्चात्य देशों की तुलना में धार्मिकता अधिक पाई जाती है।

उपरोक्त उदाहरण किसी राष्ट्र के सामाजिक व्यवहार को प्रदर्शित कर रहा है इस प्रकार हर राष्ट्र की सामाजिक व्यवस्था में विशिष्ठ व्यवहार एवं गुणों का सम्मुचय होता है जो अपने राष्ट्रों की पहचान को भी प्रदर्शित करता है।

क्रेच एवं क्रेचफील्ड के अनुसार दूसरे अर्थो में राष्ट्रीय चरित्र से तात्पर्य किसी देश के संगठनों में सामाजिक व्यवहार के विशिष्ट प्रतिमानों से होता है इस प्रकार किसी एक देश का व्यवहार प्रतिमान लोकतांत्रिक हो सकता है तो दूसरे देश का व्यवहार प्रतिमान निरंकुश हो सकता है। इसे समझने के लिए ऐसे भी पढ़ा जा सकता है अगर

राष्ट्र में लोकतांत्रिक व्यवस्था है हर कोई अपने अधिकारों के प्रतिजागरूक है और दूसरों के अधिकारों के प्रति संवेदनशील तो इसी व्यवस्था में राष्ट्रीय चरित्र के रूप में संवेदनशीलता एवं लोकतांत्रिकता का शीलगुण अधिक पाया जायेगा। इसके विपरीत अगर देश की व्यवस्था निरंकुश है शोषण उत्पीड़न आक्रमकता ज्यादा है तो उस देश के राष्ट्रीय चरित्र में आक्रमकता एवं निरंकुशता अधिक देखने को मिलेगी।

राष्ट्रीय चरित्र के संदर्भ में उपरोक्त दोनों प्रकारों को हम अलग-अलग परिपेक्ष्य में नहीं देख सकते ये दोनों प्रकार एक दूसरे से गुथे हुए प्रतीत होते हैं। इसी संदर्भ में कलाईनवर्ग **1944** ने कहा है ‘‘राष्ट्रीय चरित्र के ये दोनों अर्थ ठीक हैं और वो एक दूसरे से स्वतंत्र भी नहीं हैं देश के व्यक्तियों के शीलगुण से सामाजिक प्रतिरूप तैयार होता है तथा सामाजिक संगठनों द्वारा भी सदस्यों के शीलगुण का प्रतिरूप निर्धारित होता है।‘‘ जैसे देश के बहुत से व्यक्ति जब अपने व्यवहार की विशेषताओं के साथ एक दूसरे मिलते हैं तो एक सभ्य समाज का निर्माण होता है और जब एक समाज या संगठन का निर्माण हो जाता है जो समाज यह तय करता है कि उसके सदस्य नियमों नैतिक मूल्यों परम्पराओं, विश्वासों आदि के लिए वो अपने सदस्यों को बाल्यकाल से ही प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से सामाजिक नियमों का प्रशिक्षण देते हैं तांकि उनमें उन्हें चारित्रिक गुण या शीलगुण विकसित हों। इसलिए राष्ट्रीय चरित्र को सांख्यिकीय एवं सामाजिक दोनों अर्थो में अलग-अलग देखना उचित नहीं है।

राष्ट्रीय चरित्र के लिए हमेशा यह बहस रहती है कि यह स्थायी होता है या अस्थायी मैकडूगंज 1910- ने अपनी किताब गुरप माईन्ट में कहा है कि राष्ट्रीय चरित्र निश्चित एवं स्थायी होता है। परन्तु समाज मनोवैज्ञानिकों एवं मानवशास्त्री यह स्वीकार करते हैं कि राष्ट्रीय अस्थायी एवं परिवर्तनशील होता है यह राष्ट्र भौगोलिक, सांस्कृतिक, धर्म, भाषा राजनैतिक एवं आर्थिक आदि परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित भी होता है और अस्थायी भी होता है।

6.4 राष्ट्रीय चरित्र के निर्धारक

जैसा कि हम अपने सामान्य जीवन के देखते हैं कि विभिन्न देशों का राष्ट्रीय चरित्र अलग-अलग होता है राष्ट्रीय चरित्र के सम्प्रत्तम को ठीक से समझने के लिए आवश्यक है कि उन कारकों को जाने जिनसे किसी देश के राष्ट्रीय चरित्र प्रभावित होता है। इस संदर्भ में समाज मनोवैज्ञानिकों के अध्ययनों से कुछ तथ्य प्राप्त हुए हैं जो राष्ट्रीय चरित्र के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

6.4.1 भौगोलिक कारक -

राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में भौगोलिक कारक प्रभावित करते हैं देश के किसी भूखण्ड, आकार, उसकी जलवायु उसकी आन्तरिक संरचना ये सभी कारक देश के चरित्र का निर्धारण करने में मदद करते हैं समाज मनोवैज्ञानिकों ने अपने अध्ययनों में यह स्पष्ट किया है कि भौगोलिक वातावरण का किसी देश के राष्ट्रीय चरित्र पर प्रभाव पड़ता है।

उदाहरण- मीड 1933 ने अपने अध्ययन मे पाया कि न्यू गिनिया के राष्ट्रीय चरित्र में दो तरह के विरोधी शीलगुण पाये जाते हैं जो वहां की दो प्रकार की भौगोलिक स्थिति के कारण है देश के एक तरह का भूखण्ड चारों तरफ से ऊँचे-2 पहाड़ों से भिन्न है इस भूखण्ड में रहने वाले लोग सहयोगी एवं शान्त प्रवृत्ति के हैं जबकि देश का दूसरा हिस्सा खुला अथवा मैदानी है वहाँ के लोगों में आक्रामकता अधिक पाई जाती है और ये श्रद्धालु अधिक हैं अतः कहा जा सकता है कि भौगोलिक कारक राष्ट्रीय चरित्र अधिक प्रभावित करते हैं।

उत्तराखण्ड के परिपेक्ष्य मे भी इस तरह का वातावरण देखने को मिलता है हिमालय एवं शान्त पहाड़ों में रहने वाले सीधे सरल स्वभाव के दिखाई देते हैं जबकि मैदानी व गरम क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के व्यवहार में आक्रामकता अधिक प्रतीत हुए है हॉलाकि कोई प्रयोगात्मक अध्ययन नहीं हुए हैं।

6.4.2 सामाजिक कारक -

सामाजिक कारकों का राष्ट्रीय चरित्र प्रभावित करने में महत्वपूर्ण योगदान होता है समाज या समूह में व्याप्त संस्कृति, पालन-पोषण का तरीका परमपरायें विश्वास अभिवृत्ति सामाजिक वातावरण आदि व्यक्तित्व को प्रपिल प्रभावित करते हैं इसलिए प्रत्येक देश के सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश के अनुसार ही व्यक्तित्व विकसित होता है। किसी देश के एक से अधिक जाति के लोग रहते हैं अगर भारत को ही देखें तो भारत में विभिन्न जातियाँ रहती हैं जो विभिन्न भाषायें बोलती हैं जिनके धर्म, भाषा संस्कृति में भी विभन्नता देखने को मिलती है। उदाहरण- भारत के राष्ट्रीय चरित्र में धार्मिकता, सहनशीलता, भाग्यवादिता देखने को ज्यादा मिलती है और यह गुण सभी प्रजातियों में पाया जाता है सांस्कृतिक विभिन्नता होने के बाद भी राष्ट्रीय चरित्र की जहाँ बात आती है तो सभी प्रजातियों में कुछ गुण समान रूप से देखे जा सकते हैं।

6.4.3 आर्थिक कारक -

यदि देश आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर है वहाँ उद्योग, व्यवसाय, कृषि तकनीक काफी उन्नत हैं तो वहाँ के राष्ट्रीय चरित्र में आत्मनिर्भरता, आत्मविश्वास व आक्रामकता ज्यादा देखने को मिलती है परन्तु यदि अविकसित देश है लोगों की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है भूख व गरीबी है तो राष्ट्रीय चरित्र में दूसरों पर निर्भरता, आत्मविश्वास की कमी तथा धार्मिक विश्वास व भागयवादिता ज्यादा देखने को मिलते हैं इसलिए आर्थिक सम्पन्नता के कारण अमेरिकन एवं बांग्लादेशी का राष्ट्रीय चरित्र भिन्न होगा इस प्रकार हम कह सकते हैं कि आर्थिक कारणों से दो देशों के राष्ट्रीय चरित्र में मिन्नता है। आर्थिक कारण व्यक्ति के मनोविज्ञान में परिवर्तन लाता है जो राष्ट्रीय चरित्र में परिलक्षित होता है।

6.4.4 आर्थिक राजनैतिक कारक -

राजनैतिक कारक देश के राष्ट्रीय चरित्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं प्रत्येक राष्ट्र की एक सरकार होती है और उसका अपना संविधान होता है अगर सरकार लोकतांत्रिक है तो उस देश के राष्ट्रीय चरित्र में उदारता, सहयोग एवं सहभागिता ज्यादा देखने को मिलती है इसके विपरीत अगर सरकार तानाशाह तो लोगों के चरित्र में दब्बूपन

एवं संकीर्णता की प्रधानता होती है। फिशर **1983** के अनुसार ऐसे देश के राष्ट्रीय चरित्र में आक्रामकता अधिक होती है क्योंकि वहाँ के लोगों में निराशा एवं कुंठा का स्तर अधिक होता है। उदाहरण- लिबिया के लोगों ने लम्बे समय से तानाशाही सहते हुए अपने तानाशाह गद्दाफी के खिलाफ आक्रमक प्रदर्शन किया जो उपरोक्त गुणों को प्रदर्शित करता है।

6.4.5 धार्मिक कारक -

राष्ट्रीय चरित्र के निर्माण में धर्म भी बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं विभिन्न धर्मो को मानने वाले लोगों में अलग-अलग तरह के राष्ट्रीय गुण विकसित होते हैं धर्म के मानक मूल्य एवं विश्वास आदि व्यक्ति को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है अगर कोई धर्म अपने अनुयायियों को नियमों को सख्ती के लिए प्रेरित करता है तो उस स्थिति में उस धर्म के लोगों में कट्टरता दिखाई देगी और राष्ट्रीय चरित्र में कट्टरता के गुण दिखाई देंगे, इसी प्रकार धर्म मानवता, सहिष्णुता, उदारता के गुणों को अपनाने को प्रेरित करता है तो राष्ट्रीय चरित्र के उन गुणों की प्रधानता रहती है जैसे बौद्ध धर्म व ईसाई धर्म में मानवता के गुण ज्यादा दिखाई देते हैं क्योंकि बौद्ध, ईसाई धर्म को मानने वाले लोगों में मानवता एवं गतिशीलता का गुण ज्यादा विकसित होता है जबकि हिन्दू धर्म के मानने वाले लोगों के राष्ट्रीय चरित्र में आध्यात्मिकता, भाग्यवादिता, सहनशीलता एवं समायोजन के गुण अधिक देखने को मिलता है।

6.5 राष्ट्रीय चरित्र के सिद्धान्त या उपागम

राष्ट्रीय चरित्र की व्याख्या करने के लिए विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने कई सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है जिनमें प्रमुख निम्नांकित हैं-

6.5.1 मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त –

सिग्मण्ड फ्राइड **(1856-1939)** का जन्म चेकोस्लाविया में हुआ **1885** में पेरिस जाकर उन्होंने न्यूरोलॉजी का अध्ययन् किया वो मूलतः एक चिकित्सक थे पर चिकित्सा के दौरान रोगियों को देखते-देखते उन्हें लगा कि व्यक्ति शारीरिक रूप से अस्वस्थ नहीं होता पर मानसिक रूप से अस्वस्थ होने पर भी उसका प्रभाव शारीरिक होता है उन्होंने ब्राउन के साथ मिलकर हिस्टीरिया का अध्ययन किया फ्राईड द्वारा प्रतिपादित मनोविश्लेषणात्मक प्रत्यय मनोविज्ञान का एक चिकित्सा मनोविज्ञान का पहला व्यापक सिद्धान्त है जिसमें मानव व्यवहार की व्याख्या अतल गहराईयों को स्पर्श करती हैं। उन्होंने अपने सिद्धान्त में व्यक्तित्व को गति दी। व्यक्तित्व संरचना और व्यक्तित्व के विकास का वर्णन किया है चूंकी मानव को शीलगुणों का विकास मनोलैंगिक अवस्थाओं द्वारा नियंत्रित होता है तो व्यक्तित्व की संरचना एवं गतिकी पर हम संक्षिप्त में चर्चा कर मनोवैज्ञानिक विकास का अवस्थाओं पर अपनी अधिक चर्चा करेंगे तांकि विद्यार्थी यह जान सके कि चारित्रिक, शीलगुणों का विकास एवं नियंन्त्रण के लिए कौन सी अवस्थायें प्रमुख हैं।

मन का सिद्धान्त या व्यक्तित्व संरचना

फ्राईड का कहना है कि मस्तिष्क के विभिन्न भागों का केन्द्र मन है का प्रत्यय एक प्रकार का परिकल्पनात्मक प्रत्यय है उसके दो भाग हैं-

- **मन का गत्यात्मक पक्ष**-इसमें तीन तत्व आते हैं (क) इदम- बचपन में मानव शिशु का मन पूर्णता इड होता है अतः इड जन्मदाता व वंशानुगत हैं इड सुख के सिद्धान्त पर आधारित है यह तुरन्त सुख चाहता है उसके लिए कुछ भी करते को तैयार हो जाता है।

अहम- अहम से तात्पर्य आत्म या चेतन बुद्धि है इसका सम्बन्ध एक ओर बाह्य वास्तविकता से होता है दूसरी ओर इड से होता या व्यक्ति का ईच्छाओं की पूर्ति भौतिक एवं सामाजिक वास्तविकता के संदर्भ में करता है यह वास्तविका के सिद्धान्त पर आधारित है।

पराहंम मानव का यह पक्ष सबसे बाद में विकसित होता है यह नैतिक पक्ष है यह इगो के उन सभी कार्यों पर रोक लगाती है जो असामाजिक व अनैतिक कार्यों पर रोक लगाता है पराहंम को नैतिकता का सिद्धान्त भी कहा जाता है यह मानव के पूर्ण सामाजिक एवं आदर्श बनाने का प्रयास करता है।

- **मन का स्थलाकृतिक पक्ष -**

फ्राईड के अनुसार विभिन्न मानसिक प्रक्रियायें तीन स्तरों पर होती है-

चेतन मन का वह भाग जिसका सम्बन्ध तुरन्त ज्ञान से है चेतना कहलाता है। व्यक्ति जिन शारीरिक एवं मानसिक क्रियाओं के प्रति जागरूक होता है यह चेतन स्तर पर घटित होती है।

अवचेतन फ्राईड के अनुसार यह मन का वह भाग है जिसका सम्बन्ध ऐसी विषय सामग्री से होता है जिसे व्यक्ति ईच्छानुसार कभी भी याद कर सकता है। अवचेतन को विषय सामग्री को चेतन में लाने के लिए व्यक्ति को प्रयास करने पड़ने हैं और यह स्मृति के द्वारा लाई जाती है।

अचेतन अचेतन जो चेतन से परे हैं यह मन का वह भाग है जिसमें ऐसी विषय सामग्री होती है जिसे व्यक्ति याद करके चेतना में लाना भी चाहे तो भी नहीं ला सकता है अचेतन मन में वह विचार व ईच्छाऐं होती हैं जो अनैतिक होती है। ऐसा नहीं है कि ये विषय सामग्री चेतना में आने का प्रयास नहीं करती। कई बार रूप से बदलकर चेतना में आती है अचेतन में तर्क एवं नैतिकता का कोई स्थान नहीं होता है।

हम पहले भी बता चुके हैं कि मानव का व्यवहार एवं शीलगुणों का विकास कुछ प्रमुख अवस्थाओं द्वारा होता है उसके लिए फ्राईड ने एक सिद्धान्त दिया है जिसकी चर्चा हम कर रहे हैं।

- **मनोलौंगिक विकास की अवस्थायें -**

फ्राईड ने कहा है कि मनुष्य का व्यवहार एवं उसके चारित्रिक गुणों का विकास एवं नियन्त्रण मनोलैंगिक अवस्थाओं द्वारा होता है फ्राईड ने मानव विकास में उसके प्रारम्भिक वर्षो को अधिक महत्व दिया है उनका यह

सिद्धान्त केवल वयस्कों के मनोविश्लेषण पर आधारित नहीं है बल्कि बाल्यावस्था के घरेलू मानव सम्बन्धों के निरीक्षण पर भी आधारित है फ्राईड मनोलौगिक विकास की पाँच अवस्थायें बताई जो निम्न हैं :-

(i) **मुखीय अवस्था** (Oral Stage)**-** यह अवस्था जन्म से **18** माह तक की अवस्था है इस अवस्था को दो भागों में बांटा गया है।

- **मुखीय चूषण** (Oral Sucking)- यह जन्म से लेकर **8** माह की अवस्था है इस अवस्था में बच्चा सुख की अनुभूतियाँ स्तनपान द्वारा करता है। फ्राईड के अनुसार बालक की काम शक्ति की सन्तुष्टि**,** मुख**,** होंठ**,** जीभ के द्वारा चूसने से एवं निगलने की क्रिया से प्राप्त होती है इस अवस्था में बालक का पूर्ण शरीर इदम् का बना होता है इस अवस्था में व्यक्तित्व विकास का मुख्य निर्धारक इडिपस ग्रन्थि की उत्पत्ति का सूत्रपात होता है फ्राईड का विचार है कि जब माँ बच्चे को तिरस्कृत भाव से स्तनपान कराती है या जब वह बच्चे का स्तनपान एकाएक छुड़ा देती है तो शिशु पर इस प्रकार का मनोवैज्ञानिक आघात उसके व्यक्तित्व में विकृति उत्पन्न करता है ऐसे बच्चों में बड़े होने पर उनमें मनोविफलता**,** उत्साह विषाद**,** आदि चारित्रिक दोष उत्पन्न हो जाते हैं।
- **मुखीय दशंन अवस्था** (Oral biting stage)- यह छः माह से अठारह माह तक की अवस्था है इस उम्र में दॉत निकलने लगते हैं दॉत निकलने पर बच्चा आक्रामक व्यवहार प्रदर्शित कर सकता है इस अवस्था में लिबिडो का क्षेत्र दॉत व जबड़े होते हैं इस उम्र में बच्चे का व्यवहार मॉ के प्रति उभयवादी होता है वह मॉ से प्रेम करता है**,** क्योंकि मॉ उसकी इच्छाओं की पूर्ति करती है बच्चा मॉ से घृणा भी करता है क्योंकि कई बार मॉ उस पर ध्यान नहीं दे पाती है। डेढ़ वर्ष की अवस्था तक बालक में इगो का विकास तेजी से होने लगता है बच्चा यह स्वीकार करने लगता है कि वह अपने माता-पिता का केन्द्र नहीं है बालक का व्यवहार सुख के नियम की अपेक्षा वास्तवितकता के नियम से नियन्त्रित होता है उसे बाह्य वातावरण की वास्तविकता का ज्ञान होने लगता है।

(ii) **गुदीय अवस्था** (Anal Stage)- यह आठ माह से **4** वर्ष तक की आयु की अवस्था है इसमें बालक की यौन सन्तुष्टि का केन्द्र गुदा होता है इस अवस्था को दो भागों में बांटा गया है।

- **गुदा निष्कासन अवस्था** (Anal Expulsivestage)- यह आठ माह से **3** वर्ष तक की आयु की स्थिति है बच्चे को यौन सुख की प्राप्ति गुदा निष्कासन में होती है इस उम्र में उसे शौचालय का प्रशिक्षण दिया जाता है अगर शौचालय के नियमों में कठोरता उत्पन्न की जाती है तो बच्चे के मन में अपराध भाव उत्पन्न होता है जो मानव के विकास में बाधक सिद्ध होते हैं। इस उम्र में बच्चा दो लिगों में अन्तर समझने लगता है और बालक यह कल्पना करता है कि वह बड़े होकर पिता बनेगा और लड़की यह कल्पना करती है कि वह बड़ी होकर मॉ बनेगी अर्थात इंडिपस काम्पलैक्स का निर्माण इस अवस्था में शुरू हो जाता है। इसलिए इस अवस्था से अन्तर्द्वन्द भी प्रारम्भ होते हैं।

- **गुदा अवधारणा अवस्था** (Anal Retentive Stage)- एक से चार वर्ष की अवस्था होती है इस उम्र में बच्चे का अह्म विकसित हो जाता है और पराहंम का विकास होने लगता है इस उम्र में उसकी यौन सन्तुष्टि में डाली गयी बॉधा बाद में अनेक मानसिक रोगों के लक्षण उत्पन्न कर सकती है। जैसे-परानोईया चरित्र दोष आदि प्रतिदिन मल-मूत्र कार्य में रूचि कब्ज, मल त्याग में आनन्द आदि सामान्य व्यवहार व्यक्ति में आगे चलकर उदात्तीकरण व्यवहार उत्पन्न करते हैं ब्राउन का मतह कि मूर्तिकार, दानी, पेण्टर आदि इस मनोरचना के व्यवहार के कारण होते हैं।

(3) **लैंगिक अवस्था** (Phalic Stage)**-** यह अवस्था तीन वर्ष से सात वर्ष है धन उम्र में बालक अपनी ज्ञानैन्द्रियों को छूने तथा उसके साथ खेलने में रूचि लेता है। माता-पिता द्वारा अगर जनैन्द्रिय से खलने से अत्यधिक मना किया जाय और इसे गन्दा बताया जाय तो आगे चलकर मनस्ताप एवं हिस्ट्रीरिया आदि जैसे मानसिक रोग उत्पन्न हो सकते हैं। इस उम्र में अगर उदात्तीकरण मनोरचना उत्पन्न हो जाती है तो आगे चलकर व्यक्ति कविता प्रेम अभिनय, पवित्र क्षेत्र का प्रतीक बनता है।

(4) **सुप्तावस्था** (Latency Stage)- यह **5** से **12** वर्ष तक की आयु है इस उम्र में कामजनित क्रियायें प्रायः शान्त रहते हैं और बच्चों का बौद्धिक एवं नैतिक विकास होता है इस अवस्था में पराहंम पूरी तरह विकसित हो जाता है इस अवस्था में उदात्तीकरण व प्रतिक्रिया निर्माण मनोरंचना के कारण बालक के सभी व्यवहार समाज की मान्यताओं के अनुसार परिवर्तित हो जाते हैं।

(5) **जननेन्द्रिय अवस्था** (Genital Stage)- यह **12** से **20** वर्ष की अवस्था है इस उम्र में यौन अंगों के विकास पूर्णता की ओर अग्रसर होता है विपरीत लिंग के प्रति रूचि एवं आकर्षण होता है मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि यौन तृप्ति विषयक विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण सामान्य व्यवहार है यदि व्यक्ति काम क्रिया को तिरस्कार करता है तो समाज, कला, विज्ञान के क्षेत्र में कार्य करता है।

फ्राईड द्वारा दिये गये उपर्युक्त पांचों अवस्थाओं में से प्रारम्भिक तीन अवस्थायें सुखीय, गुदीय, ओर लैंगिक चारित्रिक विकास में प्रमुख है। प्रारम्भिक बाल्यावस्था के इन प्रकारों से व्यक्तित्व में बहुत से शीलगुणों का विकास होता है आधुनिक समाज मनोवैज्ञानिकों ने फ्राईड के इस सिद्धान्त का उपयोग रूपात्मक व्यक्तित्व की व्याख्या करने में किया है।

गौरेर तथा रिकमैन **1949** टर्नर **1960** ने रूपतामक व्यक्तित्व (माडल परसैनलिटी) को व्याख्या मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त से किया और कहा है यहाँ के बच्चों का पालन-पोषण की प्रणाली ऐसी है कि उन पर कहा नियन्त्रण प्रारम्भ से ही रखा जाता है जिसके फलस्वरूप उनके राष्ट्रीय चरित्र में अनुशासन हठधर्मिता एवं सत्तावादी जैसे शीलगुण की प्रधानता होती है।

टर्नर **1971-**ने जापनी लोगों के राष्ट्रीय चरित्र में साफ-सुथरा एवं परिश्रमी होने का कारण उनके माता-पिता द्वारा बचपन में विशेष शौचालय प्रशिक्षण देने के कारण बताया।

(सिन्हा **1979,** पांडे एवं त्रिपाठी-**1984)** ने अपने अध्ययन में भारत के राष्ट्रीय चरित्र में भाग्यवादिता, संवेगात्मक असुरक्षा, आध्यात्मिक एवं सहनशीलता के गुणों की प्रधानता का कारण भारतीय माताओं द्वारा बच्चों के पालन-पोषण में कई तरह के अन्धविश्वास एवं उदारता की उपस्थिति बताया है उपरोक्त अध्यय्नों से स्पष्ट है कि राष्ट्रीय चरित्र की व्याख्या में मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त उपयुक्त हैं)

6.5.2 क्षेत्र सिद्धान्त -

कर्ट लेविन (**1890-1947)** का जन्म बर्लिन में हुआ **1914** में बर्लिन विश्वविद्यालय से मनोविज्ञान में डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त की। **1926** में बर्लिन विश्वविद्यालय में दर्शन एवं मनोविज्ञान के प्रोफेसर संयुक्त हुए सन् **1944** में मेसाच्युशन इंस्टीट्यूट पद पर नियुक्त हुए। लेविन ने क्षेत्र सिद्धान्त का प्रतिपादन गणित की एक विशेष शाखा संस्थितविज्ञान की सहायता से किया है। राष्ट्रीय चरित्र एवं रूपतामक माडल की व्याख्या लेविन के क्षेत्र सिद्धान्त द्वारा की गई है। प्रश्न यह उठता है कि पहले हम क्षेत्र सिद्धान्त क्या है यह जाने -

क्षेत्र सिद्धान्त क्या है-

लेविन ने व्यक्तित्व की संरचना एवं शीलगुणों के विकास के सन्दर्भ में एक सूत्र दिया और कहा कि व्यवहार व्यक्ति एवं वातावरण की अन्तःक्रियाओं का परिणाम है आगे इस प्रकार हम देखते हैं कि लेविन ने व्यक्तित्व के शीलगुणों के निर्माण की सम्पूर्ण व्याख्या में वातावरण की भूमिका को प्रमुख स्थान दिया है वातावरण को दो भागों में बॉटा है-

- भौतिक वातावरण-से तात्पर्य व्यक्ति के इर्द-गिर्द के वातावरण से होता है
- मनोवैज्ञानिक वातावरण- से तात्पर्य भौतिक वातावरण से व्यक्ति में उत्पन्न चिन्तन प्रत्यक्षण भाव संवेग आदि से होता है।

कर्ट लेविन का कहना है कि दो लोगों के भौतिक वातावरण समान होने पर भी उनके मनोवैज्ञानिक वातावरण में अन्तर हो सकता है और इसके कारण चरित्र में अन्तर हो जाता है और इसके कारण चरित्र में अन्तर हो जाता है इसी कारण समाज मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि दो देशों के भौतिक वातावरण में समानता होने पर भी उनके राष्ट्रीय चरित्र में अन्तर होता है। अर्थात भौतिक वातावरण समान होने पर भी राष्ट्र के व्यक्ति उस वातावरण के सम्बन्ध में क्या सोचते हैं विचारते हैं इन भौतिक वस्तुओं का प्रत्यक्षीकरण कैसे करते हैं उनके संदर्भ में कौन से संवेदों की अभिव्यक्ति करते हैं यह व्यक्ति विशेष व राष्ट्र पर निर्भर करता है। जैसे-अमेरिका व बिट्रेन में भौतिकवाद की प्रबलता के बाद भी दोनों के मनोवैज्ञानिक वातावरण में अन्तर है जैसे कहा जाता है कि अमेरिकन बर्हिमुखी प्रवृत्ति के होते हैं और बिट्रेन के निवासी अर्न्तमुखी प्रकार के होते हैं।

कर्ट लेविन के सिद्धान्त के पूर्णरूपेण एक सफल सिद्धान्त नहीं कहा जा सकता है। इस सिद्धान्त का सबसे बड़ा दोष यह है कि इसमें भौतिक वातावरण की उपेक्षा की गई है, वास्तविकता यह है कि किसी भी देश

की भौतिक समृद्धि वहाँ के लोगों में विशेष आदतों का निर्माण करती है। विशेष प्रेरणा बनती है ओर ऐसी आदतों एवं प्रेरणाओं का महत्त्व राष्ट्रीय चरित्र निर्माण में होता है।

इस सिद्धान्त में राष्ट्रीय चरित्र के निर्माण में वर्तमान एवं भविष्य पर अधिक बल डाला गया है तथा अतीत का तुलनात्मक रूप से उपेक्षा की गई है

B= f(P*E)

B= व्यहार (Behaviour)

f= प्रकार्य (Function)

P= वातावरण (Environment)

लेविन ने **P** और **E** को कोष्ठक रखके यह संकेत दिया है कि व्यक्ति और वातावरण का अटूट सम्बन्ध है। जबकि समाज मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि राष्ट्रीय चरित्र को समझने के लिए अतीत की घटनाओं व अनुभवों की भूमिका प्रधान होती है।

उपरोक्त आलोचनाओं के पश्चात् क्षेत्र सिद्धान्त को परिपूर्ण सिद्धान्त मानना उचित नहीं है।

6.5.3 शिक्षण सिद्धान्त -

राष्ट्रीय चरित्र का यह सिद्धान्त व्यवहारवादियों के प्रयासों का परिणाम है व्यवहारवाद के संस्थापक जान**0**बी**0**वाटसन है लेकिन व्यवहारवाद को आगे बढ़ाने में क्लार्क, एल**0**हल, बी**0**एफ**0** स्किनर, सी**0**, टालमैन आदि मनोवैज्ञानिकों ने महतवपूर्ण भूमिका निभाई है।

इस सिद्धान्त के अनुसार सामान्य वातावरण तथा उसमें प्राप्त प्रशिक्षण, सीखे गये कौशल तथा आदत आदि के आधार पर ही व्यक्ति के राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण होता है। इस सिद्धान्त के अनुसार सामाजीकरण के साधन जैसे माता-पिता, परिवार, स्कूल, शिक्षक, पासपड़ोस आदि से व्यक्तियों के जो सीखने का अवसर मिलता है उसकी भूमिका राष्ट्रीय चरित्र के निर्माण में सर्वाधिक रहती है।

इस सम्बन्ध में प्रमुख व्यवहारवादी एलवर्ट पी**0**बीस**0** ने कहा है-‘‘ नवजात शिशु केवल जैविक प्राणी होता है और ज्यौ-ज्यों उसका विकास होता है उसका व्यवहार बदलता लाता है मनोविज्ञान का प्रमुख कार्य यह है कि वह अध्ययन करे मानवीय व्यवहार पर समाज का क्या प्रभाव पड़ता है।‘‘ व्यवहार हमेशा जैविक तथा सामाजिक होता है और सामाजीकरण के प्रशिक्षण से ही राष्ट्रीय चरित्र में विभिन्न प्रकार के शीलगुण विकसित होते हैं।

उदाहरणार्थ- एक अमेरिकन के राष्ट्रीय चरित्र में प्रतियोगिता की भावना अधिक होती है इसका प्रमुख कारण यह है कि वहाँ का सामाजिक वातावरण ऐसा होता है जहाँ प्रत्येक क्षेत्र में कार्य प्रतियोगिता की भावना से कराये जाते हैं।

शिक्षण सिद्धान्त के अनुसार राष्ट्रीय चरित्र के निर्माण में अनुबन्धन की भूमिका भी प्रधान होती है अर्थात राष्ट्रीय चरित्र के निर्माण में पुरसकार एवं दण्ड भी महत्वपूर्ण होते हैं इस सम्बन्ध में मनोवैज्ञानिकों में काफी अध्ययन किये हैं।

काडीर्नर **1932** ने अपने अध्ययन में बतलाया कि यदि संस्कृति ऐसी है जिसमें बच्चों के व्यवहारों को दण्डित कर उसे सुधारने में विश्वास किया जाता है तो उसके राष्ट्रीय चरित्र में आक्रामकता, उदण्डता, उत्तरदायित्व, हीनता आदि शीलगुण अधिक पाये जाते हैं। दूसरी तरह जब संस्कृति में बच्चों के व्यवहारों को पुरूष्कृत करके उसके प्रति स्नेह एवं प्रेम भाव दिखा कर उनके व्यवहारो को उन्नत बनाने की कोशिश की जाती है तो उनके राष्ट्रीच चरित्र में आत्मविश्वास, आत्मसम्मान, उदारता जैसे शीलगुण विकसित होते हैं।

उपरोक्त अध्यय्न से यह स्पष्ट कि कि सामाजीकरण की प्रक्रिया में पुरुषकार एवं दण्ड किसी राष्ट्र के राष्ट्रीय चरित्र में परिवर्तन करने में कितने सक्षम होते हैं यही कारण है कि आधुनिक युग में शिक्षण सिद्धान्त के अनुसार ही छोटे बच्चों के विद्यालयों में दण्ड का प्रावधान समाप्त कर उन्हें पुरसकार देकर उनकी सीखने की क्षमता को बढ़ाया जा रहा है तांकि राष्ट्र को अच्छे नागरिक प्राप्त हों।

कुछ विद्वानों का मत है कि शिक्षण सिद्धान्त में राष्ट्रीय चरित्र की व्याख्या मात्र सामाजिक कारकों के आधार पर की गई है लेकिन वास्तविकता यह है कि राष्ट्रीय चरित्र के निर्माण में जैविक कारक भी महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं इस सिद्धान्त में जैविक कारकों की उपेक्षा कर उसे एक पक्षीय बना दिया गया है।

6.5.4 प्रेरणात्मक सिद्धान्त -

इस सिद्धान्त का आधार प्रेरणा के क्षेत्र में किये गये अध्य्यन हैं इन अध्ययनों को जानने से पूर्व अभिप्रेरणा को जानें।

अभिप्रेरणा क्या है- अभिप्रेरणामानक वह जन्मजात एवं अर्जित प्रवृत्ति है जिससे वह किसी जन्मजात एवं अर्जित उद्देश्य के लिए कार्यशील रहता है और लक्ष्य को प्राप्त करने पर ही सन्तुष्ट होता है।

वुडवर्थ - ‘‘अभिप्रेरक व्यक्ति की वह अवस्था है जो उसे किसी प्रकार का व्यवहार करने के लिए तथा किन्हीं लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए निर्देशित करती है।’’

इस प्रकार कहा जा सकता है कि अभिप्रेरणा किसी मानव में किसी विशेष लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कोई क्रिया उत्पन्न करती है क्रिया को किसी दिशा विशेष में प्रभावित करती है और जब तक लक्ष्य प्राप्त नहीं हो जाता तब तक उसे जारी रखती है। इस प्रकार अभिप्रेरणा जैविक व सामाजिक दोनों ही होती है।

अभिप्रेरणा के क्षेत्र में किये गये अध्यय्नों में मैकक्लिलैण्ड **1961 - 1972** एवं एटकिन्सन द्वारा किये गये अध्ययन काफी लोकप्रिय हैं इन लोगों ने अपने अध्ययनों में यह स्पष्ट किया है कि व्यक्ति में प्रेरणा विशेषकर उपलब्धि प्रेरणा तथा आर्थिक क्रियाओं में गहरा सम्बन्ध है । प्रायः यह देखा है कि उपलब्धि प्रेरणा अधिक होने से आर्थिक सम्पन्नता में वृद्धि होती है। मैकक्लिलैण्ड ने यह भी अपने अध्ययनों में पाया कि अमेरिकन समाज में

उपलब्धि प्रसंगों में वृद्धि होने से आर्थिक सम्पन्नता में वृद्धि होती पाई गयी। ऐसे सम्बन्धों का राष्ट्रीय चरित्र के निर्माण में अधिक प्रभाव पड़ता है। आर्थिक सम्पन्नता रहने पर अन्य शीलगुणों के अतिरिक्त आत्मनिर्भरता, आत्मसम्मान, अहंकारित के शीलगुण की प्रधानता होती है।

बेकर तथा होमैन **1978** द्वारा किये गये अध्ययनों के अनुसार राष्ट्रीय चरित्र के निर्माण में संज्ञात्मक पहलुओं की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है उनका कहना है कि बच्चे प्रेरणात्मक शक्ति के कारण कुछ विशेष सामाजिक मूल्यों एवं विश्वासों के साथ तादात्मय स्थापित कर लेते हैं इसका परिणाम यह होता है कि उनमें विशेष तरह के शीलगुण का विकास हो जाता है जो आगे चलकर राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण कर लेता है उदाहरणार्थ- भारतीय राष्ट्र चरित्र में अहिंसा, सहनशीलता, परोपकारिता, भाग्यवादिता आदि के गुण विकसित होते हैं और इन गुणों की झलक उसके राष्ट्रीय चरित्र में मिलने लगती है। इसी प्रकार एक अमेरिकन बच्चा अपने जीवन के प्रारम्भिक काल से ही कुछ ऐसे विश्वासों एवं मूल्यों के साथ तादात्म्य स्थापित कर लेता है जिसमें आकांक्षी, बुद्धिमान, प्रगतिशील उसके राष्ट्रीस चरित्र में मिलने लगती है हालाकि इस प्रकार के जो उदाहरण हैं उनके प्रयोगात्मक अध्ययनों की अभी काफी कमी है निश्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि राष्ट्रीय चरित्र की व्याख्या करने के लिए कई सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है परन्तु इन सिद्धान्तों की मान्यता मनोवैज्ञानिकों के मध्य अभी कम है क्योंकि इनके पक्ष में प्रयोगात्मक सबूतों की कमी है।

6.6 सारांश

राष्ट्रीय चरित्र एक नवीन जटिल अवधारणा है राष्ट्रीय चरित्र के निर्माण में राष्ट्र के विभिन्न संगठनों एवं समुदाय के लोगों के विश्वासों, विचारों मूल्यों एवं मानकों आदि का एक संयुक्त योगदान होता है। राष्ट्र के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक क्षेत्रों में परिवर्तन होने पर राष्ट्रीय चरित्र में भी परिवर्तन के लक्षण दिखाई देते हैं। प्रत्येक देश का राष्ट्रीय चरित्र अलग-अलग होता है इस विभिन्नता के कारक एक नहीं अपितु अनेक हैं।

हर राष्ट्र की अपनी एक सीमा होती है उसका अपना भौगोलिक क्षेत्रफल राष्ट्रीय चरित्र के निर्माण में भौगोलिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक आदि तमाम कारकों का प्रभाव पड़ता है यही कारण है कि अलग-अलग देशों के राष्ट्रीय चरित्र में विभिन्नता होती है। राष्ट्रीय चरित्र के सन्दर्भ में बहुत से मनोवैज्ञानिकों ने अपने सिद्धान्त दिये हैं मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त शिक्षण सिद्धान्त, अभिप्रेरणात्मक सिद्धान्त एवं क्षेत्र सिद्धान्त मुख्य हैं।

6.7 शब्दावली

- **राष्ट्रीय चरित्र:** से तात्पर्य किसी देश के संगठनों में सामाजिक व्यवहार के विशिष्ट प्रतिमानों से होता है इस प्रकार किसी एक देश का व्यवहार प्रतिमान लोकतांत्रिक हो सकता है तो दूसरे देश का व्यवहार प्रतिमान निरंकुश हो सकता है।

6.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. राष्ट्रीय चरित्र का पर्यायवाची शब्द है -

(अ) महत्त्वाकांक्षी व्यक्तित्व (ब) अन्तर्मुखी व्यक्तित्व

(स) बर्हिमुखी व्यक्तित्व (द) रूपतामक व्यक्तित्व

2. भारत के राष्ट्रीय चरित्र में सहनशीलता, परोपकारिता, भाग्यवादिता एवं धार्मिकता के गुण अधिक हैं।

(अ) सत्य (ब) असत्य

3. राष्ट्रीय चरित्र के निर्धारक हैं

(अ) भौगोलिक कारक (ब) राजनैतिक कारक

(स) आर्थिक कारक (द) उपरोक्त सभी

4. शिक्षण सिद्धान्त के प्रतिपालक हैं

(अ) व्यवहारवादी (ब) प्रकार्यवादी

(स) संरचनावादी (द) उपरोक्त में से कोई नहीं

5. क्षेत्र सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है

(अ) मैस्लो (ब) रोजर्स

(स) कर्ट लेविन (द) फ्राइड

उत्तरः **1**.(द) **2**.(अ) **3**.(द) **4**.(अ) **5**.(स)

6.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डा**0** सिंह ए**0**के**0**;समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा; मोतीलाल बनारसी दास ,बंग्लो रोड,नई दिल्ली।

2. डा**0** श्रीवास्तव डी**0** एन**0**; व्यक्तित्व मनोविज्ञान; साहित्य प्रकाशन रोड, आगरा ।

3. डा**0** सिंह ए**0**के**0** ; व्यक्तित्व मनोविज्ञान।

4. डा**0** ओझा राजकुमार ;मनोविज्ञान के सिद्धान्त एवं सम्प्रदाय;विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

5. बी**0** कुप्पुस्वामी ; समाज मनोविज्ञान एवं परिचय; हरियाणासाहित्य अकादमी, चण्डीगढ़।

6. लूनिया बी**0**एन**0**; भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का विकास

6.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. राष्ट्रीय चरित्र का आशय क्या है ? इसके निर्धारकों का वर्णन कीजिये ?
2. राष्ट्रीय चरित्र का अर्थ बताते हुए इसके विभिन्नता के कारण समझाईये।
3. राष्ट्रीय चरित्र के संदर्भ में मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त की व्याख्या कीजिये।

4. प्रेरणात्मक सिद्धान्त राष्ट्रीय चरित्र के लिए कितना उपयोगी है-समझाईये।
5. टिप्पणी लिखिये-
    (अ) राष्ट्रीय चरित्र और क्षेत्र सिद्धान्त
    (ब) राष्ट्रीय चरित्र और शिक्षण सिद्धान्त

इकाई-7 नेतृत्व का अर्थ, स्वरूप, उत्पत्ति एवं विशेषता; सत्तावादी एवं प्रजातांत्रिक नेतृत्व में अन्तर(Meaning, Nature, Origin and Traits of Leadership; Difference between Authoritarian and Democratic Leader)

इकाई संरचना

7.1 प्रस्तावना
7.2 उद्देश्य
7.3 नेतृत्व का अर्थ एवं परिभाषाएँ
7.4 नेतृत्व की विशेषताएँ एवं गुण
7.5 नेतृत्व एवं प्रभुत्व में अन्तर
7.6 नेतृत्व के कार्य
7.7 नेता के प्रकार
7.7.1 बोगार्डस का र्गीकरण
7.7.2 किम्बल यंग का वर्गीकरण
7.7.3 लिपिट एवं व्हाईट का वर्गीकरण
7.8 प्रजातांन्त्रिक एवं निरंकुश नेता में अन्तर
7.9 सारांश
7.10 शब्दावली
7.11 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न
7.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची
7.13 निबन्धात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

नेतृत्व एक प्रचलित शब्द है जब भी कोई समूह या समाज का व्यक्ति बढ़-चढ़ कर समूह के कार्यों में पहल करता है तो लोग उसे नेता कहने लगते हैं। उसके निर्देश पर चलते हैं उसके विचारों का अनुसरण करते हैं और वह भी अपने समूह का समाज की भलाई के लिए लगातार प्रयत्नशील रहते हैं।

मानव सभ्यता के इतिहास में ऐसा कोई समय नहीं मिलता जिसमें कुछ व्यक्ति अधिकतर व्यक्तियों के विचारों को प्रभावित नहीं करते रहे हों, सभ्यता के द्वितीय चरण अथवा मध्यम युग में कबिलाई संस्कृति देखने को मिलती है। प्रत्येक कबीलों में कुछ लोग अपने कबीले को व्यवस्थित करने व दूसरे कबीले पर प्रभुत्व के लिए

जाने जाते रहे है। आधुनिक युग में समाज का स्वरूप जटिल है। एक ही व्यक्ति को सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक आदि तमाम क्षेत्रों में कई प्रकार की भूमिका निभानी होती है। इन्हीं व्यवस्थाओं से कुछ व्यक्ति अपने समूह व समाज की परिस्थितियों का पूर्वानुमान लगाकर अधिकांश लोगों का नेतृत्व करने लगते हैं एक नेता मात्र निर्देश ही नहीं देता वरन् समाज के अन्य लोगों से भी प्रभावित होता है उनके विचारों का अनुसरण करता है लेकिन अगर समूह के अधिकांश लोग उस व्यक्ति के विचारों से प्रभावित हों और उसके निर्देशों का पालन करें तो समझो वही उस समाज का नेता है यही नेतृत्व कहलाता है। इस प्रकार सामान्य शब्दों में कहा जाता है कि किसी समूह के सदस्यों का एक सदस्य द्वारा प्रतिनिधित्व करना नेतृत्व कहलाता है।

7.2 उद्देश्य

- प्रस्तुत इकाई में नेतृत्व के अर्थ उसकी परिभाषाओं एवं उसके स्वरूप का अध्ययन करेंगे।
- साथ ही नेता के कार्यों की चर्चा करते हुए हम प्राथमिक एवं गौण कार्यों के बारे में जान सकेंगे।
- नेतृत्व के विभिन्न प्रकार हैं इस इकाई में हम इन प्रकारों के बारे में जान सकेंगे।
- सत्ताधारी एवं लोकतांन्त्रित नेता पर चर्चा कर उसके अन्तर को सभी छात्र-छात्राओं को अवगत करायेंगे।

7.3 नेतृत्व का अर्थ एवं परिभाषाएँ

आम बोल-चाल में यह कहा जा सकता है कि नेतृत्व एक व्यवहार का ढंग हैं जिसमें एक व्यक्ति अन्य व्यक्तियों के व्यवहारों से प्रभावित होने की अपेक्षा अपने व्यवहार से उन्हें प्रभावित करता है अर्थात नेतृत्व एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें एक व्यक्ति द्वारा समूह के समस्त व्यक्तियों के व्यवहारों को एक निश्चित दिशा में मोड़ा जाता है तथा उनहें विशेष लक्ष्य प्राप्त करने की प्रेरणा दी जाती है। इस प्रकार सम्पूर्ण की क्रियाओं एवं व्यवहारों को प्रभावित करना और समूह का प्रतिनितिधित्व करना नेतृत्व कहलाता है।

किम्बल यंग (**1960**) के अनुसार ‘‘ अन्य व्यक्तियों के व्यवहारों को नियंन्त्रित एवं निर्धारित करने की योग्यता के आधार पर प्रभुत्व एवं प्रतिष्ठा की प्रास्थिति प्राप्त करना नेतृत्व कहा जाता है।” ‘‘Leadership is a status of dominance and prestige acquired by ability to control, lead or set the pattern on behaviour of others.” ----Kimbal Young

रावेन एवं रूबिन (**1976**) के अनुसार, ‘‘किसी समूह में विशिष्ट स्थिति प्राप्त व्यक्ति नेता कहा जाता है, वह अपनी भूमिका के अनुरूप अन्यों के व्यवहारों का प्रभावित करता है तथा समूह को अपना अस्तित्व बनाये रखने और लक्ष्य की प्राप्ति के लिए संयोजित व निर्देशित भी करता है।‘‘

"We may define a leader as someone who occupies a position in the group, influences others in accordance with the role of expectations for that position and coordinates and directs the group in maintaining itself and reaching its goal." ----Reven and Rubin

क्रेच, क्रेचफील्ड एवं बैलकी (**1962**) के अनुसार " नेता, किसी समूह का वह सदस्य होता है जो समूह की गतिविधियों को सर्वाधिक प्रभावित करता है और समूह के लक्ष्यों को निश्चित करने एवं समूह की विचारधारा को निर्धारित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।"

"Leader is a member of a group or organization who outstandingly influences the activities of the members of a group and who plays a central role in defining group goals and in determining the ideology of the group." ---Krech, Crutchfield and Ballachey

लिण्डग्रेन(**1973**) के अनुसार, " नेता समूह का वह सदस्य होता है जो अन्य लोगों से प्रभावित होने की अपेक्षा अपनी इच्छाओं के अनुसार व्यवहार करने हेतु उन्हें अधिक प्रभावित करता है।''

"A Leader is a group member who influence other members to behave in ways he prefers more than they influence him." ----Lindgrain

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि नेतृत्व एक प्रकार का अन्तर्क्रियात्मक व्यवहार है जो नेता तथा सदस्यों के बीच होता है। दोनों एक दूसरे को प्रभावित करते है, फिर भी नेता का प्रभाव सदस्य या अनुयायियों पर अधिक पड़ता है। वह लोगों के व्यवहारों को निर्देशित तथा नियंत्रित भी करता है।

नेतृत्व परिभाषाओं के विश्लेषण करने पर नेतृत्व के कुछ महत्वपूर्ण विन्दु दिखाई देते हैं।

नेतृत्व के दो पक्ष होते हैं नेता- जो नेतृत्व करता है। अनुयायी - जो नेतृत्व स्वीकार करता है। ये दोनों पक्ष एक दूसरे को प्रभावित करता है ओर अनुयायी नेता को प्रभावित करता है अन्तर सिर्फ दोनों के प्रभाव की मात्रा का होता है नेता पर अनुयायिओं का प्रभाव उतना नहीं पड़ता जितना की अनुयायिओं पर नेता का पड़ता है अर्थात् नेता एवं अनुयायियों में दो तरफा सम्बन्ध होता है।

उदाहरणार्थ - यदि कोई कर्मचारी नेता अपनी मांगों को मनवाने के लिए सरकार की सभी सेवाओं को बंद करने का आव्हान करता है ऐसे में उसके अनुयायी या कर्मचारी उसे यह सुझाव देते हैं कि बंद में आवश्यक सेवाओं को खुला रखा जाय ओर कर्मचारी नेता उस सुझाव को मान लेता है इसका मतलब है कि दोनें में दो तरफा सम्बन्ध है।

नेतृत्व के अर्थ एवं स्वरूप की व्याख्या स्पष्ट करने के लिए यह जानना आवश्यक है कि नेता एवं औपचारिक अध्यक्ष में अन्तर समझाया जाय गिब्ब **1969** ने कहा है नेता को अपने अनुयायियों पर स्वतः ही प्रभाव दिखाने का अवसर मिल जाता है जबकि औपचारिक अध्यक्ष को अपने पद के कारण अधिकार मिलता है, जैसे- एक जिलाधिकारी का प्रभाव उस जिले में जहाँ वह नियुक्त होता है उसके पद के कारण होता है उसके

पद के कारण ही उसके अधीनस्थ कर्मचारी उनकी मर्यादा का ध्यान रखते हैं और उसके आदेशों का पालन करते हैं, उनका अनुसरण करने की कोशिश करते हैं पर पद न रहने पर उसके अस्तित्व को नहीं मानते अर्थात औपचारिक अध्यक्ष वास्तविक नेता नहीं होते हैं।

इस प्रकार नेतृत्व शब्द को और सरलता से समझने के लिए हाउस **1977,** जिल्डलर **1971,** मेयर्स **1988** ने कुछ निष्कर्ष दिये-

- नेता अनुयायियों के व्यवहारों को निर्देशित एवं नियंन्त्रित करता है।
- नेता अन्य लोगों को अधिक प्रभावित करता है तथा उसके द्वारा स्वयं कम प्रभावित होता है।
- समूह के सदस्य नेता के प्रति अधीनता अनुभव करते हैं।
- समूह की नीतियों का निर्धारण नेता द्वारा किया जाता है।
- नेतृत्व का गुण कुछ न कुछ हर व्यक्ति में पाया जाता है अर्थात नेतृत्व में प्रकार नेता औपचारिक या वास्तविक भी हो सकते हैं औपचारिक नेता से वास्तविक नेता अधिक प्रभावशाली होते हैं, नेता अपने समूह की विचारधारा के अनुकूल कार्य करता है जैसे लोकतांत्रिक नेता लोकतंत्र को महत्व देता है तथा निरंकुश नेता लक्ष्य को अधिक महत्व देता है। हाउस, फिल्डर एवं मेयर्स के निष्कर्षो के बाद हम यह कह सकते हैं कि **-**

‘‘नेता किसी समूह का सदस्य होते हुए अधिकांशतः समूहवासियों की प्रतिविधियों को प्रभावित करता है और समूह के लक्ष्य नीतियों निश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।‘‘

सामान्यतः या आम बोलचाल की भाषा में नेतृत्व एवं प्रभुत्व शब्द का प्रयोग लगभग समान अर्थ में किया जाता है। नेतृत्व के स्वरूप को जानने के लिए इन दोनों के अर्थो को जानना आवश्यक है।

7.4 नेतृत्व की विशेषताएँ एवं गुण

नेतृत्व को पहचानने के लिए उसके गुणों को पहचानना आवश्यक है प्रत्येक व्यक्ति में कुछ न कुछ गुण होते हैं परन्तु जब हम नेतृत्व की बात करते हैं तो उनमें इन गुणों/विशेषताओं की अधिकता होती है नेतृत्व की सफलता मात्र व्यक्ति विशेषके परिस्थिति में उसके अनुयायिओं का प्रभाव भी उसमें पड़ता है। विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने नेतृत्व की संख्या अलग-अलग बताई है आलपोर्ट के अनुसार नेत्त्व में **18** गुण होते हैं। वर्नाड के अनुसार नेतृत्व में **28** गुण होते हैं। । बोगाडर्स के अनुसार नेतृत्व में **8** गुण होते हैं**,** इन सभी समाज में मनोवैज्ञानिक का अध्ययन करने पर यह बात स्पष्ट होती है कि नेतृत्व की अपनी विशेषताएँ होती हैं जो निम्न हैं-

1. **शारीरिक गुण**(Physical Attributes) **-**

कुछ मनोवैज्ञानिक ने अपने अध्ययनों के आधार पर बताया कि नेताओं में कुछ शारीरिक गुण होते हैं। जैसे- ऊँचाई, **2-** वजन, **5-** अच्छा स्वास्थ्य एवं स्पूर्ति। टर्मन **1904,** स्टागडिल **1956** एवं पैट्रिज **1961** ने अध्ययनों के आधार पर बताया कि प्रायः नेता की ऊँचाई सामान्य व्यक्ति से ज्यादा होती है अधिक लम्बई व्यक्ति में असाधरणता का गुण लाती है जिससे उसे नेतृत्व में सुविधा होती है परन्तु आज के परिपेक्ष्य में यह अध्ययन सत्य नहीं बैठता है क्योंकि यदि हम महात्मा गाँधी एवं लालबहादुर शास्त्री को देखें तो देखते हैं कि विश्व में नेतृत्व का परचम लहराने वाले गाँधी की लम्बाई एवं लालबहादुर शास्त्री की लम्बाई औसत व्यक्ति के बराबर एवं उससे भी कम थी।

जहाँ तक वजन का सवाल है पैट्रिक (Putridge,1961) एवं स्टागडिल (Stogdils,1966) ने अपने अध्यय्न में यह बताया कि नेता भारी शरीर वाले होते हैं जबकि यह गुण भी अपर्याप्त है आधुनिक युग में शारीरिक गुण बहुत मायने नहीं रखता हर व्यक्ति अपने फिगर के प्रति चेतन्यशील हो रहा है इसलिए आज के दौर में इस तरह के व्यक्तित्व वाले व्यक्ति को अपना नेता चुनना लोग पसन्द नहीं करते हैं।

तीसरा शारीरिक गुण स्पूर्ति एवं स्वास्थ्य माना गया है मनोवैज्ञानिक यह मानते है कि जो व्यक्ति अधिक स्वस्थ्य रूप रंग में आकर्षक एवं फुर्तीला होता है वो अन्य व्यक्तियों को अपनी ओर आकर्शित कर लेते हैं लेकिन अगर व्यक्ति के अन्दर अपने समूह के प्रति प्रतिबद्धता एवं समर्पण न हो तो शारीरिक आकर्षण मात्र ढकोसला हो जाता है।

2. **बुद्धि-बौद्धिक योग्यता** -

सामान्यतः यह माना जाता है कि नेता अपने अनुनायियों की अपेक्षा ज्यादा बुद्धिमान होता है। बौद्धिक योग्यता से तात्पर्य अपने अनुयायीं को समझने परखने की क्षमता उनकी समस्याओं को हल करने की विधियाँ उन्हें दिये जाने वाले सुझावों की योग्यता दूरदर्शिता एवं वाक चातुर्यता से हैं, बुद्धि ही वह प्रतिमान है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने समूह को प्रभावित कर पाता है इस संबध में मनोवैज्ञानिकों ने अनेक अध्ययन किये हैं स्टागडिल (Stogdill 1940) ने अपने अध्यय्न में पाया कि नेतृत्व एवं बुद्धि में धनात्मक सहसम्बन्ध है अर्थात बुद्धिमान व्यक्ति में नेतृत्व की क्षमता अधिक होती है। लेकिन यह सह संबध न्यून अर्थात **25** के आस-पास पाया गया है।

फिडलर **1964** ने अपने अध्यय्नों के आधार पर कहा है कि यदि बुद्धिमान नेता उचित कार्यशैली का उपयोग, करे तो वह अधिक सफलता प्राप्त कर सकता है।

उपरोक्त अध्ययनों के विपरीत गिब, होलिंगवर्थ एवं करोल आदि मनोवैज्ञानिक का मानना है कि अगर नेता एवं अनुयायियों की बुद्धि लब्धि में बहुत ज्यादा अन्तर होगा तो दोनों (नेता एवं अनुयायी) में सामंजस्य मुश्किल हो जाता है क्योंकि बौद्धिक अन्तर ज्यादा हो जाने पर नेता एवं अनुयायिओं ने रूचियों, मूल्यों, क्रियाकलापों तथा व्यवहार के तरीकों में इतना अन्तर हो जाता है जिसके फलस्वरूप पारस्परिक सहयोग एवं सांमजस्य में बांधा उत्पन्न होती है इन मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि बुद्धि लब्धि में नेता एवं अनुयायी के मध्य

30 अंकों से अधिक अन्तर उपयुक्त नहीं होता। नेतृत्व एवं बौद्धिक योग्यता के संदर्भ में सभी मनोवैज्ञानिक यह मानते हैं कि नेता बुद्धिमान होना चाहिए परन्तु अपने अनुयायियों से अत्यधिक बुद्धिमान होने पर उसका सहयोजन कम हो सकता है लेकिन बौद्धिक होना महत्वपूर्ण गुण है।

3. **आत्मविश्वास** (Self Confidence) -

नेता का अहम् गुण आत्मविश्वास अर्थात् स्वयं के उपर विश्वास है जिस व्यक्ति में आत्मविश्वास की कमी होती है वह नेता नहीं बन सकता नेता को सदैव कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है ओर अपने अनुयायियों को हमेशा प्रोत्साहित करना होता है। स्टागडिल **1948,** मान **1959-** ने अपने अध्ययनों में पाया कि नेतृत्व तथा आत्मविश्वास सार्थक रूप से सहसम्बन्धित होते हैं- अर्थात् आत्मिवश्वास होता तथी नेतृत्व के गुण होंगे और अगर नेतृत्व होगा तो आत्मविश्वास अवश्य पाया जायेगा।

यदि नेता में आत्मविश्वास की कमी आ जाती है तो उसके समर्थकों का नेता से विश्वास उठ जाता है और उसका नेतृत्व समाप्त हो जाता है इसलिए अगर नेता के आत्मविश्वास के साथ आचरण करता है तभी उसका नेतृत्व सफल रहता है।

4. **वाकपटुता** (Verbal aptitude) -

व्यवहारिक रूप से देखा गया है कि समूह में पेतृत्व ग्रहण करने के लिए व्यक्ति में वाक चातुर्य का होना आवश्यक है। किसी भी देश-काल परिस्थिति में अपना वक्तव्य रखना , लोगों को सुझाव देना उनको आदेशित करना आदि सभी गुण वाक पटुता के हैं। इस संबध में भी बहुत से मनोवैज्ञानिक अध्ययन हुए हैं।

मैंकग्रेथ एवं जुलियन (Mcgrath & Julian 1968) ने अपने अध्ययनों में इस बात की पुष्टि की समूह का सबसे अधिक बोलने वाला सदस्य ही नेता के रूप में देखा जाता है।

यहाँ यह बताना भी जरूरी है कि अधिक बोलने का मतलब निरर्थक बोलने से नहीं है बल्कि अधिक बात करने का अर्थ वाक पटुता एवं परिस्थितियों के सन्दर्भ में सार्थक विचार रखने से है।‘‘

5. सामाजिकता (Sociability) –

समाजिकता का अर्थ समाज में सभी व्यक्तियों से घुल-मिल कर रहने की प्रवृत्ति से है जो व्यक्ति मिलनसार होते हैं और सरलता से लोगों में घुलमिल जाते हैं वह शीघ्र ही लोकप्रिय हो जाते हैं वह अपने समूह के अन्य लोगों में सहायोग सहानभूति संवेदनशीलता एवं मित्रता के सभी गुण रहते हैं नेतृत्व में सामाजिकता का गुण एक महत्वपूर्ण कसौटी है। गुड एवं एनॉफ (good &Enough) ने अपने अध्ययन में पाया कि नेतृत्व एवं सामाजिकता में घनिष्ठ सम्बन्ध है।

कैटेल तथा स्टाईस (Catile & Stice 1957) ने अपने अध्ययनों में बतलाया कि जब नेता में सामाजिकता का षील गुण होता है तो इससे उनमें एव अनुयायियों में पारस्परिक सम्बन्ध अधिक घनिष्ठ एवं दृढ़ होता है और नेतृत्व की सफलता चरम पर होती है।

वास्तव में सामाजिकता एक ऐसा कारक है जब व्यक्ति अपने समूह के लोगों से आत्मीयता से मिलता है तो उनके दुःख दर्द से भी रूबरू होता है जो उसके अन्दर की संवेदशीलता को जगाये रहती है ओर नेता अपने लोगों के लिए ज्यादा जीवटता से कार्य करता है ओर लम्बे समय तक नेतृत्व से स्थायितत्व बनाये रखता है।

6. **प्रभुत्व** (Dominance) -

सफल नेतृत्व में प्रभुत्व का गुण होना आवश्यक है यदि उसमें यह गुण है तो सदस्यों के व्यवहारों एवं निर्णयों पर आवश्यकता पड़ने पर रोक लगा सकता है**,** यदि प्रमुख का गुण का अभाव होता है तो वह अपने समूह को व्यवस्थित करने में असफल हो जाता है और समूह में अराजकता फैलने में देर नहीं लगती।

मान (Mann1959) ने अपने अध्ययनों में नेतृत्व तथा प्रभुत्व में धनात्मक सह सम्बन्ध पाया अर्थात् नेतृत्व के गुण बढ़ने के साथ व्यक्ति में प्रभुत्व के गुण बढ़ते हैं।

गिब ने अपने अध्ययन के द्वारा यह पाया कि एक नेता में आर्थिक लाभ की अपेक्षा प्रभुत्व को प्राप्त करने की ईच्छा प्रबल होती है अतः हम कह सकते हैं कि प्रभुत्व एक ऐसी विषेशता है जो प्रत्येक नेत्त्व करने वाले व्यक्ति में पायी जाती है।

7. **समायोजनशीलता** (Adjustment) -

नेतृत्व का एक प्रधान गुण समायोजन है जैसा कि हम पहले भी बता चुके हैं कि नेता को विभिन्न परिस्थितियों का समना करना पड़ता है चाहे वह सरल हो या कठिन**,** हर परिस्थिति में स्वयं से तथा समूह से अपना तारतम्य बनाये रखना उसका गुण होता है। नेता में अगर अच्छी समझ होगी या धैर्य होगा तो अपने समूह द्वारा किये गये नकारात्मक व्यवहार पर भी वह साहस व सामंजस्य द्वारा उनके व्यवहार को सकारात्मक दिशा में ले जा सकता है।

मान **1959** (Mann1959) ने बताया कि **30** प्रतिशत अध्ययनों में समायोजन एवं नेतृत्व की क्षमता एक दूसरे से धनात्मक रूप से सम्बन्धित पायी गयी है।

मोवर्ग (Moberg 1953) ने भी अपने अध्ययनों में नेतृत्व तथा समायोजन में धनात्मक सहसम्बन्ध पाया। अर्थात् यह कहना समीचीन होगा कि अच्छे नेतृत्व में अच्छे समायोजन की विशेषता पायी जाती है।

8. **संकल्पशक्ति** (Will Power) **-**

संकल्पशक्ति नेतृत्व का प्रमुख लक्षण है कठिन परिस्थितियों में भी अपनी समूह की मांग पर अडिग रहना और मांग मनवाने के लिए किसी भी परिस्थिति से गुजरना संकल्प शक्ति का परिचायक होता है। उदाहरणार्थ- नेल्सन मंडेला द्वारा रंगभेद नीति के विरोध में पूरी मानव जाति के लिए तेईस साल जेल में बिताना और पूरी दुनिया में काले गोरे के रंग के कारण सामाजिक भेदभाव के लिए संघर्श करना दृढ़ संकल्प शक्ति का परिचायक है।

9. **परिश्रम प्रियता** (Industriousness) **-**

इतिहास इस बात की पुश्टि करता है कि साधनहीन एवं गरीब होने के उपरान्त भी अगर व्यक्ति परिश्रमी है आलस व कामचोरी को अपने स्वभाव में नहीं आने देता है तो नेतृत्व प्राप्त कर लेता है। उदाहरणार्थ- लालबहादुर शास्त्री एक गरीब परिवार से ताल्लुक रखते थे परन्तु अपने लगन एवं परिश्रम से उन्होंने भारत के प्रधानमंत्री का पद प्राप्त किया और जय जवान-जय किसान का नारा देकर पूरी दुनिया में अपना लोहा मनवाया।

10. **निर्णय लेने की तत्परता** (Promptness of decision) **-**

नेता से यह आशा की जाती है कि विपरीत परिस्थितियों में भी शीघ्र निर्णय लेने की तत्परता होनी चाहिए चुंकि एक नेता समूह का आदर्श होता है ओर उसमें यह गुण दिखाई देना चाहिए कि जटिल व गम्भीर परिस्थितियों में समूह के हित में तुरन्त निर्णय ले ओर लोगों का मार्गदर्शन कर सके।

11. **पुर्वानुमान की क्षमता एवं दूरदर्शिता** (Imagination and foresightedness) **-**

एक सफल नेता वही व्यक्ति होगा जो आगे आने वाली परिस्थितियों का पहले से पूर्वानुमान करके अपने समूह को उसके प्रति सजग कर दे इसके लिए अच्छी कल्पनाशक्ति का होना अनिवार्य है ताकि नेता अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सके, अच्छी कल्पनाशक्ति के साथ-साथ दूरदर्शिता का गुण भी जरूरी है ताकि वह समूह की प्रतिक्रिया समझ कर कुछ पूर्वकथन कर सके।

जैसे- राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी में पुर्वानुमान एवं दूरदर्शिता का गजब का संजोग था। जब पूरी दुनिया हिंसा से अपनी आजादी देने की पक्षधर थी उन्होंने अहिंसा को अपनी स्वतंन्त्रता का हथियार बनाया और अंग्रेजों को भारत छोड़ने पर मजबूर कर दिया।

12. **नैतिकता की भावना** (Moral sensibility) **-**

कौफिन ने नेतृत्व के लिए नैतिकता की भावना को एक आवश्यक गुण के रूप में स्वीकार किया है। नैतिकता से तात्पर्य सच्चाई,उदार, दृष्टिकोण दूसरों के कल्याण की भावना के प्रति समर्पण एवं चरित्र की श्रेष्ठता से है। व्यक्ति में अगर नेतृत्व के सारे गुण जैसे कार्यकुशलता, साहस, निर्णय लेने की तत्परता, संकल्पशक्ति आदि सब कुछ है परन्तु नैतिकता का अभाव है तो जन सामान्य ऐसे लोगों के नेत्त्व को अस्वीकार कर देता है इसलिए नेतृत्वकारी को जन सामान्य को यह विश्वास दिलाना होता है कि वह एक आदर्शवान व्यक्ति है और जो कार्य भी कर रहा है वह दूसरों के कल्याण एवं हित के लिए कर रहा है।

13. **सरलता** (Simplicity) **-**

जो व्यक्ति स्वयं को रहन-सहन विचारों एवं जीवन शैली में जितना अधिक साधारण होता है जनता का विश्वास उस पर बढ़ जाता है नेता की सादगी अनुयायियों के लिए प्रेरणा की स्त्रोत होती है। अगर नेता सादा जीवन उच्च विचार की जीवन शैली को अपनाता है तो उसके समर्थकों का विष्वास नेता पर और गहरा हो जाता है।

14. **जोखिम उठाने की क्षमता** (Risk Bearing Capacity) **-**

सामान्यतः अधिकांश व्यक्ति परम्परागत व्यवहारों में ही जीवन व्यतीत कर देते हैं लेकिन अपने समूह से ही जो व्यक्ति नवीनता का जोखिम उठाता है और उसमें सफलता प्राप्त कर समूह के लिए नये क्षेत्रों में, विचारों में परिवर्तन की राह दिखाता है वही बेहतर नतृत्व कर पाता है जोखि उठाने की क्षमता के कारण ही समाज में समय-समय पर परिवर्तन होते हैं जैसे- विवेकानन्द जी ने महिलाओं की सोचनीय स्थिति को देखते हुए, स्त्री शिक्षा को बढ़ावा देने की बात की और उसके लिए बढ़-चढ़ कर भागेदारी निभाई। उन्होंने हर जगह अपने भाषणों में स्त्री शिक्षा की बात कर समाज को एक नई दिशा दी।

15. **व्यवहार में लचीलापन** (Elexibility in behaviour) **-**

नेतृत्वकर्त्ता अगर देशकाल परिस्थितियों के अनुसार अपने व्यवहार में परिवर्तन नहीं करता है तो समयानुसार वे समूह या समाज से पीछे रह जाता है ऐसे व्यक्तियों को रूढ़िवादी कहा जाता है इसलिए समूह की भावनाओं से सांमजस्य बनाये रखते हुए नेता को अपने व्यवहार में लचीलापन रखना चाहिए।

कार्टर (Carter) एवं उनके सहयोगियों ने पाया कि नेताओं का व्यवहार परिस्थितियों के अनुसार सदैव परिवर्तित होता रहता है।

उपरोक्त विशेषताओं के अतिरिक्त धैर्य, दूसरों के मनोभावों को समझने सहयोगी लक्षण हैं जो नेतृत्व के लिए महत्वपूर्ण हैं यह माना जाता हे कि जिस व्यक्ति में जितने अधिक गुण या विशेषताएँ होंगी वह उतना ही शीघ्र नेतृत्व करेगा।

7.5 नेतृत्व एवं प्रभुत्व में अन्तर

कुछ विद्वान नेतृत्व का अर्थ प्रभुत्व के रूप में करने लगते हैं जो कि उचित नहीं है स्वयं रेबर जैसे विद्वान ने नेतृत्व के संन्दर्भ में लिखा है, ''नेता कोई भी वह व्यक्ति है जिसके पास प्रभुत्व एवं सत्ता होती है अथवा जिसका समूह पर प्रभाव होता है।''

किम्बल यंग (Kimbell Young) के शब्दों में ,''प्रभुत्व को शक्ति के साधन के रूप में देखा जा सकता है जिसका प्रयोग एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्तियों की मनोवृत्तियों एव क्रियाओं को नियन्त्रित करने और उन्हें परिवर्तित करने के लिए किया जाता है।''

उपर्युक्त परिभाषा में नेतृत्व एवं प्रभुत्व को एक ही अवधारणा माना हैं अर्थत जिसमें प्रभुत्व है वहीं नेता है। लेकिन प्रभुत्व एवं नेतृत्व दोंनों अलग-अलग अवधारणा हैं- प्रभुत्व की परिभाषा देते हुए किम्बल यंग ने लिखा है।

किम्बल यंग की परिभाषा से यह स्पष्ट है कि प्रभुत्व के द्वारा व्यक्तियों के व्यवहारों में जो परिवर्तन किया जाता है वह साधारण तथा दबाव के कारण जाता है क्योंकि प्रभुत्व में सत्ता या शक्ति का स्वरूप होता है अर्थात इसमें एक व्यक्ति प्रभुता सम्पन्न होता है ओर दूसरा उसके अधीन होता है जबकि नेतृत्व को व्यक्ति ऐच्छिक रूप से स्वीकार करता है अर्थात् नेतृत्व तभी स्वीकार होता है जब कुछ व्यक्ति नेता के कार्यों से प्रभावित और उसके निर्देशों को

उपयोगी समझते हैं ओर उसके निर्देशों को ऐच्छिक रूप से स्वीकार करते हैं। उदाहणार्थ-एक अधिकारी अपने कर्मचारियों पर प्रभुत्व बनाये रखता है और कर्मचारी अपने चपरासी पर। यहाँ दोंनों के विचारों में सहमति का कोई भाव हो यह आवश्यक नहीं है चूंकि अधिकारी के निर्देशों का पालन कर्मचारी व कर्मचारी के निर्देशों का पालन चपरासी इसलिए करता है क्योंकि दोंनों के पास कुछ वैधानिक अधिकारी होते हैं जो उनकी सत्ता या प्रभुत्व को बरकरार रखती है।

इस प्रकार नेतृत्व व प्रभुत्व में कुछ अन्तर दिखाई देते हैं जो निम्न हैं -

- नेतृत्व में अनुयायियों के विचारों को ध्यान में रखा जाता है साथ ही उनके विचारों से सहमत होकर नेता प्रभावित भी होते हैं जबकि प्रभुत्व में रहने वाले व्यक्तियों पर शक्ति से दबाव डाला जाता है उनके विचारों से सहमति का सवाल ही नहीं उठता।
- नेतृत्व साधारणतया स्वेच्छा से स्वीकारा जाता है नेतृत्व में अगर कभी कभार कुछ दबाव होता भी है तो उसे नैतिक दबाव कहा जाता है जबकि प्रभुत्व में शक्ति एवं दबाव का अधिक महत्त्व होता है।
- पीयर्स को कथन है कि नेतृत्व पारस्परिक उत्तेजना की एक प्रक्रिया है अर्थात जिसमें नेता पर अनुयायियों के व्यवहारों का पर्याप्त प्रभाव पड़ता है जबकि प्रभुत्व मूलतः एक नियन्त्रण की प्रक्रिया है जिसमें प्रभुत्वशाली व्यक्ति अपनी ईच्छा से चुने हुए उद्देश्यों की पूर्ति के लिए दूसरों के व्यवहारों को एक खास दिशा में नियन्त्रित करता है।

  इस प्रकार स्पष्ट है कि नेतृत्व एवं प्रभुत्व में प्र्याप्त अन्तर है।

7.6 नेतृत्व के कार्य

नेतृत्व के स्वरूप एवं प्रकृति को पूर्णतः समझने के लिए यह आवश्यक है कि हम नेता के कार्य को भी समझें, नेता के क्या कार्य होते हैं उसकी कार्य पद्धति कैसी होती है आदि। इस सन्दर्भ में क्रच एवं क्रेचफील्ड (Krech and crutchfield) ने कहा है प्रत्येक नेता को किसी न किसी मात्रा में अधिशासक, नियोजक, नीति निर्धारक, विशेषज्ञ समूह का बाह्य प्रतिनिधि, आन्तरिक सम्बन्धों का नियन्त्रक, दण्ड एवं पुरस्कार का निर्धारक तथा पंच मध्यस्थ एवं आदर्श के रूप में कार्य करना होता है। क्रच एवं क्रेवफील्ड ने नेता के कार्यों को दो भागों में बॉटा है। **1-**प्रधान कार्य **2-** सहायक कार्य

इस दृष्टिकोण से नेता द्वारा किये जाने वाले कार्यो का उल्लेख करके हम नेतृत्व का महत्त्व समझ सकते हैं।

1) **प्रधान कार्य-** प्रधान कार्यों से मतलब उन कार्यो से है जिन्हें करना नेतृत्व पद पर बने रहने के लिए आवश्यक हो जाता है ये कार्य निम्न हैं।

कार्यकारिणी के रूप में नेता (Leadership as Executive) –

- नेता को अपने समूह को व्यवस्थित रखना होता है जिसमें समूह के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। कार्यकारिणी के रूप में नेता समूह का संचालक होता है उसे अपने समूह के कार्यों का इस प्रकार बटवारा करना पड़ना है कि समूह की भलाई के लिए बनाये गये लक्ष्यों की पूर्ति भी हो जाये ओर कार्यकारिणी के बंटवारे से समूह में असन्तोष भी न फैले। कभी-कभी नेता कार्यकारिणी के कुछ कार्यों का भार समूह के अन्य लोगों को भी दे देता है।
- योजना बनाना- नेता का दूसरा महत्वपूर्ण कार्य समूह के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए योजनाओं का निर्माण करना होता है यह योजनायें दीर्घकालिक भी हो सकती है ओर अल्पकालिक भी। इन योजनाओं के लिए जो भी संसाधन की जरूरत होती है उन्हें जुटाना भी नेता का कार्य होता है।
- नीति निर्धारण करना (Policy Maker) - नेता समूह के लक्ष्यों एवं नीतियों का निर्माता भी होता है। किसी भी समूह में दो तरह की नीतियाँ होती है- **1-** आन्तरिक नीति**, 2-** बाह्य नीति। नीतियों का निर्धारण तीन प्रकार से किया जाता है।

  कभी-कभी उच्चस्तरीय नेताओं द्वारा नीति निर्धारण का कार्य अपने अधीन कार्य कर रहे नेताओं को सौंप दिया जाता है इस प्रकार नीतियां बनाने में अधीनस्थ नेताओं के विचारों को सम्मिलित किया जाता है। कई बार समूह में उपस्थित लोगों से चर्चा कर नीतियों का निर्धारण किया जाता है इसमें भी नेता नीतियों के सन्दर्भ में समर्थन एवं निर्देशन करता है जब नेता नीतियाँ बनाने को स्वतंत्र होता है और स्वयं ही नीतियों का निर्माण कर देता है। नीतियों का निर्माण किसी प्रकार क्यों न हो परन्तु जबावदेही मात्र नेता की होती है।

i. विशेषज्ञ का कार्य करना (Role of an expert)**-** समूह के तमाम लोग नेता को एक विशेषज्ञ के रूप में देखते हैं जो प्रत्येक क्षेत्र में लोगों या समूह को सर्वोतम सलाह दे सकता है।जैसे- यदि समूह में तनाव है या निचले स्तर के नेताओं में अनबन है तो समस्या समाधान का कार्य उपर वाला नेता करता है इस प्रकार एक विशेषज्ञ के रूप में वह समूह के लोगों को इस प्रकार निर्देशित करता है कि उनका मनोबल ऊँचा रहे। नेतृत्व के इस कार्य से सामूहिक जीवन स्वयं ही संगठित बना रहता है।

ii. आन्तरिक संबधों के नियंत्रक के रूप में नेता**-** नेता अपने समूह के प्रति हर सम्भव प्रयासरत् रहता है कि सभी सदस्यों में आपसी संबध सौहार्दपूर्ण बने रहें उनके मतभेदों को दूर करना**,** उनकी आवश्कताओं की पूर्ति करना तथा समय-समय पर निर्देष देकर उन्हें समूह की भलाई के लिए प्रेरित करना आदि उसका प्रमुख कार्य है इस प्रकार नेता अपने समूह के आन्तरिक मामलों में एक नियन्त्रक के रूप में कार्य करता है।

iii. बाह्य समूहों में प्रतिनिधित्व करना- नेता बाहर के समूहों में प्रतिनिधि के रूप में कार्य करता है वह अपने समूहों की भावनाओं को दूसरे समूह तक पहुँचाता है दूसरे समूहों के सदस्यों से सम्बन्ध स्थापित करने की सकारात्मक एवं नकारात्मक स्वीकृति देता है इस प्रकार नेता को समूह का द्वार-पाल कहा है। क्रेचफील्ड ने नेता के सम्बन्ध में कहा है कि नेता ''एक मान्य अधिवक्ता होता है जिसका कार्य समूह की प्रतिबद्धता बढ़ाना है।

iv. पुरस्कार एवं दण्ड का निर्धारण- नेता अपने समूह के सदस्यों को दण्ड एवं पुरस्कार भी देता है अगर समूह के सदस्य समूह के मानकों का पूर्णपालन करते हैं समूह के लक्ष्य की पूर्ति के लिए प्रयत्नशील रहते हैं तो वह उन्हें पुष्कार से सम्मानित करता है पुरस्कार पदोन्नति भी हो सकती है अथवा नगद पुरस्कार भी हो सकता है। इसी प्रकार अगर समूह के सदस्य मानकों में बॉधा डालते हैं या समूह को नुकसान पहुँचाते हैं तो नेतृत्व में दण्ड का प्रावधान भी होता है नेता समूह के सदस्य के पद से हटा भी सकता है और समूह से निश्कासित भी कर सकता है।

v. पंच एवं मध्यस्थ का कार्य- जब समूह के सदस्यों में मनमुटाव व संघर्ष की स्थिति आ जाती है और समूह की स्थिति खराब होने लगती है ऐसी स्थिति में एक नेता समूह के मध्य पंच बनकर या मध्यस्था कर समूहों के सदस्यों के मनमुटाव या संघर्श को समाप्त कर उनके मध्य समझौता करता है, समझौते में प्रत्येक सदस्य की बातों को सुनता है और अपना निर्णय देकर सौहार्दपूर्ण परिवेश तैयार करता है।

2) **सहायक या गौण कार्य** (Secondary Functions) **-**

सहायक कार्यों से तात्पर्य वैसे कार्यों से होता है जिसे नेता या तो स्वयं करने की ठान लेता है या समूह के सदस्यों के आग्रह पर इन कार्यों को करने का निश्चय करता है। इन कार्यों को नहीं करने पर नेता को कोई पद से नहीं हटा सकता लेकिन करने पर स्वयं नेता की प्रसिद्धि एवं प्रतिष्ठा बढ़ जाती है।

जैसे नेता समूह में आदर्श व्यक्ति की भूमिका निभाता है वह स्वयं उचित अनुचित का निर्धारण करते हुए औंरों को वैसे ही चलने की प्रेरणा देता है वह अपने समूह के उत्तरदायित्वों को भी निभाना पड़ता है अनुयायियों के बीच मतभेद को निपटाना उनके सुख-दुख का ख्याल करना आदि वह सिर्फ इतना ही नहीं करता साथ ही समूह के लिए आदर्श मानक आदि का निर्धारण करता है।

7.7 नेता के प्रकार

समाज में नेतृत्व की अनेक शैलियाँ या प्रकार देखने को मिलते हैं क्योंकि न तो सभी नेताओं की विशेषताएँ एक जैसी होती है और न ही नेतृत्व की परिस्थितियाँ सदैव समान होती है। यहाँ हम कुछ प्रमुख वैज्ञानिकों द्वारा बताये गये नेतृत्व के प्रकारों का वर्णन कर रहे हैं।

7.7.1 बोगार्डस का वर्गीकरण - 1940 में बोगार्डस ने नेतृत्व के पॉच प्रकार बताये-

i) प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष नेता (Direct and Indirect Leadership) -

प्रत्यक्ष नेतृत्व में नेता का सम्बन्ध अपने अनुयायियों से सीधा होता हे वह प्रत्यक्ष बातचीत के द्वारा उनकी समस्याओं को सुनता है और समाधान के लिए सुझाव देता है आपसी झगड़ों को विचार-विमर्श द्वारा निपटाता है इस प्रकार समूह के सदस्य नेता को देख भी सकते हैं और सुन भी सकते हैं।

अप्रत्यक्ष नेतृत्व में नेता व अनुयायियों का सम्बन्ध सीधा नहीं होता है ऐसे नेता अप्रत्यक्ष रूप से अपने अनुयायियों के विचारों को प्रभावित करते हैं और उन पर नियंन्त्रण रखते हैं। जैसे महान वैज्ञानिक, लेखक, दार्शनिक आदि अप्रत्यक्ष नेता की श्रेणी में आते है।

ii) सपक्षीय तथा वैज्ञानिक नेता (Partisan and Scientific Leadership) -

पक्षपातपूर्ण को सपक्षीय नेता भी कहते हैं यह नेता हमेषा अपने समूह का पक्ष लेते हैं दूसरे समूह के सम्मुख ये नेता अपने समूह की प्रशंसा एवं अच्छाईयों का ही गुणगान करते हैं और अवगुणों को छिपा देते हैं इन्हें एक पक्षीय नेता भी कहा जाता है। जैसे-आजकल की राजनैतिक पार्टिया ज्यादातर सपक्षीय होती है वह सिर्फ अपनी पार्टी का गुणगान करते हैं।

वैज्ञानिक नेता सत्य एवं न्यायप्रिय होता है और अपने समूह की अच्छाई एवं बुराई दोनों पक्षों की चर्चा करता है वैज्ञानिक नेता की किसी धर्म जाति प्रजाति या सम्प्रदाय में विशेष रूचि नहीं होती है यह सभी के सन्दर्भ में समान दृष्टिकोण रखते हैं, अधिकांशतः इस प्रकार के नेतृत्वकारी विज्ञान के क्षेत्र से जुड़े रहते हैं।

iii) **सामाजिक**, **मानसिक एवं कार्यकारिणी नेता** (Social, Mental & Executive Leadership)

सामाजिक नेता सामाजिक कार्यों के द्वारा समूह में लोकप्रियता प्राप्त करते हैं इनमें समाजसेवी गुणों की प्रधानता होती है इनमें और जनसाधारण में प्रत्यक्ष सम्बन्ध पाया जाता है।

मानसिक नेता अपने विचारों एवं क्रियाओं के द्वारा समूह की मनोवृत्तियों में परिवर्तन करते हैं यह नेता अपने कार्यों को करने के लिए एकांत एवं शान्तिपूर्ण वातावरण चाहते हैं।

कार्यकारिणी नेता में सामाजिक, बौद्धिक तथा प्रबन्धकीय गुणों का समावेष होता है, ये अच्छे वक्ता अच्छे सामाजिक कार्यकर्त्ता होते हैं कई बार इनकी अच्छी कार्य प्रणाली को देखते हुए राज्य द्वारा इन्हें कुछ अधिकार मिले होते हैं जिनका वो जनहित में उपयोग करते हैं।

7.7.2 किम्बल यंग का वर्गीकरण (kimbul Young's Classification)

किम्बल यंग ने नेतृत्व को छः भागों में बॉटा है।

i) राजनैतिक नेता (Political Leader)- इस प्रकार के नता राजनैतिक पार्टी से सम्बन्धित होते हैं इनका अपना एक दल होता है उस दल के नियम संविधान एवं नीतियां होती हैं उन्हीं के अनुसार ये कार्य करते हैं ऐसे नेता अपने दल या पार्टी के सांगठनिक ढॉचे पर निगरानी बनाये रहते हैं और उसे सुचारू रूप से

चलाये रहते हैं क्योंकि दल के टूटने पर इनका नेतृत्व भी समाप्त होने की संम्भावना रहती है। इन नेताओं का मुख्य उद्देश्य सत्ता को प्राप्त करना होता है और सत्ता को प्राप्त करने के लिए कई बार ये गुटबन्दी एवं संघर्ष को तेज कर कर देते हैं।

ii) नौकरशाह नेता (Bureaucratic leader)- नेतृत्व की यह शैली प्रशासनिक नेतृत्व में मिलती है नागरिक सेवाओं, सरकारी कार्यालयों, संगठनों, उद्योगों एवं सेना आदि विभागों में कार्यरत अधिकारियों एवं कर्मचारी इसी श्रेणी में आते हैं इनके पास कुछ अधिकार होते हैं ओर जो दूसरों को आदेश दे सकते हैं नीतियों के क्रियान्वयन में इनका मुख्य योगदान होता है इन्हें नौकरशाह कहते हैं।

iii) कूटनीतिज्ञ (Diplomate)- वर्तमान समय में प्रत्येक देश अपने कूटनीतिज्ञ रखते हैं जो सरकार के प्रतिनिधि दूसरे देश में काम करते हैं कूटनीतिज्ञ अपनी सरकार के उदेद्ष्य की पूर्ति के लिए शब्दों का प्रयोग काफी चतुराई से करते हैं।

iv) प्रजातांत्रिक नेता(Democratic leader)- जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि इस तरह के नेता अपने समूह के साथ विचार-विमर्श कर नीतियों का निर्धारण करते हैं और समूह की भलाई के लिए बढ़-चढ़ कर भागीदारी तथा लोकतांत्रिक रूप से समूह के द्वारा नियुक्त किये जाते हैं।

v) सुधारक (Reformar)- समाज में कुछ ऐसे नेता भी होते हैं जिनका मुख्य उद्देश्य समाज में सुधार करना होता है या समाज में व्याप्त बुराईयों को दूर करना होता है इन्हें सुधारक या आन्दोलनकारी भी कहा जाता है। जैसे राजा राममोहन राय, महात्मा गॉधी, अन्ना हजारे आदि।

vi) सिद्धान्तवादी (Theorist)- इन नेतृत्वकारी का सम्बन्ध मात्र सिद्धान्तों से होता है वह अपने विचारों से तर्क का सहारा लेता है तर्क के संसार में रहता है तथा तर्क द्वारा ही अपने समूह को प्रभावित करता है।

7.7.3 लिपिट एवं व्हाईट का वर्गीकरण (Lippitt & White's Classification)

लिपिट एवं व्हाईट ने **1939** में एक अध्ययन किया तिसके आधार पर नेतृत्व के तीन प्रकार बताये।

- **अस्तक्षेपी नेतृत्व-**

इस तरह के नेतृत्व से तात्पर्य वैसे नेतृत्व से होता है जहाँ नेता अपने समूह के सदस्यों पर नाममात्र का नियन्त्रण रखता है इस प्रकार के नेतृत्व में नेता या तो अपने समूह का मार्गदर्शन करता है न ही अपने तरह से कुछ निर्देष देता है, सदस्य पूरी तरह स्वतंन्त्र होते हैं कि समूह के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कौन सा कार्य करें और कौन सा न करें। इस तरह का नेतृत्व का प्रतिपादन **18** वीं शताब्दी में फ्रान्स में हुआ था।

इसके अतिरिक्त लिपिट एवं व्हाईट ने सत्तात्मक एवं प्रजातंत्रात्मक नेतृत्व के प्रकार भी बताये हैं हम अभी तक देख रहे हैं कि तमाम समाज मनोवैज्ञानिकों ने इस दो प्रकार के बताये- निरंकुश व प्रजातंत्रात्मक का उल्लेख किया है। इस प्रकार का नेतृत्व संसार के अधिकांश देशों में देखने को मिलता है इन प्रकारों का विस्तृत रूप से चर्चा कर रहे है।

- **सत्ताधारी या निरंकुश नेतृत्व** (Authoritarian Leadership)

सत्ताधारी नेतृत्व में नेता समस्त अधिकारों को अपने पास रखता है अपने अनुयायियों को अपने अधिकारों से वंचित रखता है और कभी-कभी थोड़ा सा अधिकार उन्हें दे देता है वह सम्पूर्ण सत्ता को अपने पास रखता है वह सिर्फ अपने अनुयायियों को आदेश देता है। किसी भी विषय निर्णय वह स्वयं करता है। अपने आदेषों का पालन करने के लिए चाहे उसे कोई भी रास्ता क्यों न अपनाना पड़े व अपनाता है। वह अकेले ही न्यायाधीश बन जाता है तथा समूह के सदस्यों दण्ड एवं पुरस्कार देता है उसके लिए सत्ताधारी नेता को किसी को तर्क देने की आवश्यकता नहीं पड़ती वह निरंकुश होता है।

क्रच एवं क्रेचफील्ड ने निरंकुश नेताओं की विशेषताओं को वर्णन किया है जो निम्न है-

''निरंकुश नेता प्रजातांत्रिक नेता की अपेक्षा पूर्ण शक्ति रखने में विश्वास करता है, वह अकेले ही समूह की नीतियों का निर्धारण करता है, अकेले ही मुख्य योजनाऐं बनाता है तथा भविष्य में समूह द्वारा किये जाने वाले कार्यो और उनके सम्बन्धों के तरीके आदि का निर्धारण करता है, वह अकेले ही व्यक्तिगत सदस्यों को दण्ड या पुरस्कार देने वाला न्यायाधीष और मध्यस्थ होता है तथा इस प्रकार सम्पूर्ण समूह में वहीं सदस्यों के भाग्य का अन्तिम निर्णायक होता है।

- **प्रजातांन्त्रिक नेता** (Democratic leadership)

प्रतातांन्त्रिक नेता निरंकुश नेता के बिल्कुल विपरीत होता है यह सबसे अधिक लोकप्रिय प्रकार है इसे लोकतांत्रिक नेतृत्व भी कहते हैं। लोकतांत्रिक नेता समूह के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए बनाये जाने वाले नीतियों एवं योजनाओं का निर्धारण करने के लिए सभी प्रमुख सदस्यों से विचार विमर्श करता है और जो बहुमत से सहमति होते हैं उन योजनाओं एवं नीतियों को लागू करता है इस प्रकार के पेतृत्व में अधिकांषतः समूह द्वारा नियुक्त होता है प्रजातांत्रिक नेता का उद्देश्य अपने स्वार्थो की पूर्ति करना नहीं बल्कि समूह का अधिकतम कल्याण करना होता है।

7.8 प्रजातांन्त्रिक एवं निरंकुश नेता में अन्तर

नेतृत्व की विधियों और प्रकृति तथा उद्देश्यों के आधार पर निरंकुष तथा प्रजातांत्रिक नेतृत्व के अन्तर को निम्म रूप में समझा जा सकता है।

निरंकुश नेतृत्व	प्रजातान्त्रिक नेतृत्व
1. निरंकुश नेतृत्व में नेता स्वेच्छाचारी होता है। वह समूह की सभी नीतियों का निर्धारण स्वयं ही करता है जिसमें वह अपने हितों को सर्वोच्च स्थान देता है	**1.** प्रजातान्त्रिक नेतृत्व में नीतियों का निर्धारण समूह द्वारा होता है। नेता तो केवल एक प्रतिनिधि के रूप में इन नीतियों की रूपरेखा मात्र बनाता है। **2.** प्रजातांन्त्रिंक नेतृत्व में विचार विमर्श के द्वारा जो नीति

2. निरंकुश नेता कार्य की सम्पूर्ण योजना एक बार में नहीं बनाता बल्कि एक-एक कार्य का आदेश देता है। इस प्रकार यह अनिश्चित नेतृत्व है।	निर्धारित होती है उसके आधार पर भविश्य में किये जाने वाले कार्य की सम्पूर्ण योजना पहले की बना ली जाती है। इससे नेतृत्व में निष्चितता आ जाती है।
3. निरंकुश नेतृत्व में सत्ता का केन्द्रीकरण किसी एक व्यक्ति या समूह में ही हो जाता है तथा वह प्रयत्न किया जाता है कि सत्ता का दूसरे समूह में हस्तान्तरण न हो।	**3.** प्रजातान्त्रिक नेतृत्व में वास्तविक सत्ता सम्पूर्ण समूह के हाथों में होती है। साथ ही कार्यकुशल और परिश्रमी व्यक्तियों के बीच सत्ता सदैव हस्तान्तरित होती रहती है।
4. परिणाम के दृष्टिकोण से निरंकुश नेतृत्व समूह में चापलूसी, आलस्य, तनाव, भय और संकीर्णता को बढ़ावा देता है।	**4.** प्रजातांन्त्रिक नेतृत्व में तत्परता, साहस,आत्मनिर्भरता, कार्यशीलता तथा मित्रता जैसे गुणों की वृद्धि होती है।
5. निरंकुश नेतृत्व एक पंगु ओर पराश्रित समाज का निर्माण करता है ,जिसमें नेता के निर्देशों के बिना समूह एक कदम भी आगे नहीं गए सकता।	**5.** प्रजातान्त्रिक नेतृत्व एक आत्मनिर्भर और चेतन समाज का निर्माण करता है। इसमें कुछ समय के लिए नेता की अनुपस्थिति में भी समाज के संगठन को बनाये रखा जा सकता है।

यद्यपि देखा जाय तो स्पष्ट होता है कि निरंकुश और प्रजातान्त्रिक नेतृत्व का उपर्युक्त भेद उनके स्रोत पर आधारित होता है। निरंकुश नेतृत्व किसी बाहरी समूह से शक्ति ग्रहण करता है ओर इसलिए उसे उस समूह की अधिक चिन्ता नहीं होती है। जबकि प्रजातांन्त्रिक नेतृत्व में शक्ति का वास्तविक स्रोत वह समूह स्वयं होता है जिसमें एक नेता अपनी विभिन्न आवश्कताओं को पूरा करता है। ऐसी स्थिति में उस समूह को आत्म-चेतन तथा संगठित बनाना प्रजातांन्त्रिक नेता का पहला दायित्व होता है।

7.9 सारांश

नेता अपने समूह के सदस्यों को अपने व्यवहार एवं कार्यकलापों से प्रभावित करते हुए समूह के लक्ष्य एवं नीतियों को निष्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है तथा स्वयं भी समूह के व्यवहार से प्रभावित होता है।
कई बार नेतृत्व एवं प्रभुत्व को समान अर्थो में प्रयोग किया जात है पर प्रस्तुत इकाई में इनके अन्तर को सुस्पष्ट करते हुए नेतृत्व की विशेषताओं का विस्तृत वर्णन किया है।

यहॉ यह बताना समीचीन होगा कि अगर नेतृत्व की प्रकृति को पूर्णतः समझने के लिए नेता के कार्यों का वर्णन किया है तांकि छात्र-छात्राऐं नेतृत्व की प्रकृति को समझें। नेतृत्व के मुख्यतः दो प्रकार के कार्य होते हैं-**1-** प्रधान कार्य **2-** गौण कार्य

विभिन्न समाज मनोवैज्ञानिकों ने नेता के कई प्रकार एवं शैलियों का वर्णन किया है प्रस्तुत इकाई में हमने बोगार्डस**,** किम्बलयंग एवं लिपिट एवं व्हाईट के वर्गीकरण का वर्णन करते हुए प्रजातांत्रिक एवं निरंकुश नेतृत्व का विस्तृत रूप से वर्णन किया है ओर अन्त में सत्ताधारी एवं लोकतांत्रिक नेतृत्व के अन्तरों का वर्णन किया है।

7.10 शब्दावली

- **नेता:** नेता समूह का वह सदस्य होता है जो अन्य लोगों से प्रभावित होने की अपेक्षा अपनी इच्छाओं के अनुसार व्यवहार करने हेतु उन्हें अधिक प्रभावित करता है।
- **नेतृत्व:** अन्य व्यक्तियों के व्यवहारों को नियंन्त्रित एवं निर्धारित करने की योग्यता के आधार पर प्रभुत्व एवं प्रतिष्ठा की प्रास्थिति प्राप्त करना नेतृत्व कहा जाता है।

7.11 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

1- किसी संगठन या कार्यालय में कार्यरत अधिकार को कहते हैं-

(अ) नौकरशाह नेता (ब) निरंकुश नेता

(स) विशेषज्ञ नेता (द) प्रजातांत्रिक नेता

2- समूह के सदस्यों की सहमति द्वारा नियुक्त नेता होता है

(अ) निरंकुश नेता (ब) प्रजातांत्रिक नेता

3- निरंकुश नेता समूह के अधिकार अपने पास रखता है।

(अ) सत्य (ब) असत्य

4- बोगार्डस ने नेतृतव के प्रकार बताये हैं।

(अ) **5** (ब) **6** (स) **7** (द) **4**

5- प्रजातांत्रिक नेतृतव सफल माना जाता है क्योंकि-

(अ) नेता समूह के सदस्यों द्वारा नियुकत होता है।

(ब) समूह के कल्याण के प्रति जागरूक होता है

(स) विचार विमर्स के पष्चात् निर्णयों को लागू करता है

(द) उपरोक्त सभी।

6- नेतृत्व एवं प्रभुत्व में कोई अन्तर नहीं है-

(अ) सत्य (ब) असत्य

उत्तर: **1.**(अ) **2.** (ब) **3.** (अ) **4.** (अ) **5.** (द) **6.** (ब)

7.12 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. डा**0** सिंह ए**0**के**0**;समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा; मोतीलाल बनारसी दास ,बंग्लो रोड**,**नई दिल्ली।
2. डा**0** श्रीवास्तव डी**0** एन**0**; व्यक्तित्व मनोविज्ञान; साहित्य प्रकाशन रोड**,** आगरा।
3. डा**0** सिंह ए**0**के**0** ; व्यक्तित्व मनोविज्ञान।
4. डा**0** ओझा राजकुमार ;मनोविज्ञान के सिद्धान्त एवं सम्प्रदाय;विनोद पुस्तक मन्दिर**,** आगरा।
5. बी**0** कुप्पुस्वामी ; समाज मनोविज्ञान एवं परिचय; हरियाणासाहित्य अकादमी**,** चण्डीगढ़।
6. लूनिया बी**0**एन**0**; भारतीय सभ्यता तथा संस्कृति का विकास।

7.13 निबन्धात्मक प्रश्न

1. नेतृत्व से आप क्या समझते हैं **?** इसकी विशेषताओं का वर्णन कीजिये।
2. नेतृत्व की परिभाषा देते हुए उसके कार्यो को बताइये**?**
3. प्रजातांत्रिक एवं सत्ताधारी नेतृत्व के बारे में बताते हुए दोंनों में अन्तर स्पष्ट कीजिये।
4. नेतृत्व के विभिन्न प्रकारों अथवा शैलियों का उल्लेख कीजिये।
5. टिप्पणियाँ लिखिये-

   i. प्रभुत्व एवं नेतृत्व

   ii. निरंकुश एवं प्रजातांत्रिक नेतृत्व

इकाई-8 सामाजिक समस्याएँ एवम सामाजिक परिवर्तन: अर्थ, विशेषताएँ एवं प्रकार (Social problem and Social change: Meaning, Characteristics and Types)

इकाई संरचना

8.1 प्रस्तावना

8.2 उद्देश्य

8.3 सामाजिक समस्या

8.4 सामाजिक समस्याओं के प्रकार

8.5 सामाजिक समस्या के विकास में सम्मिलित विभिन्न चरण

8.6 सामाजिक परिवर्तन का अर्थ

8.7 सामाजिक परिवर्तन की विशेषताएँ

8.8 सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया

8.9 सामाजिक परिवर्तन के प्रकार

8.10 सारांश

8.11 शब्दावली

8.12 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

8.13 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

8.14 निबंधात्मक प्रश्न

8.1 प्रस्तावना

सामाजिक समस्या (Social Problem)से तात्पर्य एक ऐसी स्थिति से होता है जिसमें समाज का एक खंड या एक बड़ा भाग प्रभावित होता है तथा जिसके ऐसे हानिकारक परिणाम होते हैं या हो सकते हैं जिनका मात्र सामूहिक रूप से ही समाधान संभव है जैसे भारत में व्याप्त बेरोजगारी की समस्या को ही लिया जाए| यह एक सामाजिक समस्या है क्योंकि इससे समाज का एक बड़ा भाग या वर्ग विशेषकर युवा वर्ग प्रभावित है तथा इसका निदान किसी एक युवक के प्रयास से संभव ना हो कर युवकों, सरकार तथा अन्य गैर सरकारी संस्थानों के संयुक्त प्रयास से ही संभव है| निर्धनता, जनसंख्या विस्फोट, युद्ध, असंतोष, आतंकवाद आदि सामाजिक समस्या कुछ उदाहरण हैं|

समय बीतने के साथ-साथ व्यक्ति और समाज दोनों में ही परिवर्तन होना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। व्यक्ति और समाज दोनों में ही परिवर्तन होते रहे है और होते रहेंगे। व्यक्ति और उसके द्वारा बनाई गई वस्तुओं एवं मान्यताओं में निरन्तर परिवर्तन होता रहता है, फलस्वरूप व्यक्ति के विचार, मूल्यों, रहन-सहन, जीवन-शैली, आदत, फैशन, खान-पान आदि में भी परिवर्तन होते रहते हैं, परिवर्तन प्रकृति का नियम है, और सामाजिक व्यवस्था को गतिशील बनाएं रखने के लिए सामाजिक परिवर्तन भी आवश्यक है। अनेकों सामाजिक परिस्थितियों के कारण व्यक्ति में तथा व्यक्ति के कारण समाजिक अवस्थाओं में परिवर्तन होते रहते हैं।

आज से यदि हम लगभग 50 वर्ष पूर्व भारतीय समाज के लोंगों का अध्ययन करें, तो यह स्पष्ट हो जायेगा, कि 50 वर्ष पूर्व व्यक्तियों की अपेक्षा आज के व्यक्तियों के रहन-सहन, खान-पान, आदत, फैशन, आदि में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए है आज समाज में आध्यापक की उतनी प्रतिष्ठा और सम्मान नहीं है। जितना कि आज से पचास वर्ष पूर्व हुआ करता था। यू तो सामाजिक परिवर्तन समाजशास्त्र का मुख्य विषय है लेकिन आधुनिक युग में इस महत्वपूर्ण समस्या के अध्ययन की ओर मनोवैज्ञानिकों का ध्यान विशेष रूप से आकर्षित हुआ है। समाजिक परिवर्तन प्रागैतिहासिक, ऐतिहासिक अथवा आधुनिक सभी प्रकार के समाजों की विशेषता रही है, इस परिवर्तन की गति कमी तीव्र हाती है तो कभी मन्द समूह के आकार में वृद्धि अर्थव्यवस्था में परिवर्तन, सामाजिक संरचना में परिवर्तन धार्मिक विश्वासों एवं क्रियाओं का नवीन महत्व, विज्ञान का विकास, युद्ध और आपदा कुछ ऐसे तत्व है जो परिवर्तन सम्बन्धित है।

8.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:-

- सामाजिक समस्या के बारे में जान सकेंगे।
- सामाजिक समस्याओं के प्रकार जान सकेंगे।
- सामाजिक समस्या के विकास में सम्मिलित विभिन्न चरण जान सकेंगे।
- सामाजिक परिवर्तन के अर्थ को समझ सकेंगें।

- सामाजिक परिवर्तन के फलस्वरूप सामाजिक संरचना में परिवर्तन को समझ सकेंगे।
- सामाजिक परिवर्तन की विशेषताओं को जान सकेंगे।

सामाजिक परिवर्तन के विभिन्न प्रकारों के बारे में जान सकेंगे।

8.3 सामाजिक समस्या:

सामाजिक समस्याओं को उसकी विशेषताओं के आधार पर अच्छी तरह से समझा जा सकता है जो इस प्रकार हैं:-

(i) सामाजिक समस्याएं आदर्श तथा सामाजिक मानक (Social Norms) से एक प्रकार का विचलन (Deivation) होती हैं|

(ii) सामाजिक समस्याओं की उत्पत्ति का कोई समान आधार होता है|

(iii) सभी सामाजिक समस्याएं कमोबेश एक दूसरे से अंतर संबंधित होती हैं|

(iv) सभी सामाजिक समस्याओं का जड़ सामाजिक ही होता है|

(v) सभी सामाजिक समस्याओं का परिणाम भी सामाजिक ही होता है क्योंकि इसका प्रभाव प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रुप से पूरे समाज पर ही पड़ता है|

(vi) सामाजिक समस्याओं के समाधान का दायित्व वैयक्तिक (Individual) ना होकर सामाजिक ही होता है दूसरे शब्दों में किसी भी सामाजिक समस्या का समाधान किसी एक व्यक्ति के प्रयास से संभव ना होकर पूरे समाज के प्रयास से ही संभव होता है|

8.4 सामाजिक समस्याओं के प्रकार

सामाजिक समस्याओं के प्रकार के बारे में समाजशास्त्रीय एवं समाज मनोवैज्ञानिकों द्वारा जो विचार उपस्थित किए गए हैं, उनका विश्लेषण करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि सामाजिक समस्याओं को निम्नलिखित तीन श्रेणियों में बांटा जा सकता है

1- **प्राकृतिक कारणों से उत्पन्न सामाजिक समस्याएं-** ऐसी सामाजिक समस्या की उत्पत्ति प्राकृतिक कारणों से ही होती है जो सामाजिक तंत्र को अस्त-व्यस्त कर देती है अकाल, बाढ़, भूकंप आदि से उत्पन्न सामाजिक समस्याएं इस श्रेणी की समस्याएं हैं|

2- **सुधारात्मक समस्याएं-** इस श्रेणी की समस्याओं का स्वरूप कुछ ऐसा होता है कि उसके कुप्रभावों के बारे में आम सहमति है परंतु उनके समाधान के बारे में आम सहमति नहीं होती है| जैसे गरीबी, अपराध, मादक पदार्थों का सेवन आदि से उत्पन्न समस्याएं इस श्रेणी के सामाजिक समस्याएं हैं|

3- **नैतिक समस्याएं-** इस श्रेणी की सामाजिक समस्या कुछ ऐसी होती है जिनकी प्रकृति एवं कारणों के बारे में आम सहमति नहीं होती है जैसे तलाक, विधवा-विवाह, जुआ आदि की समस्या एवं इस श्रेणी की समस्या में आती हैं| स्पष्ट हुआ कि सामाजिक समस्या के कई प्रकार हैं|

8.5 सामाजिक समस्या के विकास में सम्मिलित विभिन्न चरण

स्पेक्टर तथा क्रिट्सयूस (Spector and Kitsues, 1977) ने सामाजिक समस्या के विकास में निम्नांकित चार कारकों को कार्यान्वित की स्थिति भी कहा जाता है-

1- आंदोलन की अवस्था (Stage of Agitation)
2- तर्कसंगत एवं सहयोग की अवस्था (Stage of Legitimation and cooperation)
3- अधिकारी तंत्र एवं उसकी प्रतिक्रिया की अवस्था (Stage of bureaucratization & its reaction)
4- आंदोलन के पुनरुदभवन की अवस्था (Stage of re-emergence of movement)

इन चारों अवस्थाओं का वर्णन निम्नांकित है-

1- **आंदोलन की अवस्था (Stage of Agitation)-** इस अवस्था में व्यक्ति समाज में उत्पन्न में विशेष स्थिति से असंतुष्ट होकर उसके विरुद्ध आंदोलन करता है जिनका मूल उद्देश्य उस स्थिति के प्रति अधिक से अधिक लोगों का ध्यान आकृष्ट करना होता है ताकि स्थिति को सुधारने के लिए तुरंत कार्यवाही की जा सके इस तरह का आंदोलन पीड़ित व्यक्तियों द्वारा या उनके बदले सामाजिक कार्यकर्ताओं द्वारा भी चलाया जा सकता है जैसे बाल अपराध बाढ़ अकाल से पीड़ित व्यक्तियों की सामाजिक समस्या से निबटने के लिए आंदोलन पीड़ित व्यक्तियों के बजाय सामाजिक कार्यकर्ताओं तथा सुधारकों द्वारा ही अधिक चलाया जाता है कभी-कभी इस तरह का आंदोलन कुछ कारणों जैसे इनसे संबंधित दावों का स्पष्ट होना आंदोलन करने वाले समूह का निर्बल होना आदि में विफल भी हो जाता है|

2- **तर्कसंगत ई एवं सहयोग की अवस्था** (Stage of bureaucratization & its reaction) जब समाज के प्रबुद्ध व्यक्ति या सत्तारूढ़ व्यक्ति समस्या का समर्थन करते हैं या समस्या का होना मान लेते हैं तो वह समस्या तर्कसंगत बन जाती है ऐसे व्यक्तियों को समस्या से पीड़ित व्यक्तियों का वैद्य अधिवक्ता माना जाता है शायद यही कारण है कि समस्या के समाधान पर आयोजित सभा में इन्हें बहस के लिए सम्मिलित कर लिया जाता है शायद यही कारण है कि किसी शैक्षिक समस्या का समाधान के लिए निर्मित शैक्षिक समितियों में छात्रों एवं शिक्षकों का प्रतिनिधित्व दे दिया जाता है|

3- **अधिकारी तंत्र एवं उसकी प्रतिक्रिया की अवस्था** (Stage of bureaucratization & its reaction)- सामाजिक समस्या के विकास की इस तीसरी अवस्था में समस्या समाधान से निबटने के

लिए व्यक्तियों का ध्यान सरकारी तंत्र और उनकी कार्यकुशलता पर जाता है| यदि सरकारी तंत्र अकुशल साबित हुआ तो उन्हें सफलता नहीं मिल पाती है और समस्या एक आंदोलन का स्वरूप धारण कर सकती है तथा किसी सामाजिक समस्या का स्वरूप उपद्रवी होगा या नहीं यह इस बात पर आधारित होता है कि सरकारी तंत्र किस सीमा तक समस्या का समाधान करने में सफल हो पाते हैं तथा किस सीमा तक वे अपने निहित स्वार्थों को समस्याओं से अलग रख पाते हैं|

4- **आंदोलन के पुनः उद गमन की अवस्था** (Stage of re-emergence of movement)- इस अवस्था में पीड़ित लोग तथा उनके नेतागण को यह विश्वास होने लगता है कि अधिकारियों एवं समुचित निर्णय लेने वालों द्वारा समस्या की गंभीरता को ठीक ढंग से समझा नहीं जा रहा है| फल स्वरुप उनके भावनाएं पुनः जागृत हो उठती हैं तथा संबंध सामाजिक समस्या के समाधान के लिए वे आंदोलन करने के लिए बाध्य हो जाते हैं|

कुछ प्रमुख सामाजिक समस्याओं का वर्णन हम आने वाली इकाईयों में करेंगे|

8.6 सामाजिक परिवर्तन का अर्थ

सामाजिक परिवर्तन का तात्पर्य समाज में होने वाले परिवर्तनों से होता है और इन परिवर्तनों में केवल उन परिवर्तनों को सम्मिलित किया जाता है, जो महत्वपूर्ण और विस्तृत प्रकृति के होते हैं एवं जो पूरे समाज में हाते है जैसे - यदि ज्यादातर तो परिवारों में पुत्र या पुत्री की शादी बिना दहेज के होने लगे, ओर लोग इसे सहर्ष स्वीकार कर ले तो इसे सामाजिक परिवर्तन माना जायेगा।

फिशर (1983) ने सामाजिक परिवर्तन को परिभाषित करते हुए कहा है कि -

‘‘ सामाज के सामाजिक संरचना में यानी समाज के प्रचलित मूल्यों, मानकों, भूमिकाओं तथा अन्य इसी तरह के तत्वों जिनसे होकर रहन-सहन के मूल अवस्था की अभिव्यक्ति हाती है परिवर्तन को सामाजिक परिवर्तन कहा जाता है।

अतः सामाजिक परिवर्तनों का अर्थ सामाजिक क्षेत्र में परिवर्तन अथवा सामाजिक सम्बन्धों में परिवर्तनों के फलस्वरूप समाज में रहने वाले व्यक्यिों का व्यवहार परिवर्तीत हो जाता है निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं।

(1) सामाजिक परिवर्तनों के फलस्वरूप सामाजिक संरचना में परिवर्तन होता है।

(2) सामाजिक परिवर्तन से सामाजिक सम्बन्धों में परिवर्तन होता है।

(3) सामाजिक परिवर्तन में सामाजिक प्रक्रियाओं, अन्तर्क्रियाओं तथा संगठन में परिवर्तन प्रदार्शित होता है।

(4) सामाजिक परिवर्तन से लोगों की कार्य- शैली, एवं विचारों मैं परिवर्तन आता है।

(5) सामाजिक परिवर्तन के फलस्वरूप जीवन के मूल्यों तथा भूमिकाओं में परिवर्तन होता है।

परिवर्तन एक व्यापक प्रक्रिया है समाज के किसी भी क्षेत्र में विचलन को सामाजिक परिवर्तन कहा जा सकता है सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, नैतिक, भौतिक, आदि सभी क्षेत्रों में हाने वाले परिवर्तन को सामाजिक परिवर्तन कहा जाता है परिवर्तन एक सर्वकालिक घटना है यह किसी न किसी रूप में हमेशा चलने वाली पक्रिया है।

8.7 सामाजिक परिवर्तन की विशेषताएँ

सामाजिक परिवर्तन प्रायः समाज के मूल्यों भूमिकाओं तथा मानको में परिवर्तन से हाता है और समाज के ज्यादातर व्यक्तियों को मान्य होते हैं, अतः सामाजिक परिवर्तन से सम्बन्धित प्रमुख विशेषताएँ निम्न है।

(1) सामाजिक परिवर्तन एक सर्वभौमिक प्रक्रिया है- सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया संसार के सभी समाजों में देखी गई है सामाजिक परिवर्तन की ये गति किसी समाज में तीव्र हाती है और किसी समाज में धीमी होती है। भौतिकता के विकास के साथ-साथ संसार के सभी समाजों में ये परिवर्तन तीव्र गति से हुए है ग्रामीण जीवन हो या शहरी लोगों के मूल्यों विचारों अभिवृतियों, परम्पराओं, सम्बन्धों आदि में भी परिवर्तन हो रहे है

(2) सामाजिक परिवर्तन एक जटिल प्रक्रिया है- प्रायः समाज भौतिक और अभौतिक दोनों प्रकार के परिवर्तन देखे जाते हैं, भौतिक परिवर्तन प्रत्यक्ष होते हैं जो हमें दिखाई देते हैं और अभौतिक परिवर्तन अप्रत्यक्ष होते हैं जो हमें दिखाई नहीं देते हैं सामाजिक परिवर्तन का अर्थ अभौतिक परिवर्तन से होता है जो प्रत्यक्ष रूप से दिखाई नहीं देता है, समाज में रहने वाले लोगों के विचारों भावों अभिवृतियों, मान्यताओं तथा मूल्यों में परिवर्तन अप्रत्यक्ष रूप से होता है, उसका आभास नहीं हो पाता है।

(3) सामाजिक परिवर्तन एक निश्चित प्रक्रिया है- कोई भी ऐसा समाज या क्षेत्र नहीं है, जिसमें अभी तक किसी भी प्रकार का कोई सामाजिक परिवर्तन न हुआ हापे समाज में होने वाले परिवर्तनों से न तो बचा जा सकता है और न ही उसे रोका जा सकता है। सभ्यता के विकास के साथ-साथ लोगों के विचारों, मूल्यों, भावो, परम्पराओं अभिवृतियों में परिवर्तन आना एक स्वभाविक एवं निश्चित प्रक्रिया है।

(4) सामाजिक परिवर्तन अपूर्वनुमेय होता है- सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया कभी रूकती नहीं है लेकिन इस सम्बन्ध में भविष्यवाणी करना कि सामाजिक परिवर्तन किस दिशा में होता व किस मात्रा में होगा, असम्भव है ज्यादा से ज्यादा हम ये कह सकते हैं, कि आने वाले समय में इस क्षेत्र में इस तरह का परिवर्तन निश्चित होगा, लेकिन ये परिवर्तन कब और कितनी मात्रा में होगा यह कहना मुश्किल होगा, जैसे भारतीय समाज में स्त्री शिक्षा में काफी परिवर्तन हुए है और हो रहे है। परन्तु निश्चित रूप से हम ये नहीं कह सकते हैं कि इस तरह के परिवर्तन का स्वरूप आगे आने वाले समय में क्या होगा ?

(5) सामाजिक परिवर्तनों की गति अनियमित होती है- सामाजिक परिवर्तन की गति नियमित न होकर अनियमित होती है कभी इनकी गति तीव्र हो जाती है तो कभी मन्द / किसी समाज में परिवर्तन की गति का अनुमान हम

तुलना के आधार पर करते है विभिन्न समयों पर हुए परिवर्तन की तुलना करके इसकी गति का मापन करते है। जैसे - भारत में स्वतंत्रता से पूर्व स्त्री शिक्षा व तकनीकी विकास के परिवर्तन की गतिकाफी धीमी थी लेकिन स्वतंत्रता के पश्चात इनमें स्त्री शिक्षा व तकनीकी परिवर्तन में काफी तीव्र गति से हुए है।

(6) सामाजिक परिवर्तन में क्रमिक प्रतिक्रिया श्रृंखला होती है- किसी भी समाज में कोई सामाजिक परिवर्तन अचानक नहीं होते हैं बल्कि प्रत्येक समाजिक परिवर्तन का काई न कोई परिप्रेक्ष्य होता है और ये परिवर्तन एक क्रमबद्ध श्रृंखला में होते हैं। समाज के मूल्यों मानको भूमिकाओं आदि के अनेक अंश होते हैं किसी एक अंश में परिवर्तन होने वह दूसरे अंश को परिवर्तित कर देता है। और ये प्रक्रिया तब तक चलती रहती है जब तक कि सामाजिक सम्बन्ध में पूर्ण रूप से परिवर्तन न हो जाए जैसे सरकार द्वारा स्त्री शिक्षा को बढ़ावा देने के फलस्व्वरूप उनको अधिकारों के प्रति जागरूकता आई है, रोजगार के प्रति जागररूक हुई है फल स्वरूप उनमें आर्थिक स्वतंत्रता आई है अतः सामाजिक परिवर्तन में एक क्रमिक प्रतिक्रिया श्रृंखला होती है।

(7) सामाजिक परिवर्तनों से समूह में महत्वपूर्ण परिवर्तन होता है - प्रसिद्ध समाजशास्त्री मूरें (1974) ने अपनी पुस्तक सामाजिक परिवर्तन में लिखा है कि सामजिक परिवर्तन सामाजिक व्यवस्थ का अंग हे आपैर सामाजिक परिवर्तनों के कारण सामाजिक व्यवसथा के प्रत्येक पहलू में परिवर्तन हो सकता है। सामाजिक परिर्वन समूह के लिए इसलिए महत्वपूर्ण हो सकते हैं क्योंकि सामाजिक परिर्वतनों के कारण न केवल सामाजिक सम्बन्धों व सामाजिक संरचना में परिवर्तन होते हैं, बल्कि लोगों की जीवन शैली कार्य-प्रणाली, सामजिक संगठन, सामाजिक अन्तः क्रियाओं में भी परिवर्तन होते हैं। इसीलिए सामाजिक परिवर्तनों को सामाजिक विरासत के अन्तर्गत रखा जा सकता है।

(8) सामाजिक परिर्वन में प्रतिरोध भी होता है - जब-जब सामाजिक परिवर्तन की आग समाज में सुलगती है कुछ लोग उस आग पर पानी फेकने के लिए तत्पर हो जाते हैं परिणाम स्वरूप सामाजिक परिर्वन की गति धीमी हो जाती है उदाहरण के लिए भारत सरकार द्वारा दलितों को सामाजिक न्याय एवं बराबरी का दर्जा दिलाने के लिए मंडल कमीशन की सिफारिशे लागू करके महत्वपूर्ण सामाजिक परिर्वन लाना चाहती थी, जिसका व्यापक प्रतिरोध हुआ था। अतः सामाजिक परिवर्तन में प्रतिरोध का भी गुण पाया जाता है।

(9) कभी-कभी सामाजिक परिवर्तन में आकस्मिकता का गुण पाया जाता है - प्रायः कभी-कभी ऐसा भी देखा गया है कि सामाजिक परिवर्तन बहुत ही आकस्मिक ढंग से हो जाता है अर्थात कुछ सामाजिक परिवर्तन बहुत कम समय के प्रयास में हो जाते हैं। प्रायः ऐसे परिवर्तनों का सम्बन्ध उन मानको या मूल्यों के परिवर्तनों के लिए तत्पर रहते हैं और ऐसे स्थिति में लोगों को सिर्फ एक प्रभावशाली नेतृत्व का मात्र इन्तजार रहता है। जैसे पहले भारतीय समाज में सती प्रथा का चलन था और इस प्रथा के प्रति जनता में भी एक तरह की व्यग्रता और बेचैनी थी और राजा राम मोहन राय का नेतृत्व मिलते ही भारतीय समाज से सती प्रथा का प्रचलन समाप्त हो गया। और

शायद यही कारण था कि इस तरह का सामाजिक परिवर्तन अन्य सामाजिक परिवर्तनों की तुलना में काफी आसानी से और बहुत जल्दी हो गया।

विलवर्ट मूरे के अनुसार ''सामाजजिक परिवर्तन यद्यपि एक अनिवार्य नियम है लेकिन अतीत में होने वाले परिवर्तन की तुलना में वर्तमान से सम्बन्धित सामाजिक परिवर्तन कही अधिक स्पष्ट होते हैं क्योंकि इनका सम्बन्ध हमारे निजी अनुभवों से होता है, दूसरे जो परिवर्तन सामान्य गति से होते हैं वे हमारे सामाजिक जीवन को कही अधिक गहराई से प्रभावित करते है क्योंकि उनकी उपयोगित को समझकर उनहें जीवन के एक सामान्य ढंग के रूप में ग्रहण कर लिया जाता है''।

8.8 सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया

सामाजिक परिवर्तन की प्रकृति से यह स्वष्ट हो जाता है कि विभिन्न समाजों में सामाजिक परिवर्तन का कोई निश्चित स्वरूप नहीं होता है, यद्यपि सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया कई अवस्थाओं से होकर गुजरती है अधिकांश तीन अवस्थाओं को महत्वपूर्ण बताया है।

- पिघलने की अवस्था
- परिवर्तन की अवस्था
- पुनः ठोस करने की अवस्था

(i) पिघलने की अवस्था- सामाजिक परिवर्तन की यह पहली अवस्था है इस अवस्था में व्यक्यिों को पुराने घिसे-पिटे सामाजिक सम्बन्धों का त्याग करके उनकी जगह पर नये सम्बन्धों को विकसित करने के लिए एक तरह से पिघलाया जाता है उस अवस्था में वास्तव में नये मूल्यों एवं मानकों की आवश्यकताओं की पहचान लोगों में करायी जाती है ताकि वे उसकी आवश्यकताओं को समझें और उसके प्रति स्वयं भी आकर्षित हो महात्मा गॉधी ने छुआछूत जैसी सामाजिक समस्या को दूर करके एक क्रान्तिकारी सामाजिक परिवर्तन लाने के उद्देश्य से पहले लोगों को इसके दुष्कर एवं हानिकारक प्रभाव के प्रति जागरूक किया और फिर उसका परित्याग करने की आवश्यकता उत्पन्न की।

(ii) सामाजिक परिवर्तन की इस अवस्था में लोग इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि उन्हें अपने पुराने मूल्यों एवं मानकों का परित्याग कर देना चाहिए और उसवकी जगह पर नये मूल्यों एवं मानकों के अनुरूप व्यवहार करना चाहिए। इस तरह की अवस्था में लोग जैसे- बाल - विवाह, दहेज प्रथा, पर्दा प्रथा, छूआछूत जैसी सामाजिक बुराई को हटाने का निश्चित रूप से निर्णय ले लेते हैं। और इस अवस्था में सामाजिक परिवर्तन का जन्म होता है।

(iii) पुनः ठोस करने की अवस्था- इस आन्तिम अवस्था में लोगों द्वारा स्वीकृत किये गये नये मूल्यों एवं मानकों को सुदृढ़ किया जाता है जिससे ज्यादा से ज्यादा लोग उसे व्यवहार में लाये और अमल करें।

सती प्रथा, बाल-विवाह, हुआ-छूत जैसी सामाजिक बुराईयाँ अब ना के बराबर मिलती है। प्रायः सामाजिक परिवर्तन की पहली अवस्था में सामाजिक परिवर्तन की आवश्यकता महसूस की जाती है दूसरी अवस्था में सामाजिक परिवर्तन का जन्म होता है और तीसरी अवस्था में सामाजिक परिवर्तन का संपोषण कर उसे सुदृढ़ बनाया जाता है। डाल्टन के अनुसार सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में निहित चरण निम्न है।

- आत्मा सम्मान के प्रति प्रारंम्भिक खतरा- इस अवस्था में समाज में प्रचालित मूल्यों तथा मानको के प्रति लोगों के मन में एक ओर तो खतरा उत्पन्न हो जाता है परन्तु वही दूसरी और वो उसे छोड़ने का साहस नहीं कर पाते है क्योंकि इससे उनके आत्मा - सम्मान एवं प्रतिष्ठा को ठेस पहुँचती है जिस समय वाल- विवाह का चलन था उस समय जनता में इस प्रथा के प्रति असंतोष व्याप्त था क्योंकि विवाह के बाद उनका बचपन छिन जाता था कभी-कभी पति की मृत्य के बाद उन्हें अनेक सामाजिक परेशानियों का सामना करना पड़ता था लेकिन इस प्रथा का विरोध करने का साहस कोई नहीं करता था क्योंकि इस प्रथा से सम्बन्धित सामाजिक मूल्यों के प्रति उनके आत्म सम्मान को ठेस पहॅुचती थी। और धीर-धीरे लोगों ने इसका विरोध करना शुरू किया।
- पुराने सामाजिक सम्बन्धों को तोड़ना- इस अवस्था में लोग पुराने सामाजिक मूल्यों मानकों, आदि को तोड़ने का हढ निश्चय कर लेते हैं, और समाज उसकी जगह पर नए मूल्यों एवं मानकों को पूर्ण सहमति दे देते हैं और इस अवस्था में सामाजिक परिवर्तन का जन्म हो जाता है जैसे - समाज सती प्रथा को बन्द करने की पूर्ण स्वीकृत दे देता है।
- परिवर्तन की सुदृढ़ता- इस अवस्था में परिवर्तन की सुदृढता को और मजबूत किया जाता है और लोग समय हुए परिवर्तन के अनुरूप सामाजिक मूल्यों एवं मानकों का निमार्ण करते है जिससे लोग उन नियमों मूल्यों एवं मानकों के अनुरूप चिन्तन कर सके और इसके अनुरूप व्यवहार कर सकें, उदाहरण के लिए भारतीय समाज में बाल- विवाह की जगह पर वयस्क विवाह का सामाजिक परिवर्तन सुदृढ़ हो चुका है। और अब हमारा चिन्तन भी उसी के अनुरूप है।
- आत्म-विश्वास का निर्माण- सामाजिक परिवर्तनों के फलस्वरूप उससे सम्बन्धित मूल्यों, मानकों, निमाणों के प्रति विश्वास का निर्माण होता है और उसी के अनुरूप कार्य करना वे अपना मान- सम्मान समझते है उदाहरण के लिए, भारतीय समाज में वयस्क विवाह के प्रति लोगों की पूर्ण आस्था हो गई है। स्पष्ट है कि सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया कई अवस्थाओं से होकर गुजरती है और सामाजिक परिवर्तन को समझने के लिए इन प्रक्रियाओं को समझना अत्यन्त आवश्यक है।

8.9 सामाजिक परिवर्तन के प्रकार

सामाजिक परिवर्तन के प्रकार प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक काज (1974) ने सामाजिक परिवर्तन की व्याख्या सामाजिक मनोवैज्ञानिक आधार पर की हैः-

(1) अनुक्रमिक सामाजिक परिवर्तन

(2) आमूल सामाजिक परिवर्तन

(3) सांस्कृतिक परिवर्तन

(1) अनुक्रमिक सामाजिक परिवर्तन- अनुक्रमिक सामाजिक परिवर्तन से तात्पर्य जिसमें मौजूदा सामाजिक संरचना में तो परिवर्तन हो जाता है परन्तु समाज के मूल सामाजिक आर्थिक तथा राजनैतिक प्रबन्धों को कोई क्षति नहीं होती है इस ढंग का परिवर्तन मौजूदा सामाजिक संरचना को आर्थिक विस्तृत कर देता है या उसे एक नई दिशा में परिवर्तित कर देता है। उदाहरण के लिए विभिन्न प्रकार के समाजिक कल्याण सम्बन्धी नीतियों से आने वाले सामाजिक परिवर्तन इस श्रेणी के परिवर्तन के अन्तर्गत आते है। भारतीय समाज में बाल-विवाह, सती प्रथा आदि के समाप्त हो जाने से उत्पन्न सामाजिक परिवर्तन इस श्रेणी के परिवर्तन के अन्तर्गत आते है।

(2) आमूल सामाजिक परिवर्तन- आमूल सामाजिक परिवर्तन से तात्पर्य ऐसे परिवर्तनों से है जिसमें सामाजिक संरचना में व्यवस्था ही बदल जाती है तथा जिसके परिणाम स्वरूप समाज के राजनैतिक एवं आर्थिक तन्त्र पहले से बिल्कुल परिवर्तित हो जाते हैं और परिणाम स्वरूप सामाजिक संरचना के कुछ तत्वों का नाश हो जाता है और उसकी जगह पर नये तत्वों का निर्माण हो जाता है अर्थात नई व्यवस्था लागू कर राजनैतिक कारक व भारतीय समाज में अंग्रेजों भारत छोड़ो आन्दोलन उत्पन्न सामाजिक परिवर्तन इसका सबसे अच्छा उदाहरण है।

(3) सांस्कृतिक परिवर्तन- ऐसे परिवर्तन को कहा जाता है जिसमें समाज के व्यक्तियों के वयवहारों, विचारों, मूल्यों, मनोवृत्तियों मान्यताओं आदि में परिवर्तन कहते है। इस तरह के सामाजिक परिवर्तन में सामाजिक संरचना परिवर्तन नहीं आता है परन्तु लोगों के सामान्य रहन सहन एवं उनके मूल्यों में एक पूर्वग्रहित बदलाव आता है। भारतीय समाज पर पश्चिमी सभ्यता का प्रभाव का प्रभाव इसका उत्तम उदाहरण है।

तीन मुख्य परिवर्तनों के अतिरिक्त सामाजिक परिवर्तन को उसके विमा एवं दिशा के आधार पर निम्न चार वर्गों में भी विभाजित किया जा सकता है।

a. चेतन सामाजिक परिवर्तन
b. अचेतन सामाजिक परिवर्तन
c. उर्ध्वगामी सामाजिक परिवर्तन
d. अधोगामी सामाजिक परिवर्तन

(a) चेतन सामाजिक परिवर्तन:- इस श्रेणी में ऐसे परिवर्तनों को रखा जाता हे जिसमें समाज के मूल्यों एवं मानकों के लिए व्यक्तियों को तथा नेतृत्व करने वाले को काफी संघर्ष करना पड़ता है इस तरह का परिवर्तन

योजनावद्ध होता है इसके लिए समाज में रहने वाले लोगों को आन्दोलन तथा क्रान्ति करके अपनी आवाज को बुलन्द करना पड़ता है भारतीय समाज में गॉधी जी ने अंग्रजों द्वारा बनाए गए नमक कानून को तोड़ने के लिए नमक सत्याग्रह आन्दोलन चलाकर एक सामाजिक परिवर्तन लाना चेतन सामाजिक परिवर्तन का उदाहरण है।

(b) अचेतन सामाजिक परिवर्तन:- कुछ सामाजिक परिवर्तन ऐसे होते हैं जो सहज और स्वाभाविक रूप से अपने आप हो जाते हैं इसके लिए समाज के व्यक्यिों या नेताओं को कोई विशेष कोशिश नहीं करनी पड़ती है और न ही किसी विशेष आन्दोलन या अभियान का सहारा लेना पड़ता है जैसे - बाढ़, भूकम्प, महामारी, सूखा (अकाल) आदि के समय अपने आप ही सामाजिक संरचना में काफी परिवर्तन आ जाते हैं।

(c) उर्ध्वगामी सामाजिक परिवर्तन:- इसके अन्तर्गत ऐसे सामाजिक परिवर्तनों को रखा जाता जिसकी दिशा धनात्मक होती है तथा जिससे सामाजिक संरचना पहले से अधिक उन्नत हो जाती है इसमें सामाजिक मूल्यों एवे मानकों में परिपक्वता तथा वास्तविकता काफी बढ़ जाती है। उदाहरण के लिए विभिन्न प्रकार की सरकारी समाज, कल्याण नीतियों से शिक्षा पर बल, जनसंख्या की वृद्धि पर रोक, पल्स पोलियों टीकाकरण अभियान से भारतीय समाज जो धनात्मक परिवर्तन आये है वे उर्ध्वगामी सामाजिक परिवर्तन के मुख्य उदाहरण है।

(d) अद्योगामी सामाजिक परिवर्तन:- अद्योगामी सामाजिक परिवर्तन के अर्न्तगत ऐसे परिवर्तनों को रखा जाता है जिससे वास्तव में सामाज में उन्नति न होकर अवनति होती है और वर्तमान सामाजिक मूल्यों एवं मानकों को टेस पहुँचती है सिसे वर्तमान सामाजिक संरचना अस्त व्यस्त हो जाती है।

8.10 सारांश

सामाजिक परिवर्तन का क्षेत्र बहुत व्यापक है। समाज में हमारे सभी व्यवहार किसी न किसी सामाजिक नियम से प्रभावित होते हैं हम अपने सामाजिक मूल्यों के अनुसार कुछ चीजों को अच्छा समझते है और कुछ को बुरा विभिन्न आयु लिंग और प्रतिष्ठा वाले व्यक्तियों से हमारे सम्बन्ध अलग-अलग तरह के होते हैं इस प्रकार जब कभी भी इन सामाजिक नियमों, मूल्यों अथवा सामाजिक सम्बन्धों में परिवर्तन के तत्व स्पष्ट होने लगते है तब सामाजिक व्यवस्था का रूप भी बदलने लगता है परिवर्तन की इसी दशा को हम सामाजिक परिवर्तन की संज्ञा देते हैं।

8.11 शब्दावली

- **सार्वभौमिक:** सभी में (सर्वव्याप्त)
- **अपूर्वानुमेय:** जिसका पहले से कोई अनुमान
- **मूल्य:** भावनाओं क्रियाओं या अभिवृत्ति की उपत्ति है
- **अभिवृत्ति:** विचारों की अभिव्यिक्ति
- **प्रतिरोध:** रूकावट

8.12 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

सत्य / असत्य बताइये –

1. सामाजिक समस्याएं सामाजिक मानक से विचलन होती हैं| (सत्य/ असत्य)
2. **नैतिक समस्याओं के बारे में** आम सहमति नहीं होती है| (सत्य/ असत्य)
3. सामाजिक समस्याओं का हल पूरे समाज के प्रयास से ही संभव होता है| (सत्य/ असत्य)
4. सामाजिक समस्याओं का परिणाम भी सामाजिक ही होता है| (सत्य/ असत्य)
5. सामाजिक परिवर्तन का अर्थ समाज में बदलाव से है (सत्य/ असत्य)
6. सामाजिक परिवर्तन का पारिवारिक व्यवस्था पर काफी कुप्रभाव पड़ा है। (सत्य / असत्य)
7. सामाजिक परिवर्तन के नाकारात्मक परिणाम भी है जैसे सामाजिक तनाव। (सत्य / असत्य)
8. सामाजिक परिवर्तनों के कारण लोगों में अधिकार के प्रति चेतना बढ़ी है। (सत्य / असत्य)
9. सामाजिक परिवर्तन एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। (सत्य / असत्य)

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (किसी एक पर सही का निशान लगाइये) -

(1) किसी समाज की सामाजिक संरचना में परिवर्तन को कहते है ?

(i) विकास (ii) सामाजिक परिवर्तन
(iii) सामाजिक क्रान्ति (iv) सामाजिक विघटन

(2) निम्न में से किसे सामाजिक परिवर्तन कहा जायेगा

(i) वेस-भूषा में परिवर्तन (ii) पति द्वारा अपनी पत्नी का शोषण करना
(iii)आर्थिक नीतियों में परितर्वन (iv) केन्द्रक परिवारों की संख्या में वृद्धि

(3) निम्न में से कौन सी एक दशा सामाजिक परिवर्तन का स्रोत नहीं है-

(i) परम्परा (ii)शिक्षा
(iii) सामाजिक कानून (iv) औद्योगीकरण

(4) सामाजिक परिवर्तन का अर्थ है ?

(i) समाज में बदलाव (ii)समाज में अवनति होती है
(iii) जीवन पद्धतियों में परिवर्तन (iv) उपर्युक्त सभी

(5) अद्योगामी सामाजिक परिवर्तन में

(i) समाज में उन्नति होती है (ii) समाज में अवनति होती है
(iii) उन्नति और अवनति दोनों होती है (iv) इनमें से कोई नहीं

8.13 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- डा0 अरूण कुमार सिंह: समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा प्रकाशन - मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली।
- डा0 आर0 एन0 सिंह: आधुनिक सामाजिक मनोविज्ञान - अग्रवाल पब्लिकेशन्स आगरा।
- डा0 रणजीत सिंह: सामाजिक मनोविज्ञान।

8.14 निबंधात्मक प्रश्न

1. सामाजिक समस्याओं के प्रकार एवं चरण स्पष्ट कीजिए
2. अनुक्रमिक सामाजिक परिवर्तन से आप क्या समझते है?
3. अद्योगामी सामाजिक परिवर्तन क्या है ?
4. सांस्कृतिक परिवर्तन किसे कहते है ?
5. सामाजिक परिवर्तन की पहली अवस्था क्या है ?
6. डॉल्टन के अनुसार सामाजिक परिवर्तन प्रक्रिया के कितने चरण होते हैं ?
7. सामाजिक पविर्तन के प्रकारों का वर्णन कीजिए।

इकाई-9 निरक्षरता, गरीबी एवं बेरोजगारी

(Illiteracy, Poverty and Unemployment)

इकाई संरचना

9.1 प्रस्तावना

9.2 उद्देश्य

9.3 निरक्षरता

9.3.1 निरक्षरता का कारण

9.3.2 निरक्षरता दूर करने के उपाय

9.4 गरीबी

9.4.1 गरीबी का कारण

9.4.2 गरीबी के कारण उत्पन्न समस्याएँ

9.4.3 गरीबी को दूर करने के उपाय

9.4.4 गरीबी अन्मूलन हेतु कुछ योजनाएँ

9.5 बेरोगारी

9.5.1 बेरोजगारी के प्रकार

9.5.2 भारत में बेरोजगारी की स्थिति

9.5.3 भारत में बेरोजगारी के कारण

9.5.4 बेरोजगारी दूर करने हेतु सुझाव

9.5.5 बेरोजगारी दूर करने हेतु सरकारी प्रयास

9 5.6 बेरोजगारी के परिणाम

9.6 सारांश

9.7 शब्दावली

9.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

9.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

9.10 निबंधात्मक प्रश्न

9.1 प्रस्तावना

प्रत्येक समाज कुछ ऐसे नियमों और मूल्यों पर आधारित होता है, जिसकी सहायता से समाज में रहने वाले व्यक्ति एक दूसरे से सीख सकें और अपनी आवश्यकताओं को पूरा कर सकें। कभी-कभी सामाजिक परिवर्तन की स्थिति में एक समाज के सदस्यों की आवश्यकताएं और आकांक्षाऐं तो बदल जाती है। लेकिन सामाजिक ढ़ांचे में इसके अनुरूप परिवर्तन नहीं हो पाता है फलस्वरूप कुछ अवरोध या तनाव उत्पन्न हो जाते हैं और सामाजिक असन्तुलन पैदा करते हैं। सामाजिक अनुकूलन में बाधा डालने वाली दशाओं या सामाजिक जीवन को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करने वाली स्थित को हम सामाजिक समस्याओं की संज्ञा देते हैं।

सामाजिक समस्या में सामूहिकता का तत्व विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, यदि कोई बाधा सम्पूर्ण समूह के जीवन को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करने के बाद भी यदि सामाजिक संरचना से सम्बन्धित नहीं होती है तो उसे हम सामाजिक समस्या नहीं कहेंगे उदाहरण के लिए- भूकम्प, बाढ़, सूखा, आदि सामाजिक समस्याएँ होकर प्राकृतिक समस्याएँ है जबकि शिक्षावृत्ति भ्रष्टाचार, बेकारी , निर्धनता, वेश्यावृत्ति, आशीक्षा, का सम्बंध एक विशेष सामाजिक संरचना से होने के कारण हम इन्हें सामाजिक समस्या की संज्ञा देते हैं।

सामाजिक समस्या का अर्थ उन परिस्थितियों से है, जिन्हें समुदाय के अधिकांश व्यक्तियों द्वारा अपने स्थापित नियमों सामाजिक मूल्यों, तथा समूह कल्याण के विरूद्ध माना जाता है और इसलिये इनको दूर करने का प्रयत्न किया जाता है। कभी समाज के कुछ न कुछ सामाजिक समस्याएं पाई जाती है। कही इसका स्वरूप सामान्य होता है तो कही गम्भीर अशिक्षा, गरीबी, बेरोजगारी और हमारे समाज में कुछ ऐसे गम्भीर समस्याएँ है जिनका समाधान आवश्यक है क्योंकि इनका सम्बन्ध हमारे देश की प्रगति से होता हे इस इकाई में हम ऐसी ही कुछ सामाजिक समस्याओं का अध्ययन करेंगे।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:-

- सामाजिक समस्याओं के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करेंगे।
- विभिन्न सामाजिक समस्याओं आशिक्षा, गरीबी एवं बेरोजगारी के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- अशिक्षा, गरीबी व बेरोजगारी के क्या कारण के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करेंगे।
- इन सामाजिक समस्याओं के निवारण के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करेंगे।
- इन सामाजिक समस्याओं हेतु सरकार द्वारा क्या प्रयास किये जा रहें हैं। के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करेंगे।

9.3 निरक्षरता

किसी भी समाज की प्रगति के लिए शिक्षित होना अत्यन्त आवश्यक है। क्योंकि शिक्षा ही एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा व्यक्ति सर्वशिक्षा विकास होता है। और उस देश की प्रगति शिक्षा पर ही निर्भर करती है। शिक्षा के अभाव में कोई भी समाज प्रगति नहीं कर सकता है । भारत एक कृषि प्रधान देश है। और यहा की आधिकांश जनसंख्या गॉवओं मे निवास करती है और गांवों में अभी भी पढ़ाई की जगह काम को प्रधानता दी जाती है। अशिक्षा को दूर करने के लिए हर जनपद में राजीव गांधी नवोदय विद्यालयों की स्थापना की गई है, प्राथमिक शिक्षा शत-प्रतिशत नामांकन, ठहराव व लिंग भेद समाप्त करने के लिए 'मध्याहन भोजन योजना' भी संचालित है। और इस योजना से कई लाख बच्चे लाभान्वित हो रहे है । महिला शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए कस्तूरबा गॉधी आवासीय बालिका विद्यालयों की स्थापना की गई है इन विद्यालयों में निःशुल्क शिक्षा, व निःशुल्क आवासीय सुविधा प्रदान की जा रही है । शिक्षा ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा हम अच्छे - बुरे, उचित- अनुचित, लगत-सही का निर्णय कर पाते है। उचित शिक्षा व ज्ञान के अभाव में आज भी लोग दूसरों से ठगें जाते हैं।

9.3.1 निरक्षरता का कारण -

सरकार द्वारा अनेकों कार्यक्रम चलाये जाने के बावजूद भारत में अशिक्षा के कई कारण निम्न है -

- लोंगों की आर्थिक स्थिति- जिसके कारण घर के बच्चे भी काम करके पैसे कमाने को मजबूर हो जाते हैं। भारत की अधिकांश जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे अपना जीवन यापन करती है, इसलिए ऐसी स्थिति में परिवार का प्रत्येक सदस्य अपनी रोजी- रोटी व दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए काम करने की सोचता है जिसके कारण ये विद्यालय से दूर होते जाते हैं।
- सामाजिक कारण- घर से विद्यालय की दूरी अधिक होने के कारण सुरक्षा आदि की दृष्टि से लोग लड़कियों को विद्यालय भेजना कम पसन्द करते है यही कारण है कि हमारे यहाँ लड़कों की अपेक्षा लड़कियों की साक्षरता दर कम है।
- राजनैतिक कारण- सरकार द्वारा अशिक्षा को दूर करने के लिए अनेक योजनाएँ चलायी जा रही है, जैसे - निःशुल्क पाठ्य सामग्री, मिड डे मील, (मध्याहन भोजन व्यवस्था) आदि चलाई जा रही है, लेकिन भ्रष्टाचार व गलत मानसिकता के चलते इन योजनाओं का लाभ उन तक नहीं पहुँच पा रहा है।
- मनोवैज्ञानिक कारण- स्कूल जाकर ये क्या करेंगें, अगर काम करेंगें तो दो पैसे मिलेंगे इस तरह की सोच भी अशिक्षा का एक मुख्य कारण है।
- गॉवों में अभी भी शिक्षा सम्बधी कार्यक्रम ठीक तरह से लागू नहीं हो पाए है जिसके कारण अधिकांश लोग अभी भी शिक्षित नहीं हो पाए है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में अभी पढ़ाई की जगह काम को अधिक महत्व देते हैं। खासकर लड़कियों को वे पढ़ाई की जगह घर के काम काज व अपने छोटे भाई बहनों की देखरेखा मं लगा देते हैं।

- समुदाय या कमेटी ज्ञान को बांटने के लिए प्रोत्साहन का अभाव।

भारत में साक्षरता / निरक्षरता दर (प्रतिशत में)

वर्ष	पुरूष		महिला		योग	
	साक्षर प्रतिशत	निरक्षर प्रतिशत	साक्षर	निरक्षर	साक्षर	निरक्षर
1991	64.4	35.87	39.29	60.71	52.38	34.62
2001	75.65	24.35	54.16	45.84	65.38	34.62
2011	82.14	17.86	65.46	34.54	74.04	25.96

9.3.2 निरक्षरता दूर करने के उपाय -

अशिक्षा के कारण व्यक्ति का भविष्य अन्धकार मय हो जाता है, इसे दूर करने के लिए निम्न उपाय अपनाये जाने चाहिए-

- सभी के शिक्षा अनिवार्य:- सभी बच्चों के प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य की जानी चाहिए इनके गरीब बच्चों के छात्रवृत्ति की व्यवस्था की जाए जिससे गरीबी इनकी पढ़ाई में बाधा न बनें।
- निःशुल्क शिक्षा व्यवस्था:- गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले बच्चों के निःशुल्क शिक्षा व्यवस्था लागू की जाए।
- लोगों की अभिवृत्ति में परिवर्तन करके - लोगों को ये बताना कि शिक्षा उन्हें क्या - क्या लाभ है उनकी सोच में परिवर्तन लाना क्यों कि आज भी ग्रामीण क्षेत्रों में पढ़ाई की जगह कार्य की ज्यादा महत्व देते हैं।
- व्यावसायिक शिक्षा को प्रोत्साहन - भारत में अशिक्षा का मुख्य कारण गरीबी है, इसलिए प्राथमिक स्तर पर ही पढ़ाई के साथ व्यावसायिक शिक्षा भी दी जाए सिसे ही पढ़ाई के साथ वे व्यवसाय करने योग्य भी बन सकें।
- ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा के प्रोत्साहन हेतु अनेक आकर्षक योजनाएँ चलाई जाए सिसे लोग विद्यालय के प्रति आकर्षित हो।
- काम करने वालों के लिए सायंकालीन कक्षाएँ चलाकर उन्हें शिक्षित किया जा सकता है।
- भ्रष्टाचार को दूर करके - भ्रष्टाचार की वजह से थे प्रोग्राम ठीक से स्कूलों तक नहीं पहुँच पाते है, इन स्कीमों का आधा बजट तो घोटालों की वजह से बेकार हो जाता हैं जैसे मध्याह भोजन व्यवसथा, गरीब बच्चों को ध्यान में रखकर बनाई गई योजना कि बच्चों को पढ़ाई के साथ भोजन भी मिले और निर्धनता उनकी पढाई में बाधक न बनें। फिर भी आए दिन मिड डे मील खाकर बच्चों के बीमार होने की घटनाएँ हमें सुनाई देती है। क्योंकि लोग घटिया समान इस्तेमाल कर पैसा खाने से बाज नहीं आते है।
- पिछले एक दशक में साक्षरता के दर में सिर्फ 990 की बृद्धि दर्ज है लड़कों की अपेक्षा लड़कियों में निरक्षरता का प्रतिशत अधिक देखा गया है लड़कियों में साक्षरता दर में वृद्धि हेतु सरकार द्वारा अनेय योजनाएँ चलाई

जा रही है जैसे महिला समाख्या योजना (1989) ग्रामीण महिलाओं को समानता और सजगता के लिए शिक्षा की समुचित व्यवस्था, किशोरी बालिका योजना (1992) गरीब परिवार की बालिकाओं को समुचित स्वास्थ्य, पोषण तथा शिक्षा की व्यवस्था, बालिका समृद्धि योजना (1997) उस योजना में गरीबी रेखा से नीचे के परिवारों में जन्म लेने वाली बालिका की माता को पौष्टिक आहार एवं बालिका की कक्षा 10 तक की पढ़ाई हेतु नगद राशि दी जाती है।

9.4 गरीबी

'' सामान्य शब्दों में धन के अभाव को गरीबी की संज्ञा दी जाती है लेकिन वैज्ञानिक शब्दों मं गरीबी का तात्पर्य उस स्थिति से है जिसमें समाज का एक भाग अपने जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं (रोटी, कपड़ा, और मकान) को संतुष्ट करने में असमर्थ रहता है गरीबी रेखा की अवधारणा सर्वप्रथम सन् 1945 में खाद्य एवं कृषि संगठन के महानिदेशक जार्ज लायर्ड और यारा द्वारा प्रस्तुत की गई । गरीबी रेखा का आशय उपयोग की वस्तुएँ उपलब्ध नहीं हो पाती है। तीन चौथाई भाग उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, आन्ध्रा प्रदेश,तामिलनाडु व महाराष्ट्र में निवास करते है। गरीबी या निर्धनता एक ऐसा प्रत्यय है जिसके लिए व्यक्ति की सामाजिक - सांस्कृतिक पृष्टभूमि को समझना आवश्यक है हर देश में गरीबी का आधार भिन्न-भिन्न है उदाहरण के लिए अमेरिकन परिवार में धर में कार या टेलीविजन न होना गरीबी का सूचक हो सकता है परन्तु हमारे देश में इन सूचकों के आधार पर गरीबी को ही समझा जा सकता है । अनेक अध्ययनों द्वारा ये ज्ञात होता है। कि ज्यों - ज्यों समाज का स्तर घटता जाता है ज्यों - ज्यों गरीबी निर्धारित करने वाली रेखा भी परिवर्तित होती जाती है।

सामान्यतः आर्थिक दृष्टिकोण से समाज के लोगों को निम्न चार अवस्थाओं में वांटा जा सकता है।

(1) वे लोग जो न्यूनतम निर्वाह स्वर पर अथवा उससे नीचे है ।

(2) वे लोग जो जीवन की आवश्यकताओं को आसानी से जुटा पा रहे हैं

(3) वे लोग जो आराम की अर्थव्यवस्था में जीवन व्यतीत करते हैं।

(4) वे लोग जो विलासिता के स्तर पर है जिनके पास आर्थिक स्थिति इतनी मजबूत है कि वे जिस ढंग से चाहें अपनी जिन्दगी व्यतीत कर सकते हैं।

हमारे यहाँ अधिकांश व्यक्ति पहले प्रकार की अवस्था में आते है अर्थात् न्यूनतम जीवन निर्वाह स्तर है, या उससे नीचे है गरीबी के कारण कई महत्वपूर्ण समस्याएँ उत्पन्न होती है जैसे –

- पारिवारिक असन्तोष एवं कलह- गरीबी के कारण परिवार में कई कारणों (दैनिक आवश्यकताओं, भोजन वस्त्र आदि) से असन्तोष कहता है और धीरे-धीरे ये कलह का रूप धारण कर लेते हैं और परिवार के सदस्यगण सीमित साधनों का अपनी - आनी ओर खीचने में लगे रहते हैं जिससे एक - दूसरे के प्रति स्नेह व

प्रेम में कमी आने लगती है आपस में अविश्वास एवं असन्तोष की भावना उत्पन्न हो जाती है और परिवारिक विघटन की समस्या उत्पन्न होती है।

- उन्नति के मार्ग में बाधाएँ- गरीबी व्यक्ति तथा उसके परिवार के सामाजिक, शैक्षिक, राजनीतिक एवं आर्थिक उन्नति में बाधा उत्पन्न करती है इतनी ही सामाजिक क्षेत्र में भी वह पिछड़ने लगता है क्योंकि गरीब व्यक्ति के सामने धनाभाव के कारण कई तरह की समस्याएं उत्पन्न हो जाती है कि उनके बोझ व वह दबने लगता हैं।
- आकांक्षा स्तर में कमी- हेरिंगटन एवं पार्क (1980) ने अपने सह - सम्बन्धात्मक अध्ययनों के आधार पर बताया कि गरीब परिवार के बच्चों का आकांक्षा स्तर काफी कम था। गरीबी बच्चों के आकांक्षा स्तर को कम कर देती है। वे रोजी रोटी के अलावा कुछ और सोच ही नहीं पाते है।
- हीनता की भाव में तीव्रता- गरीब परिवार के बच्चें अपने आप को देखकर तथा अवस्था को समझकर एक ऐसा सम्प्रत्यय विकसित कर लेते हैं जिसे नकारात्मक आत्म प्रत्यय कहा जाता है इस तरह के सम्प्रत्यय के फल स्वरूप वे अपने आप को हर तरह से हीन व कामजोर समझते है और इस भावना के चलते वे स्कूल में पिछड़ने लगते है।
- असामाजिक व्यवहारों के प्रति झुकाव- निर्धनता के कारण कभी-कभी अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए वे असामाजिक व्यवहारों को करने की ओर प्रेरित होते हैं। निर्धनता को व्यक्ति को चोरी पाकेटमारी, वेश्वातृत्ति जैसे व्यवहारों को करने की प्रेरणा देती है।
- आर्थिक प्रतियोगिता एवं अन्तसर्मूह प्रतिद्वन्दिता- निर्धनता के कारण आर्थक प्रतियोगिता एवं अन्तर्समूह प्रतिद्वन्दिता में वृद्धि होती है । गरीबों के पिछड़ेपन को दूर करने के लिए सरकार तरह-तरह की स्कीमें (जैसे आरक्षण बी0पी0एल0कार्ड) चलाती परिणाम स्वरूप आर्थक रूप से सबल व्यक्ति यह सोचने लगता कि सरकार व्यक्ति यह सोचने लगता कि सरकार उनके हिस्से को छीनकर निर्धन लोगों को दे रही है। फलतः वे गरीब व्यक्तियों को अपना प्रतिद्वन्दी समझने लगते हैं और उनके प्रति विद्वेष भाव रखना प्रारम्भ कर देते हैं । ऐसी सरकारी सुविधा को लाभ उठाकर यदि कुछ निर्धन अपनी आर्थिक स्थिति सुधार लेते हैं तो उनकी प्रतियोगिता समाज के आर्थक रूप से सबल व्यक्तियों से होने लगती है परिणाम स्वरूप आर्थिक प्रतियोगिता तीव्र होती है जो सामाजिक दृष्टिकोण से हानिकारक होती है।
- सामाजिक उपेक्षा- गरीबी के कारण व्यक्ति में समाज के प्रति अरूचि भाव उत्पन्न हो जाती है गरीब व्यक्ति को समाज में उसकी आर्थिक तंगी के कारण लोग उसकी उपेक्षा करते है तथा अपने आपको उससे दूर रखने का प्रयास करते है । समाज धनी व्यक्ति अपने बच्चों को निर्धन बच्चों के साथ साथ खेलने व मिलने - जुलने की इजाजत नहीं देते हैं परिणामस्वरूप ऐसे बच्चों का सामाजिक तिरसकार होता है उनमें असामाजिक प्रवृतियाँ आर्थिक तेजी से भरने लगती है।

9.4.1 गरीबी का कारण -

(i) आर्थिक कारण:- (1) महंगाई के कारण खाद्यान्न संकट
(2) त्रुटिपूर्ण आर्थिक नीतियाँ
(3) कृषि क्षेत्र की उपेक्षा
(4) बुनियादी उद्योगों की पिछड़ी दशा
(5) परिवहन एवं संचार के उन्नत साधनों का अभाव

(ii) सामाजिक कारक:- (1) संयुक्त परिवार प्रणाली
(2) जाति प्रथा
(3) गन्दी बस्तियों में रहने के कारण
(4) अशिक्षा
(5) बीमारी स्वास्थ्य स्तर

(iii) राजनैतिक कारण:- (1) राजनैतिक भ्रष्टाचार
(2) राजनैतिक अस्थिरता व चुनाव के बाद बढ़ती मंहगाई
(3) राजनैतिक घुसपैठ।

(iv) व्यक्ति कारक:- (1) बीमारी, कुपोषण का शिकार
(2) मानसिक रोग
(3) बुरी आदतें - नशा, जुआ, लौटरी, सट्टेवाजी आदि
(4) दुर्घटनाएं

(v) जनसंख्यात्मक कारण :- (1) परिवार का बड़ा आकार

9.4.2 गरीबी के कारण उत्पन्न समस्याएँ -

निर्धनता के कारण उत्पन्न होने वाली महत्वपूर्ण समस्याएँ निम्न है।

- पारिवारिक असन्तोष एवं कलह।
- उन्नति के मार्ण में बाधाएँ उत्पन होती है।
- गरीबी के कारण हीनता की भावना की उत्पत्ति होती है।
- आकांक्षा स्तर में कमी आती है।
- असामाजिक व्यवहारों के प्रति झुकाव बढ़ता है जैसे चोरी डकैती आदि।
- सामाजिक परिवर्तन के प्रति अनभिज्ञयता।
- शारीरक एवं मानसिक रोगों से सम्बन्धित समस्याएँ।
- निर्धनता के कारण सामाजिक उपेक्षा बुराईयों को जन्म देती है।

9.4.3 गरीबी को दूर करने के उपाय -

मनोवैज्ञानिकों समाजशस्त्रियों, बुद्धिजीवियों एवं पूँजीपतियों द्वारा गरीबी को दूर करने के लिए निम्न उपाय बताऐं गए है।

- कृषि तथा उद्योग में अधिकाधिक रोजगार उत्पन्न करना हमारे यहॉ निर्धनता का मुख्य कारण बेरोजगारी है अतः देश में नये-नये उद्योग धन्धों की स्थापना ही एवं कृषि उत्पादन पर बल दिया जिससे लोगों को रोजगार उपलब्ध हो सकें जिसके फलस्वरूप लोगों की आय में वृद्धि और गरीबी में कमी आयेगी वर्तमान समय में सरकार द्वारा रोजगार गारन्टी योजना के तहत गरीबों को 100 दिन कि लिए रोजगार उपलब्ध कराया जा रहा है।
- जनसंख्या वृद्धि को नियन्त्रित करके - किसी भी देश में वहॉ की जनसंख्या वृद्धि से उसका सीधा असर उस देश के विकास पर पड़ता है अतः जनसंख्या को कम करने के लिए उसके उपायों जैसे नसबन्दी, गर्भ निरोधक गोलियों आदि) पर ध्यान देना होगा। जनसंख्या नियंत्रण हो जाने पर विकासात्मक उपायों से लागों की आमदनी में बृद्धि होगी, और गरीबी में कभी आने की उम्मीद हो जाती है।
- धनी और गरीब लोगों के बीच की खाई समाप्त करने के लिए वितरणात्मक प्रयास - के लिए आवश्यक है कि सरकार ऐसा कानून बनाए, जिसके अनुसार धनी बर्गो को कर देना आवश्यक हो और उससे प्राप्त आय को गरीबों के कल्यचाण एवं उत्थान के लिए लगाया जा सकें।
- भष्टाचार को समाप्त करके - हमारे देश फैला भ्रष्टाचार निर्धनता का एक बहुत बड़ा कारण है शासक वर्ग जनता, के अरबों की हेरा- फेरी करता है और निर्धारित योजनाएं गरीब तबकों तक नहीं पहुँच पाती है आजकल हमारे देश में विदेशों में जमा काले धन को देश में लाने व लोगों को बेनकाब करने की कवायद चल रही है। काले धन के समाप्त होने लोगों में उचित काम के लिये उचित पैसा धन की प्राप्ति में मदद मिलेगी, लोगों की आमदनी बढ़ेगी और निर्धनता में कमी आयेगी।
- योजना का विकेन्द्रीकरण और उसका कार्यान्वयन - सरकार द्वारा ग्रामीणों के उत्पान एवं जनता की गरीबी दूर करने के लिए कई तरह की योजनाएं जैसे ग्रामीण विकास कार्यक्रम, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना, ग्रामीण युवकों के लिए स्व रोजगार प्रशिक्षण ग्रामीण मजदूर रोजगार गारन्टी योजना, जवाहर रोजगार योजना आदि चलाई जा रही है। जब तक इन योजनाओं का लाभ गरीबों तक नहीं पहुँचेगा तब तक गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम सफल नहीं होगा।
- ग्रामीण बैकों द्वारा कम व्याज की दरों पर ऋण उपलब्ध कराकर इनकी आवश्यकताओं को कुछ हद तक पूरा किया जा सकता है।
- रोजगार आधारित कार्यक्रमों को सरकारी तथा गैर सरकारी स्तर पर बढ़ावा देकर।

- गरीब युवाओं को विभिन्न तरह के आधुनिक प्रशिक्षण (जैसे - कम्प्यूटर, टाइपिंग आदि का) देकर उन्हें स्वरोजगार योग्य बनाना।
- किसी कार्य विशेष को करने के प्रति नाकारात्मक मानसिकता को दूर करना।
- समाज के हर व्यक्ति को साक्षर करके गरीबी को दूर किया जा सकता है साक्षर होने से उसे अपने अधिकारों का ज्ञान होगा और कोई भी अनका शोषण नहीं कर पायेगा।

9.4.4 गरीबी अन्मूलन हेतु कुछ योजनाएँ –

क्रसं0	योजनाएँ	वर्ष	मुख्य लक्ष्य
1	सांसदों की स्थानीय निकाय योजना	1993	प्रत्येक सांसद अपने स्थानीय निर्वाचन क्षेत्र में प्रतिवर्ष 2 करोड़ रूपयें विभिन्न कार्यों को सम्पन्न कराने में समर्थ
2	कस्तूरबा गांधी शिक्षा योजना	1997	निम्न महिला साक्षरता दर वाले जिलों में बालिकाओं के लिए आवासीय विद्यालयों की स्थापना।
3	स्वर्ण जयन्ती शहरी रोजगार योजना	1997	स्वतंत्रता की 50 वीं वर्षगांठ पर नेहरू रोजगार योजना समाप्त कर शहरी बेरोजगारी दूर करने के लिए लागू की गई।
4	बालिका समृद्ध योजना	1997	गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाली परिवारों में जन्म लेने वाली बालिका की माता को 15 दिन के भीतर 500 रूपये नगद व बालिका की कक्षा 10 तक की पढ़ाई हेतु नकद राशि दी जायेगी।
5	राज -राजेश्वरी एवं भाग्यश्री योजना	1998	राष्ट्रीय स्तर पर राज राजेश्वरी योजनाओं तथा भाग्य श्री नाम से लड़कियों के एिल 1998 दीपावली पर शुरू की गई योजना इस योजना के तहत रूपया प्रतिमाह के प्रीमियम भुगतान से आवश्यकता पड़ने पर 25,000.00 रूपये तक उपलब्ध हो सकेंगे।
6	अन्नपूर्णा योजना	1999	गॉवों के गरीबों व असहाय वृद्धों के लिये जो इस समय वृधावस्था लिये जो पेंशन प्राप्त नहीं कर रहे है हर महीने 10 किग्रा तक अनाज निःशुल्क प्रदान किया जायेगा।
7	जनश्री बीमा योजना	2001	गरीबी रेखा से नीचे तथा थोड़ा ऊपर के निर्धन व्यक्यिों)18-60) के व्यक्यिों की मृत्यु या विकलांग होने पर 50 हजार रू0 देने का प्रावधान है इसके लिये व्यक्ति को 200 रूपये का वार्षिक प्रीमियम देना होगा।
8	नरेगा मनरेगा	2005	गरीब व्यक्ति जिनको रोजगार की जरूरत है 100 दिन का रोजगार और यदि सरकार उनको 100 रू0 दिन का काम नहीं दे पाती है तो उन्हें इसके पैसे दिये जायेगे।

- गरीब लोगों के लिए ससती चिकित्सा सुविधा उपलब्ध कराई जाए साथ ही गरीबी रेखा से नीचे रहने वालों का स्वास्थय बीमा कराया जाए।
- जातिवाद, क्षेत्रवाद, भाई-भतीजावाद जैसी संकुचित भावना है सामाजिक आर्थिक, विकास में सबसे बड़ी बाधा है। इन भावनाओं से परे हट कर व्यक्ति को योग्यतानुसार रोजगार से जोड़कर आर्थिक सहायता प्रदान।
- केन्द्र के वजट का बड़ा हिस्सा गरीबों के लिए (विभिन्न योजनाओं पर) खर्च किया जाना चाहिए।
- जमीदारी प्रथा को समाप्त कर वो जमीन गरीबों में बॉट दी जाए।

9.5 बेरोजगारी

बेरोजगारी निर्धनता का बड़ा कारण है तो निर्धनता बेरोजगारी का एक बड़ा दुष्परिणाम दोनों को एक दूसरे से झलग नहीं किया जा सकता है। सामान्य शब्दों में बेरोजगारी का अर्थ - रोजगार न मिलना है। आज हम औद्योगिक विकास को उन्नति का आधार मानते है । शिक्षा के विसतार द्वारा अज्ञानता को दूर करने का प्रयास करते है वही बेरोजगारी के सामने हम सिर झुका देते हैं एक सफल सक्षम और स्वस्थ व्यक्ति के लिए एक बहुत बड़ा अभिशाप है। कि किसी काम को करने की योग्यता व इच्छा रखते हुए उसे काम करने का अवसर नहीं मिलता है।

अतः बेरोजगारी वह स्थिति होती है जब कोई व्यक्ति प्रचलित मजदूरी या उससे कम पर कार्य करने के लिए तैयार होता है लेकिन उसे कार्य करने का अवसर नहीं मिल रहा है। बेरोजगारी हमारे देश की एक प्रमुख सामाजिक आर्थिक समस्या है किसी समाज में जब बहुत से व्यक्यिों को आवश्यक योग्यता और कार्य की इच्छा पड़े बाद भी जीविका के ऐसे साधन प्राप्त नहीं हो पाते है सिसे वे अपनी न्यूनतम कार्य - कुशलता को बनाए रख सकें । तब इस स्थिति को हम बेरोजगारी की संज्ञा देते हैं । बेरोजगारील की स्थितिउ किसी न किसी मात्रा में सभी समाजों में पाइ्र जाती है चाहे वह कितना भी धनी क्यों नह हो लेकिन किसी समाज में जब व्यक्यिों का बहुत बड़ा भाग बेरोजगार हो जाता है तब बेरोजगारी एक गभ्भीर समस्या का रूप ले लेती है।

9.5.1 बेरोजगारी के प्रकार -

सामान्य रूप से हम बेरोजगारी को निम्न रूपों में देख सकते हैं

(1) संरचनात्मक बेरोजगारी - औद्योगिक क्षेत्रों में संरचनात्मक परिवर्तनों के परिणास्वरूप उत्पन्न होने वाली बेरोजगारी को संरचनात्मक बेरोजगारी कहते है यह कालीन होती है।

(2) अल्प बेरोजगारी:- में ऐसे व्यक्ति आते है जिन्हें थोड़ा काम बहुत काम मिलता है और जिनके द्वारा वे कुछ अंशों तक उत्पादन में योगदान देते हैं किन्तु इनको अपनी क्षमतानुसार काम नहीं मिलता या पूरे समय के लिए काम नहीं मिलता हें इसमें कृषि क्षेत्र में लगे श्रमिक भी आते है।

(3) बेरोजगारी - कुछ उद्योगों या व्यापार की प्रकृति इस प्रकार की होती है कि वे साल के कुछ महीनें ही चलते है जैसे-चीनी मिले जहॉ लोगों को 6-7 महीने ही काम मिल पाता है बाकी समय ये बेकार रहते हैं।

(4) आकस्मिक बेरोजगारी - आर्थिक मन्दी व युद्धकाल के बाद प्रायः इस प्रकार की बेरोजगारी उत्पन्न होती है।

(5) अदृश्य बेरोजगारी - इसमें श्रमिक बाहर से तो काम पर लगे प्रतीत होते हैं लेकिन वास्तव में उन श्रमिकों की उस कार्य विशेष के लिए आवश्यकता नहीं हाती है । अर्थात यदि उन श्रमिकों को उस कार्य से निकाल दिया जाए तो कुछ उत्पादन पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है जैसे - किसी परिवार में सिर्फ खेती ही आय का एक मात्र साधन है उस परिवार में 3 वयस्क पुरूष है इस खेती के काम को 2 पुरूष पूरा कर सकते हैं किन्तु उचित संसाधन के अभाव में वे तीनों सदस्य इसी जमीन पर कार्य करते है इसे छिपी या अहश्य बेरोजगारी कहते है । इसके अतिरिक्त खुली बेरोजगारी, साप्ताहिक बेरोजगारी शिक्षित बेरोजगारी, औद्योगिक बेरोजगारी आदि इसके अन्य प्रकार है।

9.5.2 भारत में बेरोजगारी की स्थिति (2009-2010)-

ग्रीमीण क्षेत्रों में - 10.1 प्रतिशत

शहरी क्षेत्रों में - 7.3 प्रतिशत

पुरूष बेरोजगारी - 8 प्रतिशत

महिला बेरोजगारी - 14.6 प्रतिशत

सम्पूर्ण जनसंख्या में - लगभग 4 करोड़ लोग बेरोजगार है जिनके पास कोई काम नहीं है।

9.5.3 भारत में बेरोजगारी के कारण -

भारत में बेरोजगारी के एक नहीं बल्कि कई कारण है -

- जनसंख्या में तीव्र गति से वृद्धि - भारत में जिस तीव्र गति से जनसंख्या में वृद्धि हुई है उस अनुपात में रोजगार की सुविधाओं में बृद्धि नहीं हो पाई है। फलतः देश में बेरोजगारी काफी तीव्र गति से बढ़ी है।
- दोषपूर्ण शिक्षा प्रणाली - शिक्षा व्यक्ति के विकास के लिए आवश्यक है भरतीय शिक्षा प्रणाली व्यकित्व का विकास तो कर रही है लेकिन रोजगारपरक शिक्षा का अभाव है व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के शुल्क इतना ज्यादा है जो सामान्य छात्र की पहुँच दूर है शिक्षा में गुणवनता न होने से स्नातक और परास्नातकों की भीड़ बढ़ती जा रही है ऐसे डिग्री धारकों की भीड़ जयादा हैं जिनके पास डिग्री तो है पर ज्ञान के नाम पर कुछ भी नहीं है। डा0 राजेन्द्र प्रसाद का कहना है कि इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता है कि देश की शिक्षा प्रणाली में कुछ कमियाँ है विश्वविद्यालयों से बहुत से छात्र प्रतिवर्ष निकलते है उनको काम ही नहीं मिलता बल्कि वे काम के अयोग्य भी है यह स्थिति बेरोजगारी से भी अधिक भयंकर है आज बेरोजगारी इसलिए बढ़ रही है क्योंकि नौकरियों की संख्या में वृद्धि नहीं हो रही है पर लोग इसलिए भी बेकार है कि जो स्थान खाली है उसके लिए योग्य नहीं मिलते है।

- कृषि क्षेत्र की अनुत्पादकता - भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् अनेक उद्योग धन्धों की स्थापना तो हुई लेकिन इन कारखानों ने निकला कचरा व गन्दा पानी जिसके लिए उचित व्यपस्था नहीं की गई इसकी वजह से हमारी नदियों का पानी भी दूषित हो गया हे ये कचरा और गन्दा पानी हमारी कषि भूमि को भी प्रभावित कर रहा है और कृषि में अनुत्पादकता के चलते बेरोजगारी की समस्या उत्पन्न हो रही है। न तो इतने पढ़े लिखे होते हैं और नहीं पैसा होता है कि शहरों में जाकर रोजगार दूढ़ सके।
- लघु एवं कुटीर उद्योगों का पतन - कुछ दशक पहले भारत में लघु एवं कुटीर उद्योगों द्वारा अपने परिवार को भरण पोषण करते थे आज मशीनों के आ जाने से बड़े - बड़े कारखाने खुल जाने की वजह से हजारों व्यक्ति भुखमरी की कगार पर पहुँच गए है।
- तकनीकी शिक्षा का अभाव - भारत में तकनीकी शिक्षा का अभाव बेरोजगारी का एक मुख्य कारण है तकनीकी शिक्षा महंगी होने के कारण भी गरीब व्यक्ति इनका लाभ नहीं उठा पाते हैं।
- शारीरिक श्रम के प्रति उदासीनता - शिक्षित लोगों में शारीरिक श्रम के प्रति उदासीनता पाई जाती हैं। अधिकांश व्यक्ति ऐसा काम करना चाहते है जिसमें शारीरिक श्रम ना के बाराबर हो । आज लोगों की सोच कम मेहनत, कम काम और ज्यादा पैसे में बदलती जा रही है।
- श्रम की मॉग में पूर्ति में असन्तुलन - श्रम की पूर्ति के अनुपात में उत्पादन के अन्य साधनों में वृद्धि न होना भी बेरोजगारी का एक मुख्य कारण है अगर श्रमिकों की मॉग कम है और काम करने के इच्छुक योग्य व्यक्तियों की संख्या ज्यादा है तसे सभी लोगों को रोजगार नहीं मिल पाता है और बेरोजगारी फैलने लगती है।
- गलत तकनीक का चुनाव तथा दोषपूर्ण विनियोजन नीति - भारत की उत्पादन तकनीक पूँजी बाहल है न कि श्रम बाहुल जो देश में बढ़ती बेरोजगारी के लिए उत्तरदायी है। हमारे यहॉ योजनाओं में बड़े एवं मध्यम उद्योगों को ही प्राथमिकता दी गई है जो रोजगार सृजन क्षमता में बहुत कम है।

9.5.4 बेरोजगारी दूर करने हेतु सुझाव -

भारत में बेरोजगारी एक गभ्भीर समस्या है और देश की सम्पूर्ण व्यवस्था में सुधार लाए बिना बेरोजगारी को दूर नहीं किया जा सकता है इसे कम करने के लिए निम्न उपायों को अपनाया जाना चाहिए।

- बेरोजगारी दूर करने के लिए सबसे पहले जनसंख्या बृद्धि को रोकना आवश्यक है। लोगों को जनसंख्या बृद्धि द्वारा होने वाले भयावह परिणाम से अवगत कराना तथा परिवार नियोजन के उपायों को अपनाने पर बल दिया जाना आवश्यक है।
- शिक्षा प्रणाली में सुधार द्वारा भी बेरोजगारी को दूर किया जा सकता है तकनीकी शिक्षा पर विशेष बल दिया जाना चाहिए।
- शिक्षा के साथ शारीरिक श्रम को अनिवार्य कर दिया जाए। विद्यार्थियों को शारीरिक श्रम की महत्ता के बारे में अवगत कराना।

- शिक्षित महिलाओं को अधिक से अधिक संख्या में रोजगार उपलब्ध कराना।
- लघु एवं कुटीर उद्योगों का विकास करके ।
- कृषि क्षेत्रों में सुधार करके कम ब्याज पर ऋण उपलब्ध कराके।
- उत्पादक रोजगार के अतिरिक्त अवसरों को सृतन करना।
- श्रम बाजार के लिए शिक्षा और प्रशिक्षण की विश्वसनीयता को बढ़ाना।
- नये उद्योगों को स्थापित करके कुछ लोगों को रोजगार पर लगाया जा सकता है।
- बेरोजगारी दूर करने हेतु सरकार द्वारा उचित एवं ठोस कदम उठाए जाए भारत की अर्थव्यवस्था गॉवों पर निर्भर करती है इसलिए ग्रामीण क्षेत्रों के लिए बड़े पैमाने पर रोजगार के अवसर उपलब्ध है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में परस्पर सहायता कार्य को भारतीय परम्पर के अनुरूप एक परोपकारी या पवित्र कार्य के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए अपने ही गॉव के लोंगों या अन्य जाति वर्ग के लोगों के सेवा आवश्यकताओं की पूरा करना एवं सामाजिक सरोकारों से सम्बन्ध स्थापित करना मानवीय गुणों को विकसित करने में सहायक होगा।
- शिक्षित व्यक्ति अपने देश को छोड़कर दूसरे देशों की प्रगति में लग जाते हैं जिससे अपने देश की प्रगति नहीं हो पाती है। सरकार को इस दिशा में भी कुछ करम उठाया जाना आवश्यक है।

9.5.5 बेरोजगारी दूर करने हेतु सरकारी प्रयास -

क्र सं0	योजना	वर्ष	उद्देश्य
1	समान्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम	1980	ग्रामीण परिवारों को गरीबी की रेखा से ऊपर उठाने में सक्षम बनाया।
2	ग्रामीण क्षत्रों महिला तथा बाल विकास कार्यक्रम	1982	ग्रामीण महिलाओं को स्वरोजगार के अवसर उपलब्ध कराते हुये उनके स्वास्थ्य, शिक्षा, पोषक आहार ,स्वच्छता तथा शिशुओं की देखभाल करने जैसे मूलभूत सेवाएं प्रदान करना।
3	कृषि विकास केन्द्र	1992	किसानों) महिलाओं एवं पुरूष (के लिए रोजगार परक प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित करना।
4	जवाहर रोजगार योजना	1989	ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम (लाभकारी रोजगार उपलब्ध कराना)

5	इन्दिरा आवास योजना	1985 -86	अनुसूचित जाति जनजाति के सबसे गरीब लोगों के लिए मकानों को निर्माण कराना।
6	राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम	1995	राष्ट्रीय बृद्धावस्था पेंशन योजना राष्ट्रीय परिवार लाभ योजना रास्ट्रीय प्रसव लाभ - योजना
7	खेतिहर मजदूर बीमा योजना	2001	भूमिहीन खेतिहार मजदूरों के लिए योजनान्तर्गत बीमा कवच लाभ 60 वर्ष की आयु पूरी करने वाले को 100 रू0 मासिक पेंशन प्रदान करने का प्रावधान।
8	सम्पूर्ण ग्रामीण रोजार योजना	2001	10,000 करोड़ रूपये की योजना का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर प्रदान करना।
9	राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारन्टी योजना	2005	ग्रामीण क्षेत्रों में 100 दिन काम देने का प्रावधान हैं।

9.5.6 बेरोजगारी के परिणाम -

बेरोजगारी किसी भी समुदाय या देश के विकास में सबसे बड़ी बाधा है एक बेराजगार व्यक्ति नह केवल स्वयं के लिए अनेक समस्याएँ उत्पन्न करता है बल्कि इसका नुकासान पुरे समाज व देश को उठाना पड़ना है बेरोजगारी का व्यक्ति और समाज दोनों को ही उठाना पड़ता है।

- बेरोजगारी अनेक मानसिक रोगों का जन्म देती है और कभी-कभी मानसिक तनाव या दबाव इतना बढ़ जाता है कि व्यक्ति आत्महत्या कर लेता है।
- बेरोजगारी की अवस्था वयक्ति के नैतिक सतर को गिरा देता है ऐसी स्थिति में वयक्ति जब अपने परिवार के सदसयों को अनेक कष्ट सहने सहतें हुए देखता है तो कभी वह गलत रास्ता पकड़ लेता है जैसे वेश्यावृत्ति, चोरी, डकैती, धोखा धड़ी आदि।
- बेरोजगारी की सबसे गम्भीर दुष्परिणाम अपरोधों में बृद्धि होना है। व्यक्ति अपने जीवन की रोजी रोटी - चलाने के लिए अनेक आपराधिक कार्य करता है जैसे अपहरण, चोरी हत्या या समाज के नियमों के विरूद्ध कार्य करना अपनी जरूरी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु।
- बेराजगारी के कारण कभी-कभी ये ऋण लेते हैं और उसे पूरा न पाने पर ये उसके बोझ तले दबते चले जाते हैं और इनकी स्थिति बद से बदतर होती चली जाती है।

- बेराजगारी देश की प्रगति में बाधक है, क्योंकि बेकार व्यक्तियों की सेवाओं का लाभ समाज नहीं उठा पाता है। किसी देश के लिए बहुत बड़ी सामाजिक एवं आर्थिक हानि है।
- बेरोजगारी व निर्धनता के कारण माता-पिता अपने बच्चों का लालन-पालन उचित ढंग से नहीं कर पाते है फलतः भावी पीढ़ी दुर्बल, बीमार या किसी रोग का शिकार हो जाती है।
- बेरोजगारी व्यक्ति हर तरफ से हताश व निराश हो जा जाता है अपनी निराशा व हताशा निराशा व हताशा को दूर करने के लिए ये कभी-कभी शराब, नशा, आदि का सहारा लेते हैं अतः बेरोजगारी अन्य अनेक सामाजिक समस्याओं को जन्म देती है।
- बेराजगारी एक ऐसी समस्या है जिसके लिए सरकार द्वारा अनेक प्रयास किये गए है और आगे भी निरन्तर किये जा रहे है। सरकार द्वारा किये गऐ प्रयत्नों के कवजूद भी जनसंख्या वृद्धि के कारण इसमें कोई खास सफलता नहीं मिल पा रही है क्योंकि देश में भ्रष्टाचार के चलते इन योजनाओं का सही- सही लाभ उन व्यक्यिों तक नहीं पहुँच पा रहा है तो वास्तव में इसके असली हकदार है।

9.6 सारांश

विभिन्न सामाजिक समस्याओं में निरक्षरता, गरीबी, बेरोजगारी आदि अनेक ऐसी समस्याएँ है, जिनका समाधान अत्यनत आवश्यक है क्योंकि किसी भी देश की प्रगति तभी सम्भव है जब वहॉ के लाग साक्षर हो लोगों के पास रोजगार हो आज सूचना तंत्र के प्रयास से गांवों में भी रोजगार की अपार सम्भावनाए प्रकट हो रही है रोजगार की सम्भावनाएँ बढ़ाकर कृषि उत्पादन पर निर्भरता को कम किया जा सकता है।

पिछड़े हुए क्षेत्रों को विकास की प्रक्रिया से जोड़ने के लिए इन क्षेत्रों में साक्षरता गरीबी और रोजगार से सम्बन्धित कार्यक्रमों का निर्माण किया जाए बेरोजगारी की समस्या का समाजधान निश्चय ही शिक्षा-प्रणाली के जीर्णोद्वारा में निहित है जिससे युवाओं को बाजार द्वारा आपेक्षित ज्ञान और कौशल प्रदान किया जा सकें।

9.7 शब्दावली

- **बुनियादी:** जरूरी, आवश्यक
- **विलासिता:** ऐशोआराम
- **अनभिज्ञयता:** अज्ञानता
- **दशक:** दस वर्ष
- **मध्याहन:** दोपहर
- **अनुत्पादकता:** उत्पादन न होना है
- **पत्तन:** या उत्पादन में गिरावट

- **पतन:** खत्म होना (समाप्त होना)

9.8 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

- सत्य / असत्य बताइये-

(1) निरक्षरता देश की प्रगति में सहायक है। (सत्य / असत्य)

(2) नवोदय विद्यालयों की स्थापना ग्रामीण क्षेत्रों में साक्षरता दर बढ़ाने के लिए स्थापित की गई है। (सत्य / असत्य)

(3) निरक्षरता का मुख्य कारण गरीबी है। (सत्य / असत्य)

(4) प्राथमिक विद्यालयों में मिड डे मील की व्यवस्था बच्चों की मौज मस्ती के लिए की गई है। (सत्य / असत्य)

(5) लड़को की अपेक्षा लड़कियों में साक्षरता दर अधिक है। (सत्य / असत्य)

(6) निर्धनता एक सापेक्षिक अवधारणा है। (सत्य / असत्य)

(7) भारत में निर्धनता का मुख्या कारण अशिक्षा है। (सत्य / असत्य)

(8) राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारन्टी योजना 2 फरवरी 2002 में लागू हुई। (सत्य / असत्य)

(9) निर्धनता विवाह-विच्छेद का परिणाम है। (सत्य / असत्य)

(10) लिर्धनता का मुख्य कारण जनसंख्या की अधिकता है। (सत्य / असत्य)

(11) भ्रष्टाचार का निर्धनता से कोई सम्बन्ध नहीं है। (सत्य / असत्य)

(12) बेरोजगारी की स्थिति केवल निर्णन समाजों में पाई जाती है। (सत्य / असत्य)

(13) मौसमी बेरोजगारी बेरोजगारी का एक प्रकार है। (सत्य / असत्य)

(14) भारत में महिला के अपेक्षा पुरूष बेरोजगारी ज्यादा है। (सत्य / असत्य)

(15) बीर चन्द्र सिंह गढ़वाली पर्यटन स्वरोजगार योजना का सम्बन्ध उत्तराखण्ड से है। (सत्य / असत्य)

- वस्तुनिष्ठ प्रश्न (किसी एक पर सही का निशान लगाइये)

(1) गरीबी की माप का आधार क्या हैं?

(i) व्यक्गित आय (ii) राष्ट्रीय आय

(iii) उपभोग खर्च (iv) उपर्युक्त सभी

(2) निम्न में से कौन सा निर्धनता का कारक नहीं है।

(i) खेती की पिछड़ी दशा (ii) शिक्षातृत्ति

(iii) भाषायी संघर्ष (iv) बेकारी

(3) गरीबी की अवधारण किस सन् में प्रस्तुत की गई:

(i) 1947 (ii) 1945

(iii) 1960 (iv) 1952

(4) निर्धनता का सामाजिक कारक है -

(i) जाति व्यवस्था (ii) संयुक्त परिवार प्रणाली

(iii) दोनों ही (iv) दोनों में से काई नहीं

(5) निर्धनता के बैयक्तिक कारक है-

(i) आशिक्षा (ii) रोगग्रस्तता

(iii) नैतिक (iv) उपर्युक्त सभी

- रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए?

(1) राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारन्टी योजना .... से लागू हुई है।

(2) भारत में लगभग .... लोग बेराजगार है।

(3) भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी का प्रतिशत ....है।

(4) आर्थिक मंदी एवं युद्धकाल के बाद .... बेरोजगारी उत्पन्न हैं।

(5) बेरोजगारी देश की प्रगति में .... है।

9.9 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- डा0 अरूण कुमार सिंह: समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा प्रकाशन मातीलाल बनारसी दस दिल्ली |
- रविन्द्र नाथ मुखर्जी: सामाजिक समस्याएँ विवेक प्रकाशन दिल्ली।

9.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. गरीबी की अवधारण को स्पष्ट कीजिए ? एवं इसके क्या कारण है।
2. गरीबी दूर करने हेतु सरकार द्वारा क्या - क्या प्रयास किये जा रहें है ?
3. आर्थिक दृष्टिकोण से समाज के लोगों को कितनी अवस्थाओं में बॉटा गया है ?
4. गरीबी का क्या अर्थ है ?
5. निर्धनता की अवधारण सर्वप्रथम किसने व्यक्त की ?
6. निर्धनता का कोई दो मुख्य कारण बताइयें।
7. भ्रष्टाचार का गरीबी से क्या सम्बन्ध हैं।
8. निरक्षरता या अशिक्षा से आप क्या समझते है ?
9. अशिक्षा के चार मुख्य कारण बताइयें ?

10. अशिक्षा दूर करने के लिए कोई चार उपाय बताइये ?
11. निरक्षरता दूर करने हेतु सरकार द्वारा क्या प्रयास किये जा रहे हैं ?
12. निरक्षरता दूर करने हेतु आप अपने कुछ सुझाव दीजिए।
13. गरीबी की अवधारण को स्पष्ट कीजिए ? एवं इसके क्या कारण है।
14. गरीबी दूर करने हेतु सरकार द्वारा क्या-क्या प्रयास किये जा रहे है ?
15. बेरोजगारी से आप क्या समझते हैं।
16. बेरोजगारी कितने प्रकार की होती है।
17. भारत में बेरोजगारी की क्या स्थिति है।
18. बेरोजगारी के चार मुख्य कारण बताइये।
19. बेरोजगारी के दुष्परिणाम क्या है ?
20. बेरोजगारी दूर करने हेतु आप अपने सुझाव दीजिए।
21. बेरोजगारी दूर करने हेतु सरकार द्वारा प्रयास किये जा रहे है।

इकाई-10 जनसंख्या विस्फोट, लैंगिक पक्षपात, आधुनिकीकरण एवं शहरीकरण (Population Explosion, Gender Biasness, Modernization and Urbanization)

इकाई संरचना

10.1 प्रस्तावना
10.2 उद्देश्य
10.3 जनसंख्या विस्फोट
10.3.1 जनसंख्या वृद्धि के कारण
10.3.2 जनसंख्या वृद्धि को नियन्त्रित करने के उपाय
10.3.3 जनसंख्या विस्फोट के दुष्परिणाम
10.3.4 जनसंख्या विस्फोट में मनोवैज्ञानिक कारकों की भूमिका
10.4 लिंग भेद
10.4.1 विकास में लिंग का महत्व
10.4.2 लिंग भेद समाप्त करने हेतु कुछ प्रयास
10.5 आधुनिकीकरण
10.5.1 आधुनिकीकरण की विशेषताऐं
10.5.2 आधुनिकीकरण के कारक
10.5.3 भारत में आधुनिकीकरण का प्रभाव
10.6 नगरीकरण
10.6.1 भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया
10.6.2 नगरीकरण की प्रक्रिया में सहायक कारक
10.6.3 सामाजिक परिवर्तन में नगरीकरण की भूमिका
10.6.4 नगरों की ज्वलंत समस्याएँ
10.7 सारांश
10.8 शब्दावली
10.9 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न
10.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
10.11 निबन्धात्मक प्रश्न

10.1 प्रस्तावना

सामाजिक समस्या से तात्पर्य ऐसी स्थिति से है। जिससे समाज का एक बढ़ा भाग प्राभावित होता है। तथा जिसका समाधान मात्र सामूहिक रूप से सम्भव हो पाता है। जैसे भारत में व्याप्त निर्धनता, अशिक्षा, बेरोजगारी, की समस्या को ही लिया जाए । तो यह एक सामाजिक समस्या है। क्योंकि इससे समाज का एक बढ़ा भाग प्रभावित है। तथा अनेक व्यक्तियों, सरकार तथा अन्य सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं के संयुक्त प्रसास से ही सम्भव है।

समाज मनोवैज्ञानिकों ने सामाजिक समस्याओं का अध्ययन तीन प्रमुख श्रेणियों में बॉट कर किया है।

1) प्राकृतिक कारणों से उत्पन्न सामाजिक समस्याएँ जैसे बाढ़, अकाल, भूकम्प आदि प्राकृतिक कारणों से उत्पन्न सामाजिक समस्याओं के अन्तर्गत आते है।

2) सुधारात्मक समस्याएँ कुछ समस्याएँ ऐसी होती है जिनके कुप्रभावों के बारे में आम सहमति होती है परन्तु समाधान के बारे में आम सहमति नहीं होती है। जैसे गरीबी, अपराध, मादक पदार्थो का सेवन आदि।

3) नैतिक समस्या कुछ सामाजिक समस्याएँ ऐसी होती है जिनकी प्रकृति एवं कारणों के बारे में आम सहमति नहीं होती है जैसे बालक, विधवा, विवाह, बाल, विवाह आदि अतः सामाजिक समस्या है के समाधान के लिए जागरुक ता, नीति, निर्धारण और सुधार इन तीनों का होना अत्यन्त आवश्यक है। इस ईकाई में हम ऐसी सामाजिक समस्याओं, जनसंख्याविस्फोट, लिंग भेद, आधुनिकीकरण, शहरीकरण, आदि का अध्ययन करेगे।

10.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

- जनसंख्या विस्फोट के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करेगे।
- लिंग भेद के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करेगे।
- आधुनिकीकरण के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करेगें।
- नगरीकरण की प्रक्रिया के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करेंगे।

10.3 जनसंख्या विस्फोट

हमारे यहां की सबसे प्रमुख सामाजिक समस्या जनसंख्या विस्फोट की समस्या है। विश्व जनसंख्या का 16 प्रतिशत हिस्सा आज धरती के 2.4 प्रतिशत क्षेत्र पर निवास कर रहा है। पिछले शतक में विश्व जनसंख्या जहां 2 अरब से बढ़कर 6 अरब हुई। वहीं भारत ने अपनी जनसंख्या में पांच गुना की वृद्धि दर्ज की और हमारी आबादी 23 करोड़ से बढ़कर 100 करोड़ तक पहुँच गई। जनसंख्या विस्फोट का सामान्य अर्थ देश के संसाधनों की तुलना में जनसंख्या या व्यक्तियों की संख्या में बेतहाशा वृद्धि से होता है। और अनेकों अन्य समस्याएँ जैसे गरीबी,

अशिक्षा रहन सहन के स्तर आदि उत्पन्न हो जाती है। पूरे विश्व में सर्वाधिक जनसंख्या चीनएभारत अमेरिका, और -स की है। चारों देशों को मिलाकर विश्व की लगभग आधी जनसंख्या होती है। भारत के चार बड़ें राज्यों उत्तर प्रदेश बिहार, मध्यप्रदेश, और राजस्थान में जनसंख्या की वृद्धि बहुत ऊँची है। प्रतिवर्ष जनसंख्या वृद्धि दर ने प्राकृतिक संसाधनों तथा पर्यावरण संरक्षण के हमारे सारे प्रयास को विफल कर दिया है।

जनसंख्या विस्फोट की स्थिति आज हमारे समक्ष एक महत्वपूर्ण चुनौती के रूप में खड़ी है जो मानव के पतन का कारण बनती जा रही है। डेढ करोड़ की वर्तमान वार्षिक जनसंख्या वृद्धि ने प्राकृतिक संसाधनों तथा प्राकृतिक पर्यावरण संरक्षण के हमारे सारे प्रसासों को विफल कर दिया है। बढ़ती जनसंख्या भोजन पानी की कमी तो पैदा कर ही रही है साथ ही साथ स्वास्थ्य आवास एवं पर्यावरण सम्बन्धी समस्याओं को भी बढ़ावा दे रहा है। 2011 में भारत की जनसंख्या 11 करोड़ 80 लाख है जिसमें 51.54 प्रतिशत पुरूष और 48.46 प्रतिशत महिलाऐं है।

10.3.1 जनसंख्या वृद्धि के कारण-

जनसंख्या वृद्धि के कई कारण है। जैसे -

- जन्म दर तथा मृत्यु दर में अन्तर पिछले कई दशकों में भारत में जन्म दर तथा मृत्यु दर में कमी आई है। परन्तु जन्म दर में मृत्यु दर की तुलना में कम गिरावट आई है जन्म दर में वृद्धि होने के कारण जनसंख्या में लगातार वृद्धि होती जाती है।
- कम आयु में शादी महिलाओं तथा पुरूषों द्वारा कम उम्र में शादी करना भी जनसंख्या वृद्धि का एक मुख्य कारण है। अशिक्षा कम पढ़े लिखे होने के कारण वे परिवार नियोजन के महत्व को नहीं समझ पाते है क्योंकि कम पढ़ लिखे होने के कारण उनमें नए विचारों को ग्रहण करने एवं तार्किक चिन्तन करने की क्षमता नहीं होती है।
- गरीबी प्रायः देखा गया है कि गरीब परिवारों में बच्चों की संख्या अधिक होती है। गरीब परिवारों में बच्चों की संख्या अधिक होती है। गरीब परिवारों का मानना होता है कि बच्चे ज्यादा होगें तो बो थोड़े समय बाद कुछ न कुछ काम करने लायक हो जायेगे। तो उनकी पारिवारिक आमदनी अधिक से अधिक होगी और उनका भरण पोषण आराम से हो जायेगा। इस तरह की मानसिकता के चलते धीरेधीरे जनसंख्या में भी वृद्धि होती रहती है। परिवार नियोजन के प्रति -ढिवादी विचार बच्चे भगवान की देन है ज्यादातर लोग ऐसे -ढिवादी विचारों पर विश्वास करते है और वे परिवार नियोजन के साधनों को अपनाना पाप समझती है।
- अर्व्याप्त प्रेरणा भारतीय परिवार में परिवार नियोजन के साधनों के प्रति उदासीनता एवं परिवार को सीमित जनसंख्या के प्रति सचेष्ट नहीं रहते हैं।
- राजनैतिक इच्दाशक्ति तथा वचनबद्वता का अभाव है। रखने की अभिप्रेरणा की कमी पायी गई है।

- प्राकृतिक कारण भारत गर्म जलवायु वाला देश है अतः यहाँ बच्चों में कम आयु में ही प्रजनन की परिपक्वता आ जाती है। जो जनसंख्या वृद्धि में सहायक होती है।
- मनोरंजन के साधनों की कमी भी जनसंख्या वृद्धि का एक मुख्य कारण है। स्वस्थ्य मनोरंजन के साधनों के अभाव में वे यौन व्यवहार ही मनोरंजन का एक साधन बना लेते हैं जो जनसंख्या वृद्धि में सहायक होता है।
- संयुक्त परिवार का आर्थिक उत्तरदायित्व सम्मिलित रूप में सभी सदस्यों पर रहता है। इसलिये लोगों में उत्तरदायित्व की भावना कम रहती है।

जनसंख्या सम्बन्धी महत्वपूर्ण आंकड़े

वर्ष	कुल जनसंख्या	पुरूष जनसंख्या	स्त्री जनसंख्या	जनसंख्या घनत्व (प्रतिवर्ग किमी)
2001	1027015247	531277078	495738169	324
2011	1210193422	623724248	586469174	359

10.3.2 जनसंख्या वृद्धि को नियन्त्रित करने के उपाय -

जनसंख्या विस्फोट की समस्या देश की एक मुख्य समस्या है इस समस्या से निपटने के लिए सरकार ने तरहतरह के कई कार्यक्रम चलाये है। जिससे जनसंख्या को नियन्त्रित किया जा सकें।

- कम आयु में लड़की विवाह पर नियंत्रण लड़कियों के लिए 18 वर्ष और लड़कों के लिए 21 वर्ष की आयु विवाह के लिए सरकार द्वारा निर्धारित की गई है। इससे कम उम्र से पहले विवाह करना एक कानूनी अपराध है। विवाह की आयु अधिक निर्धारित होने से जनसंख्या वृद्धिपर कुछ हद तक काबू पाया जा सकता है।
- परिवार नियोजन के साधनों को अपनाना परिवार नियोजन के साधनों को उपलब्ध कराना एवं इनके उपयोग का सही प्रशिक्षण देना एक महत्वपूर्ण कार्य है। परिवार नियोजन के प्रति लोगों को जागरुककरने की आवश्यकता है। परिवार नियोजन सम्बन्धी सभी साधनों को निःशुल्क, या बहुत कम दामों पर सभी प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर उपलब्ध कराना सरकार की नैतिक जिम्मेदारी है।
- जनसंख्या शिक्षा का प्रचार प्रसार करके जनसंख्या वृद्धि पर नियन्त्रण किया जा सकता है।
- उन राज्यों संस्थानों या व्यक्तियों को वित्तीय सहायता प्रदान करना जो परिवार नियोजन के क्षेत्र में अच्छा कार्य करते हो।
- मनोरंजन के स्वस्थ्य साधनों का विकास करके जनसंख्या वृद्धि पर नियन्त्रण किया जा सकता है।
- दूरसंचार के माध्यमों जैसे रेड़ियों दूरदर्शन,टेली फिल्म, के अतिरिक्त नुक्कड़ नाटक, प्रेरक गीतों आदि के माध्यम से लोगों को इसके प्रति जागरुककरना।

- गर्भ निरोध विषयों में शोध के लिए पुनर्वलन देना।
- जनसंख्या का आर्थिक विकास से सीधा सम्बन्ध है लोगों के सामने इस बात को स्पष्ट किया जाए।
- महिलाओं को स्वावलम्बी बनाना।
- बच्चे ईश्वर की देन है इस मानसिकता को बदलने की आवश्यकता है अर्थात धार्मिक अंधविश्वास को समाप्त करना।
- साक्षरता एवं स्वास्थ्य सुविधाओं में होते व्यय में बढ़ोत्तरी की जानी चाहिये। तभी भारत में जनसंख्या वृद्धि से होने वाली समस्याओं का दीर्घकालीन समाधान सम्भव है।

10.3.3 जनसंख्या विस्फोट के दुष्परिणाम -

- अत्यधिक जनसंख्या वृद्धि देश के आर्थिक विकास में बाधा उत्पन्न करती है।
- पूँजी निर्माण आवश्यक मात्रा में नहीं हो पाता है क्योंकि भारत एक विकासशील देश है। जहाँ प्रति व्यक्ति आय कम है अतः लोगों की बचत क्षमता कम होती है। और पूँजी का संचय आवश्यक मात्रा में नहीं हो पाता है।
- अधिक जनसंख्या के कारण देश को खाद्य समस्या का भी सामना करना पड़ता है।
- जनसंख्या अधिक बढ़ने से बेरोजगारी की गम्भीर समस्या उत्पन्न हो जाती है।
- जनसंख्या अधिक होने से कृषि योग्य भूमि का उप विभाजन तेजी से बढ़ जाता है।
- औद्योगीकरण की समस्या उत्पन्न हो जाती है अधिक जनसंख्या के कारण गरीबी बढ़ती है और बचत, आय, जीवनएस्तर व कार्यक्षमता को कम करके इस क्षेत्र के विकास में बाधा उत्पन्न करती है।
- स्वास्थ्य,शिक्षा रहन सहन भरण पोषण, की समस्या उत्पन्न होती है जो व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास की सबसे बड़ी बाधा है।
- पारिवारिक विघटन की स्थिति उत्पन्न होती है।
- जनसंख्या की अधिकता के कारण पर्यावरण प्रदूषण की समस्या।

10.3.4 जनसंख्या विस्फोट में मनोवैज्ञानिक कारकों की भूमिका -

चीन के बाद भारत सर्वाधिक जनसंख्या वाला राष्ट्र बन गया है। यदि जनसंख्या वृद्धि की वर्तमान दरें कायम रही तो 2035 तक भारत चीन को पीछे छोड़कर विश्व का सबसे अधिक जनसंख्या वाला राष्ट्र बन जायेगा। मनोवैज्ञानिक कारकों का सम्बन्ध व्यक्तियों के विचारों विश्वासों मनोवृत्तियों धारणाओं आदि से होता है इस क्षेत्र में हुए अनेक अध्ययनों में पाया गया है कि कालेज छात्रों एवं नौकरी करने वाले व्यक्तियों की मनोवृत्ति परिवार नियोजन के प्रति अनुकूल पाई गई इसी तरह जनजातियों पर हए एक अध्ययन में अधिकांश लोगों ने परिवार नियोजन के प्रति अपना मत व्यक्त करेन में असमर्थता दिखलाई। वहीं अशिक्षित होने से व्यक्ति की संज्ञानात्मक क्षमता भी अविकसित रह जाती है फलस्वरूप ऐसे व्यक्ति परिवार बड़ा होने से दुष्परिणामों के ठीक ढंग से न तो

सोच पाते है और न ही समझ पाते है फलतः उनका योगदान जनसंख्या वृद्वि में बिना किसी तरह के रोकठोक के होते जाता है। दूसरी ओर जो लोग शिक्षित है उनकी मनोवैज्ञानिक समझ और सचेतना अधिक होने के कारण परिवार के आकार को सीमित रखने में वे लोग अधिक विश्वास करते है।

सरकार की ओर से सामाजिक सुरक्षा का समुचित प्रबन्ध न होने के कारण लोग बच्चों को बुढ़ापे का सहारा मानते है और अधिक सन्तानोत्पत्ति में विश्वास करते हैं। वहीं कुछ भारतीय स्त्रियों को ये विश्वास नहीं होता है कि उनके सभी बच्चे जीवित रहेंगे इसलिए वे अधिक बच्चों के जन्म में विश्वास करती है। जनसंख्या वृद्वि के ऐसे ही अनेक मनोवैज्ञानिक कारक है जिनको दूर करके जनसंख्या वृद्वि पर नियन्त्रित किया जा सकता है।

"भारत एक अरब लोगों का राष्ट्र है इस राष्ट्र की तरक्की उसके नागरिकों की मानसिकता पर निर्भर करती है क्योंकि विचार ही अन्ततः कार्य में परिणत होते हैं भारत को एक अरब जनसंख्या वाले राष्ट्र के रूप में सोचना होगा विचारों से सम्पन्न समृद्धि के विचारों से सम्पन्न युवा को पूर्णतया विकसित होने का मौका दिया जाए।"

ए0पी0जे0 अब्दुल कलाम, पूर्व राष्ट्रपति

10.4 लिंग भेद

जेण्डर एक ऐसी सोच है जो समाज में लिंग भेद (स्त्री व पु-ष) का विरोध करती है और एक ऐसे समाज की कल्पना करती है जिसमें काम,गुण, जिम्मेदारियाँ व्यवहार और प्रतिभा किसी लिंगए जाति रंग और वर्ग के आधार पर न थोपे जाय प्रायः कुछ लोगों को इस सम्बन्ध में भ्राति भी होती है वे जेण्डर शब्द का अर्थ महिलाओं से जोड़ देते हैं तो कुछ लोग इसे सेक्से से जोड़ देते हैं अतः लोगों के मन में आने वाली इस तरह की भ्रान्तियों को दूर करना आवश्यक है जेण्डर एक विचारधारा है जिसका अर्थ महिला पुरूषों के सामाजिक रिश्तों से है जो प्राकृतिक नहीं बल्कि समाज द्वारा बनाये गये है शुरुमें इस शब्द का प्रयोग समाज में स्त्री पुरूष के बीच रिश्तों में जो भेद भावपूर्ण सम्बन्ध बन गए हैं वे प्राकृतिक नहीं है उन्हें भगवान ने नहीं बनाया है ज्यादातर लोग ये सोचते है कि स्त्री कमजोर है दीन हीन है और पुरूष ताकतवर, लोगों की इसी सोच को बदलने के लिए जेण्डर शब्द का प्रयोग किया गया। ज्यादातर देशों में सामाजिक लिंग भेद पितृसत्तात्मक है जो पुरूषों की सत्ता को दर्शाता है सामाजिक लिंग भेद की वजह से लड़कियों पर अनेकों बन्धन होते हैं उन पर हिंसा होती है उनके प्रति पक्षपातपूर्ण रवैया अपनाया जाता है जिसके चलते न तो वे फल फूल पाती है और न ही उन्हें अपनी काविलियत दिखाने का मौका मिलता है और इस लिंग भेद का बुरा असर केवल लड़कियों पर ही नहीं पड़ता है। जेण्डर इन्सानों का बनाया है हम और आप अगर चाहे तो स्त्री पुरूष लड़केलड़की को परिभाषा दे सकते हैं। हमें एक ऐसे समाज की रचना कर सकते हैं जहाँ लड़की का अर्थ कमजोर होना नहीं या लड़के का मतलब क्रूर या हिंसात्मक होना नहीं है। हम सब चाहे तो एक ऐसा समाज बना सकते हैं जिसमें कार्य व्यवहार योग्यता लिंगए जाति, आदि के आधार पर न बॉटे जाए बाल्कि सब अपनी इच्छा अपने व्यवहार अपनी योग्यता के आधार पर काम कर सके।

10.4.1 विकास में लिंग का महत्व -

हम सभी को सामाजिक एवं सर्वागीण विकास के लिए महिलाध्पु-ष दोनों की आवश्यकताओं मुद्दों और प्रभाव को समझना होगा। जेण्डर की शुरूआत किस प्रकार हुई, विकास में जेण्डर का क्या महत्व है इसको जानना हम सभी के लिए आवश्यक है स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात कुछ दशकों तक औरतों की तरफ बहुत कम ध्यान दिया जाता था और परिवार तक सीमित औरतों की भूमिका सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था के लिए तो महत्वपूर्ण थी लेकिन उन्हें न तो मान्यता दी जाती थी, और न महत्व। सत्तर के दशक में पश्चिम में महिला आन्दोलन के फलस्वरूप कुछ महिला विकास विशेषज्ञों और शोधकर्ताओं के एक समूह ने विकासशील देशों की औरतों के अनुभवों पर ध्यान केन्द्रित किया। सन् 1975 में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा इस वर्ष को अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष घोषित कर दिये जाने से औरतों के मुद्दे विश्व मंच तक जा पहुँचे। महिलाओं को विकास के कार्यों में ,कीकृत करके कार्य योजना का क्रियान्वयन 1970 से 1980 तक चला। इसे विकास में महिला कहा गया। करगैलिन मोजर ने महिलाओं के विकास की कल्पना तीन आधारों पर की।

- समानता लिंग असमानताओं के प्रति बढ़ती जागरुक ता के कारण महिलाओं ने अन्तर्राष्ट्रीय मंच से यह मांग की कि जीवन के हर क्षेत्र में स्त्री पुरूष के बीच शिक्षा नौकरी, सम्प्त्ति वेतन आदि में समानता हो महिलाओं के अधिकारों की रक्षा के लिए कानूनों में बदलाव लाया जाय।
- गरीबी उन्मूलन समानता की धारा से जोड़ने के लिए गरीब महिलाओं को गरीबी से मुक्ति दिलाने के लिए गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों को अपनाया जाए हमारे यहाँ गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम में महिलाऔं के लिए अनेक योजनाएँ जैसे बालिका समृद्व योजना राज राजेश्वरी एवं भाग्य श्री योजना अन्नपूर्णा योजना इन कार्यक्रमों व योजनाओं के चलते उनके प्रतिदिन के कार्यों में भी सुधार हुआ लेकिन जहाँ तक संसाधनों पर उनका नियन्त्रण या उनकी अधीनता का प्रश्न है उन पर इन कार्यक्रमों को कोई खास प्रभाव नहीं पड़ा।
- कार्यकुशलता 1980 के दशक महिलाओं को मदों के द्वारा निष्क्रीय लाभ पाने वाली इकाई के रूप में न देखकर आर्थिक विकास की सक्रीय भागीदारी के रूप में देखा जाने लगा। 70 के दशक में यहाँ तक कि महिलाओं के विकास की मुख्य धारा से जोड़ना चाहिए। उसके स्थान पर अब यह तर्क दिया जाने लगा कि आर्थिक विकास के लिए महिलाओं की आवश्यकता है। 1980 से 1990 के बीच भारत में ढ़ाचागत समायोजन कार्यक्रम की शुरूआत हुई। जिससे महिलाओं की स्थिति में सुधार होने के बजाए और अधिक गिरावट आयी।

सन 1980 के दशक में महिलाओं को विकास की मुख्य धारा में लाने का एक प्रयास किया गया ताकि उनको उनका हक मिल सके भारत में महिलाओं की स्थिति में सुधार लाने के लिए मुख्यतः निम्न पर अधिक महत्व दिया गया –

- विकास में महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करके।

- महिला समूह एवं इकाइयों को सशक्त करना।
- राष्ट्रीय महिला कोष की स्थापना करके (30 मार्च 1993 को)
- महिला अधिकारिता वर्ष घोषित करके (वर्ष 2001 में)
- महिलाओं में शिक्षा का प्रसार।
- परिवारिक अधिकारों में वृद्धि करके।
- महिलाओं के सुरक्षात्मक प्रावधान।

महिला समूह तथा महिलाओं द्वारा चलाई जा रही इकाइयों को सशक्त बनाना ताकि जेण्डर के प्रति महिलाऐं जागरुकहो सकें। महिलाओं के लिए जेण्डर प्रशिक्षण एक महत्वपूर्ण आयाम है। जेण्डर प्रशिक्षण नियोजकों को जेण्डर की भिन्न भिन्न भूमिकाओं को करीब से देखने का मौका मिलता है जैसे महिलाएँ अधिक काम करते हुए भी कम वेतन पाती है आदि सूचनाओं से नियोजकों को योजना बनाने में सहायकता मिलती है। अतः जेण्डर और विकास महिलाओं और पुरूषों के उत्पादन कार्यों और प्रजनन कार्यों (सेवाएं और घर परिवार) दोनों को परखने के बाद घरेलू राजनैतिक व्यक्तिगत, व आर्थिक क्षेत्रों के सन्तुलन पर ध्यान देती है। इसलिए आवश्यक है कि हम सभी अपने निहित स्वार्थ को छोड़कर अपने समाज की प्रगति के बारे में सोचे।

10.4.2 लिंग भेद समाप्त करने हेतु कुछ प्रयास -

लिंग समाप्त करने या कम करने के लिए छोटी छोटी कोशिशों द्वारा एक बदलाव लाने का प्रयास कर सकते हैं -

- लड़के और लड़कियों को बराबर का प्यार देख रेख और सम्मान मिले।
- लड़के और लड़कियों, महिलाओं एवं पुरूषों को समान पोषण स्वास्थ्य सेवाएँ शिक्षा, रोजी, रोटी, कमाने एवं विकास के समान अवसर मिले।
- अपने स्वय के विचारों में परिवर्तन करके।
- अपने समुदायों में लिंग पक्षपात और महिलाओं के प्रति हिंसा पर बातचीत प्रारम्भ करना व उन्हें इस विषय पर बातचीत करने के लिए प्रोत्साहित करना।
- पुरूष और महिलाएं दोनों परिवार के फैसलों में बराबर की भूमिका निभाएँ।
- दोनों सामुदायिक फैसलों में भी शामिल है।
- एक साकारात्मक वातावरण तैयार करना और समुदाय के प्रभावशाली लोगों को इस अभियान में शामिल करना।
- लोगों के मन में यह सोच विकसित करना कि महिला पुरूष जीवन साथी के रूप में निजी एवं सार्वजनिक जीवन में एक समान है।
- कानूनी समानता के लिए राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयत्न किये जाए।

- राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पुरूषों एवं महिलाओं के लिए आर्थिक एवं राजनीतिक क्षेत्र में अवसर बढ़ाने के लिए प्रयत्न किये जाए।

ये कुछ छोटी-छोटी कोशिशें ही किसी देश के विकास में एक बड़ा बदलाव ला सकती है जब तक विश्व में महिलाओं की आधी आबादी इस त्रासदी से मुक्त होकर पुरूषों के समान अवसर मुक्त जीवन यापन नहीं करेगी विश्व विकास का सपना नितान्त अधूरा ही रहेगा, अपनी योग्यता एवं क्षमता के अनुसार हर क्षेत्र में महिलाओं को जब समान अवसर उपलब्ध होगें तभी सही एवं श्रेष्ठ विकास होगा।

10.5 आधुनिकीकरण

आधुनिकीकरण को परिवर्तन की एक नई प्रक्रिया के रूप में देखा जाता है विश्व के अनेक देश अपनी परम्पराओं को छोड़कर आधुनिकीकरण की दिशा में काफी आगे निकट गए है वहीं भारतीय समाज में आज भी परम्परा और आधुनिकता का एक अनूठा मेल देखने को मिलता है। एक ओर जहाँ हम कर्म पुनर्जन्म, परलोक, शुभ, अशुभ, के सांस्कृतिक मूल्यों पवित्रतावादी विचारों तथा जातियों के नियमों जैसी परम्पराओं में प्रभावित है। वहीं दूसरी ओर प्रौद्योगिक विकास नगरी करण, धर्म, निरपेक्षता, तथा तर्कपूर्ण व्यवहारों का भी प्रभाव तेजी से बढ़ता जा रहा है। आज भारतीय समाज में परम्परा और आधुनिकीकरण के विचार दोनों साथसाथ चल रहे है। दोनों इस तरह से घुल मिल गए है कि उन्हें एक दूसरे से अलग करना कठिन है

आधुनिकीकरण एक ऐसा महत्वपूर्ण सम्प्रत्यय है जिसका प्रयोग हम प्रायः सामाजिक परिवर्तन के रूप में करते हैं। आधुनिकीकरण में सामाजिक सम्बन्धों में होने वाले सभी तरह के परिवर्तनों को एवं सामाजिक मूल्यों में हाने वाले परिवर्तन को सम्मिलित किया जाता है। इसमें सामाजिक राजनैतिक तथा आर्थिक संगठनों में होने वाले सभी तरह के परिवर्तन सम्मिलित होते हैं। इसमें कृषि प्रौद्योगिकी शिक्षा, स्वास्थ्य आधुनिकीकरण, में किसी संस्कृति विशेष का प्रभाव नहीं होता है बल्कि नवीनतम एवं आधुनिकतम प्राविधियों सिद्वान्तों एवं मूल्यों की प्रधानता के कारण परिवर्तन होता है। हम अपने दैनिक जीवन में आधुनिक और आधुनिकीकरण शब्द का प्रयोग बहुत ज्यादा करते है। आधुनिक चिन्तन,आधुनिक ज्ञान,आधुनिक शिक्षा, आधुनिक संस्कृति आदि ऐसे शब्द है जिनका प्रयोग हम किसी भी उस दशा के लिए कर देते हैं जो अपने परम्परागत रूप में भिन्न होती है। आधुनिकीकरण के सम्बन्ध में हम कह सकते हैं कि यह एक ऐसी अवधारणा है जिसमें कुछ परिवर्तनशील मूल्यों का समावेश होता है। और ये परिवर्तन मूल्य विकास, सार्वभौमिक तथा तार्किकता की दिशा में होते हैं। अर्थात आधुनिकीकरण परिवर्तन की वह प्रक्रिया है जो किसी परम्परागत अथवना पिछड़े हुए समाज में प्रौद्योगिक विकास, धर्मनिरपेक्षता स्वतंत्रता एवं गतिशीलता जैसी विशेषताओं के प्रभाव में वृद्वि करने लगती है।

10.5.1 आधुनिकीकरण की विशेषताएँ-

अवधारणा को स्पष्ट करने के लिए इसकी आधुनिकीकरण के आधारों को समझना आवश्यक है।

- नगरीकरण में वृद्धि आधुनिकीकरण की स्थिति में केवल ग्रामीण क्षेत्र नगरों के रूप में ही नहीं बदलते है बल्कि यह एक ऐसी प्रक्रिया है। जिसमें नगर से सम्बन्धित मनोवृत्तियाँ प्रभावपूर्ण बनने लगती है शिक्षा के प्रति लोगों में -चि बढ़ना तर्क और विवेक के आधार पर काम करना वर्तमान जीवन को अधिक महत्व देना जीवन के प्रति अधिक व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाना आदि आधुनिकीकरण की मुख्य विशेषताएँ है।
- प्रौद्योगिक विकास से तात्पर्य समाज में जब परिवर्तन और संचार कृषि और औद्योगिक उत्पादन तथा दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति से सम्बन्धित नयेनये अविष्कारों के द्वारा विभिन्न आवश्यकतायें पूरा किया जाता है। तब इस प्रक्रिया को आधुनिकीकरण कहा जाता है।
- बढ़ती हुई गतिशीलता आधुनिकीरण की स्थिति में व्यक्तियों की समाजिक आर्थिक स्थिति जन्मजात नहीं बल्कि अर्जित होती है जिसमें व्यक्ति अपनी कुशलता और योग्यता को बढ़ाकर अपनी स्थिति को पहले से ऊँचा उठाने की कोशिश करता है। अतः विभिन्न क्षेत्रों में गतिशीलता का पड़ना आधुनिकीकरण की एक मुख्य विशेषता है।
- लोकतांत्रिक मूल्यों में वृद्धि सामाजिक समानता धर्मनिरपेक्षता विचारों की स्वतंत्रता मताधिकार का प्रयोग सामाजिक कार्यो के प्रति जागरुक ता अपने अधिकारों के प्रति सचेत रहना आदि कुछ लोकतात्रित मूल्य है। और इन मूल्यों की दिशा में होन वाला परिवर्तन ही आधुनिकीकरण है।
- लौकिक मूल्यों की प्रधानता आधुनुकीकरण की प्रक्रिया में लौकिक अथवा सांसारिक मूल्यों का महत्व अधिक होता है। फलतः मोक्ष की जगह सांसारिक सफलताओं को अधिक महत्व मिलने लगता है।

10.5.2 आधुनिकीकरण के कारक -

- शिक्षा शिक्षा के अभाव में कोई भी समाज आधुनिकीकरण की प्रक्रिया से नहीं गुजर सकता है। शिक्षा द्वारा ज्ञान बढ़ता है और ज्ञान के द्वारा प्रौद्योगिक खोज को बढ़ावा मिलता है और ये आधुनिकीकरण की प्रक्रिया के लिए नितान्त आवश्यक है।
- संचार दूरसंचार के साधन जैसे कम्प्यूटर, इंटरनेट, टेलीफोनएटी0वी0 रेडियो, ने आधुनिकीकरण को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है।
- राष्ट्रवादी विचारधारा आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को बढ़ाने के लिए आवश्यक है। कि समाज में रहने वाले लोगों के बीच में राष्ट्रवादी विचारधारा को बढ़ाया जाने वाले लोगों भाईभतीजावाद, जातिवाद, या क्षेत्रीयवाद जैसी भावनाओं से ग्रस्त रहेगें। तो कोई भी मुल्क तरक्की नहीं कर सकता है। देश की तरक्की के लिए आवश्यक है कि लोगों में राष्ट्रहित की भावना सर्वोपरि हो।
- उत्तम नेतृत्व राष्ट्र में नेताओं की भूमिका अहम होती है। परम्परागत समाज आसानी से बदलने को तैयार नहीं होता है, उसके लिए एक नेता की आवश्यकता होती है जो लोगों को पुरानी व्यवस्था से आधुनिक

व्यवस्था की ओर ले चले। महात्मागांधी जवाहरलाल, नेह-, मोहम्मद अली जिन्ना, ने राष्ट्र को आधुनिकीकरण की राह पर बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

10.5.3 भारत में आधुनिकीकरण का प्रभाव -

भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात जिस तरह से सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, व्यवस्था का विकास हुआ। उसे आधुनिकीकरण, में होने वाली वृद्धि का सबसे मुख्य कारण माना जा सकता है। स्वतंत्रता के बाद भारत में औद्योगिकरण तथा नगरीकरण का तेजी से विकास हुआ। शिक्षा के प्रचार प्रसार से अविष्कारों और तार्किक विचारों में वृद्धि हुई सामाजिक और आर्थिक नियोजन के प्रभाव से ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के विचारों और व्यवहारों में तेजी से परिवर्तन होने लगा। परिवहन एवं दूर संचार के साधनों में वृद्धि होने से सामाजिक गतिशीलता को प्रोत्साहन मिलने लगा। शहरों में रहने वाले लोगों के चिन्तन एवं मनोवृत्ति में परिवर्तन होने लगा फलस्वरूप से सभी कारकों ने आधुनिकीकरण में अपना योगदान किया। भारत में आधुनिकीकरण में अपना योगदान किया। भारत में आधुनिकीकरण की प्रक्रिया निम्न क्षेत्रों में देखी जा सकती है।

- प्रौद्योगिक विकास स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत में कपड़ों, खाद्य, सीमेन्ट, जूट, बिजली, के उपकरणों, दवाइयों तथा पेट्रोलियम पदार्थो के बड़ेबड़े कारखाने स्थापित हो चुके है। बढ़ते प्रौद्योगिक विकास के चलते हमारे समाज में अनेक संरचनात्मक परिवर्तन होने लगे।
- समाज सुधार प्रोत्साहन आधुनिकीकरण नई मनोवृत्तियों के फलस्वरूप अन्धविश्वासों एवं कुरीतियों का प्रभाव तेजी से कम होने लगा। सती प्रथा, बाल विवाह, विधवाओं का शोषण, पर्दाप्रथा, आदि का विरोध बढ़ने लगा आधुनिकता के प्रभाव से भारत में एक ऐसी सामाजिक चेतना उत्पन्न हुई जो समानता, सामाजिक न्याय, और स्वतंत्रता, के मूल्यों पर आधारित है।
- रहन सहन के स्तर में सुधार विभिन्न प्रकार के विकास कार्यक्रमों के परिणामस्वरूप जीवन के सभी पक्षों में आधुनिकीकरण को प्रोत्साहन मिला । लोगों की वेशभूषा, रहन सहनएखान पान में व्यापक सुधार हुआ है साथ ही मनोवृत्तियों में भी परिवर्तन हुआ जैसे पहले लोगों लड़कियों की पढ़ाई पर ध्यान नहीं देते थे लेकिन आज लोगों की मनोवृत्ति बदल चुकी है अब लोग लड़कियों की (लड़कों के बराबर) पढ़ाई पर भी ध्यान देने लगें है।
- कृषि का आधुनिकीकरण गाँवों में कृषि की नई तकनीकों जैसे पम्पिंग सेट, कल्टीवेटर, टैक्टर, थ्रेशर आदि का प्रयोग ज्यादातर किसान कर रहे है अनेक कृषि दर्शन से सम्बन्धित प्रोग्राम दूरदर्शन पर भी रोज दिखाये जा रहे है। अनेक कृषि दर्शन से सम्बन्धित प्रोग्राम दूरदर्शन पर भी रोज दिखाये जा रहे हैं पहले की अपेक्षा आज का किसान अपनी फसलों और पशुओं दोनों के लिए ही जागरुकहै। कृषि से आधुनिकीकरण से गाँव और शहरोकी दूरी बहुत कम हो गई है।

- शिक्षा शिक्षा के प्रति हमारी मनोवृत्तियों में परिवर्तन हुआ है आज शिक्षा के स्थिति के प्रति हमारी मनोवृत्तियो में परिवर्तन हुआ है आज शिक्षा के स्थिति ऋण की व्यवस्था सरकार द्वारा की गई हो आर्थिक कठिनाइयों के बावजूद आज माता पिता बच्चों को अच्छी शिक्षा दिलाना चाहते है।
- लोकतान्त्रिक नेतृत्व आज सभी जाति के लोगों को आर्थिक स्थिति, धर्म, लिंग भेदभाव, के बिना राजनीति में हिस्सा ले रहे है जिन जमीदारों के पास परम्परागत रूप से नेतृत्व के अधिकार थे उनकी शक्ति सरचना वाले इस तरह के परिवर्तन ने लोगों की मनोवृत्तियाँ बदल दी जो आधुनिकीकरण की दिशा में एक सहायक कदम है।
- सामाजिक मूल्यों एवं मनोवृत्तियों में परिवर्तन मूल्यों में परिवर्तन के साथ साथ विभिन्न वर्गो की मनोवृत्तियों में व्यापक परिवर्तन हुए है। अब लोग भाग्य की अपेक्षा श्रम को अधिक महत्व देने लगे हैं। धार्मिक कदूरता के स्थान पर धर्म निरपेक्षका का भाव लोगों में बढ़ा है गतिशीलता (परिवर्तनशीलता) ही जीवन है जैसे विचारों में वृद्वि हुई है लोग अपने अधिकारों के प्रति जागरुकहै और ये परिवर्तन आधुनिकीकरण की ओर स्पष्ट संकेत करते हैं। अतः हम कह सकते हैं कि कोई समाज कितना भी आधुनिक क्यों न हो कुछ न कुछ नई समस्याएँ जन्म लेती रहती है और हम उनका निराकरण कर या उसमें परिवर्तन करके आगे की ओर बढ़ते रहते हैं।

10.6 नगरीकरण

सभी तरह के सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रियाओं में नगरीकरण की प्रक्रिया सबसे महत्वपूर्ण प्रक्रिया है हमारा देश एक कृषि प्रधान देश है। अन्य देशों की तुलना में हमारे यहाँ नगरीकरण की प्रक्रिया का विकास काफी देर से शुरुहुआ पिछले कुछ दशकों में जैसे परिवहन और दूर संचार के साधनों का विकास हुआ और शहरों में बड़ेबड़े कारखानों और उद्योग स्थापित होने लगे वैसे लोग गाँवों से पलायन कर शहर की ओर बढ़ने लगे। लोगों को रोजगार के अवसर मिलने लगे वैसेवैसे नगरीकरण की प्रक्रिया में वृद्वि होती गई और हमारी सामाजिक संस्थाओं सामाजिक संरचना, मनोवृत्तियों अभिवृत्तियों, तथा व्यवहार के ढंग एवं जीवन स्तर में परिवर्तन स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगे। इसीलिए नगरीकरण की प्रक्रिया को सामाजिक परिवर्तन का मुख्य स्त्रोत माना जाता है।

नगरीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा नगरों के क्षेत्रों तथा नगरीय जीवनशैली का विस्तार होता है। नगरीकरण की प्रक्रिया का औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया में वृद्वि होती जाती है नगरीकरण की प्रक्रिया में भी वृद्वि होती जाती है। इसमें जनसंख्या का गाँवों से नगरों की ओर बढ़ना या नगरीय मनोवृत्तियों का प्रभाव अधिक होना ही नहीं है बल्कि स्थान परिवर्तन के बिना भी लोगों की आदतों और व्यवहार के तरीकों में जब नगरीय विशेषताओं का समावेश होने लगता है तो ऐसी स्थिति नगरीकरण की प्रक्रिया की ओर संकेत करती है। जब किसी समाज में नगरीकरण की प्रक्रिया में वृद्वि होने लगती है। तो धीरेधीरे नगरों से दूर स्थानों पर रहने वाले लोग भी इससे प्रभावित होने लगते हैं।

10.6.1 भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया -

भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया बीसवी शताब्दी से प्रारम्भ हुई 1951 के बाद भारत के औद्योगिक विकास में तीव्र गति से वृद्धि हुई। सिर्फ औद्योगिक विकास के कारण ही नगरों का विकास बल्कि शिक्षा के केन्द्रो, राजनीतिक करणों, धार्मिक केन्द्रों के रूप में भी हुआ है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात जहाँ भारत में नगरों की कुल जनसंख्या जहाँ 6 करोड़ पहुँच रही है दिल्ली, मुम्बई, कोलकाता, चेन्नई, आदि नगरों की जनसंख्या (दुनिया के बहुत से देशों की कुल जनसंख्या) बहुत अधिक है। भारत में अंग्रेजों के शासन काल से पहले गाँवों को नगरों से जोड़ने के लिए सड़कों का अभाव होने के कारण व परिवहन सुविधाऐं उपलब्ध न होने के कारण नगरों का अधिक विस्तार नहीं हो सका। बीसवी शताब्दी के शुरुमें जब बसों,रेलों व एक स्थान से दूसरे स्थान पर जोन की सुविधाएँ मिलने लगी तो ग्रामीण जनसंख्या का नगरों से सम्पर्क बढ़ने लगा। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात जब भारत में बड़ेबड़े उद्योगों की स्थापना शुरुहुई। तो रोजगार की तलाश में लोग नगरों की ओर आकर्षित हुए। भारत में नगरीकरण की प्रक्रिया बीसवी शताब्दी में स्वतन्त्रता प्राप्ति के औद्योगिक विकास के फलस्वरूप हुई।

10.6.2 नगरीकरण की प्रक्रिया में सहायक कारक -

हमारे यहाँ स्वतन्त्रता प्राप्ति से पहले नगरों के विकास में अनुकूल भौगोलिक स्थिति, धार्मिक विश्वास, यातायात, के साधनों की अधिक भूमिका रही और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद औद्योगिक यातायात एवं संचार के साधन राजनीतिक दशाएँ ग्रामीण राजनीतिक आदि ऐसी स्थिति है जिनका नगरीकरण की प्रक्रिया को बढ़ाने विशेष योगदान है।

- जनसंख्या का बढ़ाना स्वतन्त्रता से पहले भारत की लगभग 86 प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में रहती थी लेकिन स्वतन्त्रता के बाद जब हमारे देश की जनसंख्या में तीव्र गति से वृद्धि हुई तो गाँवों में खेतों का बटवारा बढ़ने लगा और आर्थिक परेशानी से निपटने के लिए रोजगार की तलाश में लोगों ने शहरों की ओर जाना शुरुकर दिया।
- आवागमन एवं संचार के साधनों में वृद्धि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात गाँवों को नगरों से जोड़ने के लिए सड़कों का निर्माण हुआ इक्कीसवी शताब्दी के शुरुमें आवगमन और संचार के साधनों में काफी वृद्धि हुई नगरीय और ग्रामीण क्षेत्रों की दूरी काफी कम हो गई यातायात की सुविधाओं के चलते कृषि क्षेत्र में काफी सुधार हुए अब किसानों को उनकी फसल से अच्छे दाम मिलने लगे।
- औद्योगिक विकास की प्रक्रिया के होने से गाँवों के कुटीर उद्योग और हस्तशिप धीरेधीरे खत्म होने की कगार पर पहुँच गए और लोगों में बेरोजगारी बढ़ गई इधर नगरों में उद्योगों के लिए अधिक श्रमिकों की आवश्यकता होने से ग्रामीण जनसंख्या का बड़ा हिस्सा नगरों की ओर जाने लगा। और नगरीय जनसंख्या में वृद्धि होने लगी।

- राजनीतिक दशाएँ जो नगर राजनीतिक क्रियाओं को केन्द्र होते हैं उन नगरों में विकास के अधिक अवसर प्राप्त होते हैं आज दिल्ली में नगरीकरण की प्रक्रिया काफी तेज है विभिन्न प्रदेशों की राजधानी की तुलना में नगरीकरण की प्रक्रिया काफी तेज है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में राजनीतिक गुटबन्दी ग्रामीण विकास कार्यक्रमों से होने वाले फायदे के चलते गाँवों में भी काफी राजनीति होने लगी है जिसकी वजह से गाँवों में संघर्षो और तनावों में भी वृद्धि हुई है। फलस्वरूप गाँवों में रहने वाले बहुत से लोग अपने जीवन को असुरक्षित समझकर नगरों में आकर रहने लगते है।
- नागरिक सुविधाएँ नगरों में शिक्षा पानी, बिजली, स्वास्थ्य, एवं अन्य सुविधाओं, के चलते गाँवों छोटी जगहों पर रहने वाले लोगों के लिए आकर्षण का केन्द्र बन जाते हैं।

नगरीकरण की प्रक्रिया में केवल राजनीतिक धार्मिक औद्योगिक शिक्षा, आदि ही नहीं सहायक होते हैं बल्कि वैयक्तिक कुशलता श्रम विभाजन आर्थिक सुरक्षा आदि कारक भी नगरीकरण की प्रक्रिया में होने वाले वृद्धि में सहायक होते हैं।

10.6.3 सामाजिक परिवर्तन में नगरीकरण की भूमिका -

नगरीकरण की प्रक्रिया में सामाजिक परिवर्तन की भूमिका स्पष्ट रूप से दिखाई देती है नगरीकरण की प्रक्रिया ने हमारे सामाजिक जीवन यहाँ अनेक उपयोगी परिवर्तन किये है। वहीं अनेक समस्याओं में वृद्वि भी हुई है। सामाजिक परिवर्तन नगरीकरण की भूमिका निम्न रुपों में देखी जा सकती है।

- सामाजिक जीवन पर प्रभाव नगरीकरण की प्रक्रिया से भूमि की कमी मंहगे आवास शोर गुल प्रदूषण, आदि अनेक सामाजिक समस्याएँ बढ़ गई है। परिवारिक विघटन की समस्या तेजी से बढ़ी है। मनोरजंन के नाम पर अनैतिकता, मध्यपान, नशीले पदार्थो का सेवन, आदि सामाजिक जीवन को विघटित करती है। नगरीकरण की प्रक्रिया उन अभिवृत्तियों से अधिक सम्बन्धित है जिसमें सामाजिक कुरीतियों एवं अन्धविश्वासों को अधिक महत्व नहीं दिया जाता है।
- परिवार पर प्रभाव पहले हमारे यहाँ संयुक्त परिवार व्यवस्था का अधिक चलन था तीन चार पीढ़ियों के सदस्य एक साथ घर में रहते थे। नगरीकरण के कारण लोग रोजगार की तलाश में शहर में बसना शुरु किया शहरों में कम जगह और महंगाई के चलते सभी सदस्यों का एक साथ रहना सम्भव नहीं रह गया। फलतः परिवार के सदस्यों के परिवारिक सम्बन्धों में परिवर्तन आया। भारत की परम्परागत परिवार व्यवव्था की संरचना और कार्यों में परिवर्तन लाने में नगरीकरण का मुख्य योगदान है।
- महिलाओं की स्थिति में सुधार लाने में सराहनीय योगदान दिया है। शिक्षा, चिकित्सा, राजनीतिक एवं सामाजिक क्षेत्रों में दिया है। शिक्षा, चिकित्सा, राजनीतिक एवं सामाजिक क्षेत्रों में महिलाओं की रुचि बढ़ रही है। जिसके फलस्वरूप दहेज प्रथा, बाल विवाह व महिलाओं, पर हो रहे शोषण, में कमी आयी आज हमारे देश में राजनीति के कई महत्वपूर्ण पदों पर महिलाएं विराजमान है।

- ग्राम्य जीवन पर प्रभाव नगरीकरण के फलस्वरूप गाँवों में मुद्रा का चलन बढ़ गया जजमानी प्रथा लगभग समाप्त हो गई कृषि में नये नये उपकरण प्रयोग किये जाने लगे लोगों के रहन सहन के तरीकों में परिवर्तन आने लगा लोगों रुचियों और अभिवृत्तियों में परिवर्तन स्पष्ट होने लगे आज गाँवों में रेडियो टेलीफोन मोबाइल आदि सेवाओं का बोल बाला है।
- राजनीतिक जीवन से हम अपने सामाजिक जीवन को अलग नहीं कर सकते हैं। यातायात एवं संचार सुविधाओं के फलस्वरूप समाचार पत्रों एवं पत्रिकाओं द्वारा दिन प्रतिदिन की होने वाली घटनाओं की जानकारी प्राप्त होने लगी। लोगों में राजनीतिक चेतना इतनी जागृत हो गई कि जनसाधारण की उपेक्षा कर शासन चलाना सरकार के लिए कठिन हो गया।
- आर्थिक जीवन पर प्रभाव नगरीकरण के विकास से पहले किसान को अपनी फसल का पूरापूरा दाम नहीं मिल पाता था नगरीकरण की प्रक्रिया के बाद बाजारों एवं यातायात की सुविधा के चलते उन्हें अपनी उपज का उचित मूल्य मिलने लगा नगरीकरण के प्रभाव से लोगों को रहन सहन का स्तर ऊचा उठाने में मदद मिली।
- जाति व्यवस्था का प्रभाव पहले गाँवों में जाति के आधार पर व्यवसाय की व्यवस्था थी लेकिन नगरीकरण की प्रक्रिया ने विभिन्न जातियों के बीच मतभेद को बहुत कम कर दिया। नगरों में एक ही व्यवसाय और एक ही स्थान पर विभिन्न जातियों के लोगों द्वारा साथ साथ काम करने पर ऊच नीच की भावना बहुत कम हो गई। नगरीकरण की प्रक्रिया में लोगों की योग्यता, और कुशलता को विशेष महत्व दिया है।
- धार्मिक जीवन पर प्रभाव नगरीकरण की प्रक्रिया अंधविश्वासों -ढ़ियों धार्मिक कट्टरता आदि को अधिक नहीं देती है शिक्षा के वैज्ञानिक प्रभाव से लोगों की मनोवृत्तियाँ, विश्वास मूल्य आदि बदलने लगे है। गाँवों की अपेक्षा नगरों में धर्म निरपेक्षता का भाव अधिक देखने को मिलता है।

10.6.4 नगरों की ज्वलंत समस्याएँ -

- नगरों की सबसे बड़ी समस्या वहाँ की सघन जनसंख्या है।
- जनाधिक्य के कारण आवास की गम्भीर समस्या है।
- परिवहन की व्यस्तता व वाहनों की भीड़ के कारण अधिक दुर्घटनाएँ व आने जाने में समय अधिक लगता है।
- नगरों की लगभग 3035 प्रतिशत जनसंख्या मलिन बस्तियों में रहती है में बस्तियाँ जुओं के अड्डों एवं अपराधियों की शरण स्थली बनती जा रही है। एवं अपराधियों की शरण स्थली बनती जा रही है।
- नगर प्रशासन एवं प्रबन्धन में भ्रष्टाचार के चलते इनका उचित विकास नहीं हो पा रहा है।
- जनसंख्या की अधिकतम व वाहनों एवं फैक्ट्रियों से निकलते धुएँ के कारण पर्यावरण काफी दूषित रहता है। नगरों की नदियों गन्दे नाले के रूप में बदलती जा रही है। प्रदूषण के कारण लोगों में अनेक बीमारियों जैसे अस्थमा टी0वी0 कैंसर आदि फैलती जा रही है।

10.7 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के द्वारा विभिन्न सामाजिक समस्याओं जनसंख्या विस्फोट लिंग पक्षपात (भेद) नगरीकरण आधुनिकीकरण की विशेषताओं, समस्याओं तथा इन समस्याओं को दूर करने के उपायों आदि के विषय में आपने जानकारी प्राप्त की। निवारण हेतु विभिन्न उपायों को अपनाकर हम इन समस्याओं को काफी हद तक दूर कर सकते हैं। इसके लिए हमें आपको और सबको मिलकर (प्रयास) करना होगा जिससे हम अपनी आगे आने वाली पीढ़ी को एक स्वच्छ और अच्छा वातावरण दे सके। उनके भविष्य को एक नई दिशा प्रदान कर सके। भारत आज जिन चुनौतियों का सामना कर रहा है। उससे हतोत्तसाहित या निराश होने की आवश्यकता नहीं है बल्कि आवश्यकता इस बात की है कि नए उत्साह के साथ कुछ ठोस कदम उठायें जाए।

10.8 शब्दावली

- **भ्रान्तियाँ:** गलत फहमी
- **उन्मूलन:** निवारण
- **सशक्त:** मजबूत
- **दीर्घकालीन:** लम्बे समय तक
- **परिपक्वता:** शरीरिक एवं मानसिक रूप से विकसित
- **स्वावलम्बी:** आत्म निर्भरता
- **आवागमन:** आनेजाने के लिए यातायात
- **ग्राम्य:** गॉव
- **जनाधिक्य:** अधिक जनसंख्या

10.9 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

सत्य/असत्य बताइये -

1) नगरीकरण की प्रक्रिया के जाति नियमों को कमजोर किया है। (सत्य/असत्य)
2) नगरीकरण की प्रक्रिया व्यक्तिगत योग्यता और कुशलता को अधिक महत्व नहीं देती है। (सत्य/असत्य)
3) औद्योगिकरण के बिना नगरीकरण सम्भव नहीं होता है। (सत्य/असत्य)
4) नगरीयता जीवन की एक विशेष विधि है। (सत्य/असत्य)
5) प्रदूषण नगरीकरण की एक मुख्य समस्या है। (सत्य/असत्य)
6) आधुनिकीकरण की मुख्य विशेषता नगरीकरण में वृद्दि हैं। (सत्य/असत्य)

7) भारतीय समाज में आधुनिकीकरण की प्रक्रिया केवल नगरों तक सीमित है। (सत्य/असत्य)

8) नगरीय समुदाय में सभी लोगों के विचार धर्म निरपेक्ष तथा तार्किक होते हैं। (सत्य/असत्य)

9) आधुनिकीकरण का प्रौद्योगिक विकास पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। (सत्य/असत्य)

10) शिक्षा, संचार, उत्तम नेतृत्व आधुनिकीकरण, के मुख्य कारक है। (सत्य/असत्य)

11) पूरे विश्व में भारत की जनसंख्या सर्वाधिक है। (सत्य/असत्य)

12) भारत में मृत्यु दर का कम होना जनसंख्या विस्फोट का एक मुख्य कारण है। (सत्य/असत्य)

13) भारत में 2011 की जनगणना के अनुसार भारत में जनसंख्या घनत्व प्रति वर्ग किमी 359 लोग रहते हैं। (सत्य/असत्य)

14) भारत में स्त्रियों की अपेक्षा पुरुषो की जनसंख्या अधिक है। (सत्य/असत्य)

15) भारत में सर्वाधिक जनसंख्या वाला राज्य उत्तर प्रदेश है। (सत्य/असत्य)

- बहु विकल्पीय प्रश्न (किसी एक पर सही का निशान लगाइये)

(1) भारत का जनसंख्या की दृष्टि से विश्व में

(अ) पहला स्थान है (ब) तीसरा स्थान है।

(स) दूसरा स्थान है (द) छठा स्थान है।

(2) भारत में जनसंख्या का घनत्व प्रति वर्ग किमी कितना है।

(अ) 324 (स) 370

(ब) 359 (द) 216

(3) जनगणना कितने वर्ष बाद की जाती है।

(अ) 8 वर्ष बाद (स) 10 वर्ष बाद

(ब) 11 वर्ष बाद (द) 9 वर्ष बाद

(4) भारत में जनाधिक्य का मुख्य कारण

(अ) अशिक्षा (ब) मृत्यु दर में कमी

(ब) गरीबी (द) उपयुक्त सभी

(5) किसी देश में जनसंख्या की उस अवस्था को क्या कहते है जिसमें जनसंख्या की आवश्यकतानुसार खाद्य सामग्री का अभाव हो

(अ) जनाधिक्य (स) गरीबी

(ब) बेरोजगारी (द) खाद्य संकट

(6) निम्न में से कौन एक नगरीकरण से सम्बन्धित गंभीर समस्या है।

(अ) निम्न जीवन स्तर (ब) गन्दी बस्तियाँ

(स) गाँवों में जाति संघर्ष (द) औपचारिक सम्बन्धों में वृद्धि

(7) निम्न में से किस को नगर कहा जायेगा।

(अ) जहाँ जनसंख्या का घनत्व अधिक हो (स) जहाँ आधुनिकीकरण के लक्षण हो

(ब) जहाँ जाति व्यवस्था कमजोर हो (द) जहाँ 75 प्रतिशत से अधिक लोग बगैर कृषि व्यवसाय करते हो

(8) निम्न में से नगरीकरण का लक्षण क्या है।

(अ) ग्रामीण क्षेत्रों का नगरीय क्षेत्रों में बदलना (स) नगरीय मनोवृत्तियों में वृद्धि होना

(ब) व्यावसायिक गतिशीलता बढ़ना (द) औपचारिक सम्बन्धों में वृद्धि होना

(9) निम्न में से परिवार की कौन सी विशेषता नगरीकरण से प्रभावित है।

(अ) मुखिया का अधिकार (स) आयु पर आधारित स्तरीकरण

(ब) निम्न जीवन स्तर (द) वैयक्तिक स्वतन्त्रता

10.10 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- डा0 अरुणकुमार सिंह; समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा; प्रकाशन मोतीलाल बनारसीदास नई दिल्ली।
- डाँ0 राजेन्द्र नाथ मुकर्जी, डा0 भरत अग्रवाल; सामाजिक समस्याएँ; विवेक प्रकाशन दिल्ली।

10.11 निबन्धात्मक प्रश्न

1) लिंग भेद से आप क्या समझते हैं।
2) विकास में लिंग का क्या महत्व है ?
3) मोजर ने महिलाओं के विकास की कल्पना किस आधार पर की?
4) भारत में महिलाओं की स्थिति सुधारने के लिए किन प्रयासों पर विशेष बल दिया।
5) लिंग भेद (पक्षपात) समाप्त करने हेतु आप अपने कुछ सुझाव दीजिए।
6) आधुनिकीकरण की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।
7) प्रौद्योगिक विकास तथा आधुनिकीकरण में क्या सम्बन्ध है?
8) आधुनिकीकरण की दो मुख्य विशेषताएँ लिखिये।
9) नगरीकरण की प्रक्रिया किस प्रकार आधुनिकीकरण में वृद्धि करती है।
10) सामाजिक मनोवृत्तियों एवं मूल्यों का आधुनिकीकरण का क्या प्रभाव पड़ता है?
11) आधुनिकीकरण के मुख्य कारकों का वर्णन कीजिए।
12) भारतीय समाज पर आधुनिकीकरण के प्रभाव की विवेचना कीजिए।

13) सामाजिक जीवन में नगरीकरण की क्या भूमिका है?

14) नगरीकरण की प्रक्रिया के फलस्वरूप नगरों की ज्वलंत समस्याएँ क्या है ?

15) जनसंख्या विस्फोट के क्या कारण है ?

इकाई-11 सामाजिक शोषण, बाल-श्रम, सामाजिक एवं घरेलू हिंसा, कार्यस्थलीय शोषण, सामाजिक समस्याओं के विभिन्न समाधान (Social Exploitation, Child Labor, Social and Domestic Violence, Workplace Exploitation, Various solutions of Social Problems)

इकाई संरचना

11.1 प्रस्तावना

11.2 उद्देश्य

11.3 सामाजिक शोषण

11.4 बाल श्रम

11.4.1 बाल श्रम के कारण

11.4.2 बाल श्रम का प्रभाव

11.4.3 बाल श्रमिकों की संख्या में कमी लाने हेतु सुझाव

11.5 सामाजिक घरेलू हिंसा

11.5.1 सामाजिक हिंसा

11.5.2 घरेलू हिंसा

11.6 कार्य स्थल पर शोषण

11.7 सामाजिक समस्याओं के विभिन्न समाधान

11.8 सारांश

11.9 शब्दावली

11.10 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

11.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

11.12 निबन्धात्मक प्रश्न

11.1 प्रस्तावना

समाज में जहाँ एक ओर नियंत्रण के अनेक साधन जैसे- कानून, प्रथा, परम्परा, तथा नैतिक नियमों के द्वारा व्यक्तिगत तथा सामूहिक जीवन को संगठित रखने का प्रत्यत्न किया जाता है वहीं दूसरी ओर अनेक व्यक्ति समाज के सामने अनेक गम्भीर समस्यायें उत्पन्न करते रहते हैं।

मनुष्य एक जिज्ञासु प्राणी है उसके समक्ष अनेक समस्यायें आती रहती हैं और वह उनका प्रभावपूर्ण समाधान खोजने की कोशिश करता रहता है समस्याओं का प्रभावपूर्ण समाधान खोजने की वैज्ञानिक वधि के रूप

में हम सर्वप्रथम एक विशेष घटना या प्रकृति को समझने का प्रयत्न करते हैं। तत्पश्चात् उस घटना का अनेक दशाओं से सह सम्बन्ध स्थापित करके किसी निष्कर्ष तक पहुॅचने की कोशिश करते हैं कि कोई विशेष घटना किन कारणों से घटित हुई है और फिर हम उस समस्या के समाधान का प्रयास करते हैं । समस्याओं की प्राथमिकता समय के अनुसार बदलती रहती है जैसे कुछ दशकों पहले हमारे यहाँ पर्दा प्रथा, बाल विवाह की प्रमुख सामाजिक समस्या थी लेकिन आज भ्रष्ट्राचार, बेरोजगारी, निर्धनता आदि प्रमुख सामाजिक समस्या हैं और इन समस्याओं से निपटने के लिए व इनके समाधान के लिए विभिन्न सरकारी व गैर सरकारी संस्थाएँ निरन्तर कार्य कर रही हैं और जब हम इन समस्याओं का समाधान करते हैं तो कुछ समय बाद फिर से नई समस्यायें जन्म लेती है और ये क्रम चलता रहता है।

11.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप –

- सामाजिक शोषण के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करेंगे।
- बाल श्रम के कारण एवं निवारण के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करेंगे।
- सामाजिक एवं घरेलू हिंसा के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।
- विभिन्न कार्यस्थलों पर हाने वाले शोषण के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- समाज में व्याप्त विभिन्न सामाजिक समस्याओं के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

11.3 सामाजिक शोषण

आर्थिक विकास होने से हमेशा ऐसा नही होता है कि समाज का प्रत्येक व्यक्ति आर्थिक रूप से सम्पन्न एवं सुखी हो जाए। कुछ लोग आर्थिक रूप से सम्पन्न हो जाते हैं तो कुछ लोगों की आर्थिक स्थिति में नाममात्र का सुधार होता है, फलस्वरूप समाज दो वर्गो में बँट जाता है, आर्थिक रूप से सबल वर्ग और आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग। पहला वर्ग दूसरे वर्ग पर शोषण करना प्रारम्भ कर देता है। चाहे कृषि हो, उद्योग स्वास्थ्य हो या शिक्षा। आर्थिक रूप से सम्पन्न व्यक्ति आर्थिक रूप से कमजोर व्यक्ति पर अनावश्यक रूप से दबाव डालकर उनसे मनचाहा काम कराकर उनका शोषण करते है एवं अपनी सम्पन्नता को और मजबूत करते है और इस कारण समाज में आर्थिक विषमता उत्पन्न होती है ।

सामाजिक शोषण की प्रक्रिया प्राचीन काल से ही चली आ रही है कभी उच्च वर्ग द्वारा निम्न जाति का शोषण कभी पुरूषों द्वारा महिलाओं का शोषण या मालिकों द्वारा श्रमिकों का शोषण हमें देखने को मिलता है। हमारे समाज में प्रायः सामाजिक शोषण निम्न रुपों में देखने को मिलता है।

- **श्रम का शोषण-** कई बार मिलों कारखानों में काम करने वाले व्यक्यिों के कार्य के घण्टे निश्चित नहीं होते हैं। किन परिस्थितियों में काम करना है यह भी निश्चित नही होता है कई बार महिलाओं की मजदूरी भी पुरूषों से कम होती है जबकि वो बराबर उन्हीं के जितना काम करती है। भारतीय श्रम कानून के अर्न्तगत किसी श्रमिक से यदि आठ घण्टे से ज्यादा काम लिया जाता है और मजदूरी नही दी जाती है तो वह शोषण है। काम के ज्यादा घण्टे, कम मजदूरी, कार्य के बीच में विश्राम न देना, कठिन परिस्थितियों में कार्य करवाना आदि के द्वारा उनके श्रम का शोषण किया जाता है।
- **यौन शोषण-** यौन शोषण का शिकार सबसे ज्यादा महिलाऐं होती है। मजबूरी, पेट की आग, अज्ञानता, लाचारी, गरीबी आदि का फायदा इनके नियोक्ताओं द्वारा पूर्ण रूप से उठाया जाता है। बहुत जल्दी सफलता की सीढ़ी चढ़ना, बहुत जल्दी ज्यादा पैसे कमाने की लालसा के कारण अधिकांश महिलाएँ यौन शोषण का शिकार बनती हैं।
- **जातिगत शोषण-** उच्च जाति द्वारा निम्न जाति वर्ग का शोषण प्राचीन समय से चला आ रहा है। प्रत्येक जाति अपनी जाति के हितों की चिन्ता करती है और उन हितों की पूर्ति के लिए दूसरे जाति के हितों की बलि देने से भी नही हिचकिचाती है।
- **बाल श्रम का शोषण-** माचिस उद्योग, चूड़ी उद्योग, कालीन उद्योग आतिशबाजी उद्योग आदि में अधिकांश बाल श्रमिक काम करते हैं। जहाँ इनसे काम ज्यादा लिया जाता है और पैसा बहुत कम दिया जाता है कानून में लचीलापन सरकारी प्रयासों में कमी के चलते बाल श्रम का सर्वाधिक शोषण होता रहा है।
- **महिलाओं का शोषण-** जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं ने या तो आर्थिक मजबूरी के कारण या अपने पैर पर खड़े होने और स्वावलंबी बनने की इच्छा के कारण रोजगार में आना शुरु किया। सभ्यता के विकास के साथ-साथ मानव विकृत्तियाँ भी बढ़ी और उन विकृत्तियों का सबसे दुर्भाग्यपूर्ण शिकार होती रही महिलाएँ। पुरूषों के समान काम करने पर पुरूषों से कम पारिश्रमिक देकर उनका सदियों से शोषण होता रहा है। घर हो या बाहर सबसे जयादा शोषण की शिकार महिलाएँ ही होती हैं। घर में भी महिलाओं द्वारा महिलाओं पर किया जाने वाला अत्याचार कोई नई बात नहीं है। अज्ञानता, संवेगात्मक भावुकता, परिवार की बदनामी का डर आदि के कारण ये शोषण का शिकार होती रही हैं। अपहरण कर लड़कियों का शोषण किसी स्थान पर सामूहिक रूप से बलात्कार की खबरें आये दिन सुनने पढ़ने को मिलती है और फिर पुलिस द्वारा ज्यादा खोजबीन होने पर उसे किसी स्थान पर ले जाकर छोड़ दिया जाता है और उसकी आगे की पूरी जिन्दगी अन्धकार मय हो जाती है और वह समाज से घृणा करने लगती है।
- **जेल में कैदियों का शोषण-** कुछ विषम सामाजिक परिस्थितियाँ व्यक्ति को अपराधी बना देती हैं और वे अपराध करने को मजबूर हो जाते हैं। और सजा मिलने पर जेल में इनकी जिन्दगी और बदतर हो जाती है

जहाँ इनका शारीरिक, मानसिक शोषण और यौन शोषण भी होता है। देश की पहली महिला आई0पी0,स0 किरण बेदी ने तिहाड़ जेल में रह रहे कैदियों की दुर्दशा सुधारने के लिए ठोस कदम उठाये।

- **बालकों का शोषण-** छोटे बच्चों को बहला फुसला उनको उठा ले जाते हैं और उन्हें डरा धमका कार अपाहिज बना कर शिक्षा या पौकेट मारी जैसे कार्य सिखाये जाते हैं और उन्हे इससे जो भी पैसा मिलता है उसे गैंग के मुखिया को सौंप देते हैं वे जब निकल भागने की कोशिश करते हैं तो पकड़े जाने पर इन्हे घोर यातनाएँ दी जाती हैं और वापस इनसे फिर वही कार्य करवाते हैं यहा इनका शारीरिक और मानसिक दोनों ही तरह का शोषण होता है।

11.4 बाल श्रम

उद्योग कारखाने होटल, ढॉवे एवं घरों में काम करने वाले 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों को बाल श्रमिक कहा जाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ के अनुसार 18 वर्ष से कम आयु का श्रमिक बाल श्रमिक है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के अनुसार 15 वर्ष या उससे कम आयु का श्रमिक बाल श्रमिक है। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 1966 में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय इकरारनामा सम्मेलन में आहान किया कि प्रत्येक देश एक ऐसी आयु सीमा निर्धारित करें जिससे कम आयु के श्रमिकों की नियुक्ति प्रतिबंधित व दण्डनीय हो अमेरिकी कानून के मुताबिक 12 वर्ष से कम आयु तथा इग्लैण्ड व अन्य युरोपीय देशों में 13 वर्ष से कम आयु के श्रमिकों को बाल श्रमिकों की श्रेणी में रखा है।

भारतीय संविधान के अनुसार 9 से 14 वर्ष के बीच के बालक बालिका जो वैतनिक श्रम करते हैं। बाल श्रमिक के अन्तर्गत आते हैं। पूंजीवादी वर्ग द्वारा मुनाफा अधिक कमाने के उद्देश्य से बच्चों का सामाजिक व अमानवीय शोषण किया गया तब बाल श्रम का उदभव हुआ। आज भारत में बाल श्रमिकों की संख्या घटने के बजाय, बढ़ रही है। इन श्रमिकों से ज्यादा से ज्यादा काम लिया जाता है और मजदूरी बहुत कम दी जाती है। भारत में सकल राष्ट्रीय उत्पादन में श्रमिकों का लगभग 20 प्रतिशत योगदान है जिससे लगभग 7 प्रतिशत योगदान बाल श्रमिकों का है विश्व में बाल श्रमिकों की संख्या सबसे ज्यादा भारत में है। मानव श्रम का सही मूल्य न देकर अधिक काम लेने की पूँजीवादी प्रवृत्ति की देन है। बाल श्रमिक की इस प्रवृति को चार सिद्धान्तों में बॉटा गया है।

- **नव पुरातनवादी सिद्धान्त-** इस सिद्धान्त के अन्तर्गत बच्चों को उपयोग व निवेश की सामग्री मानकर उनके श्रम का उपयोग आय बढ़ाने हेतु किया जाता है।
- **सामाजीकरण का सिद्धान्त-** इसके अन्तर्गत बाल श्रम का उपयोग पारिवारिक प्रक्रिया के अन्तर्गत किया जाता है कृषि कार्य घरेलू उद्योग आदि इसके अन्तर्गत आते हैं।
- मार्क्सवादी सिद्धान्त- इस सिद्धान्त के अनुसार बाल श्रम पूँजीवादी व्यवस्था का अभिन्न अंग है।नई तकनीक सस्ते व अकुशल मजदूरों की माँग करती है और बेरोजगारी के कारण बच्चे भी औद्योगिक श्रमिकों के संचित दल का हिस्सा बन जाते हैं।

- **11.4.1 बाल श्रम के कारण-**

 भारत में बाल श्रम के निम्न कारण हैं।

- निर्धनता- निर्धनता बाल श्रम का सबसे मुख्य कारण है। दो समय की रोटी का जुगाड़ करने के लिए अपना बचपन बेचना पड़ता है। फलतः ये विभिन्न स्थानों पर काम करके इन्हें अपना व परिवार का पेट पालने के लिए मजबूर होना पड़ता है।
- जनसंख्या की अधिकता- भारत में लगातार हो रहे जनसंख्या वृद्धि बाल श्रम के लिए उत्तरदायी है। कृषि भूमि का अभाव होना और जनसंख्या में लगातार वृद्धि होने से आवश्यकताओं का पूरा करना कठिन हो रहा है और ऐसी स्थिति में अपनी जरूरी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बच्चों को भी काम पर लगना पड़ता है।
- सस्ता श्रम- श्रम का सस्ता साधन होने के कारण अधिकांश लोग बाल श्रमिकों को रखना पसन्द करते हैं क्योंकि इन्हें वेतन कम देना पड़ता है साथ ही इन पर हुक्म चलाना आसान होता है। इनका अपना कोई संगठन नहीं होता है और न ही ये शोषण के खिलाफ आवाज उठा पाते हैं।
- शिक्षा का अभाव- जब बच्चा किन्ही कारणों से (सामाजिक आर्थिक आदि) आशिक्षित रह जाता है तो स्वाभाविक है कि उसे अपना पेट भरने के लिए कुछ न कुछ काम तो करना ही है। ज्यादातर बाल श्रमिक होटलों, ढावों, आतिशबाजी, मचिस उद्योग कांच उद्योग, पत्थर की खानों में तथा गलीचा उद्योग आदि में काम करते हैं।
- सख्त कानून न होना- सख्त कानून न होना भी बाल श्रमिकों की वृद्धि का कारण है यदि बाल श्रमिक रखने वालों के प्रति कड़ी कार्यवाही की जाए और सख्ती से इन कानूनों का पालन किया जाए तो निश्चित ही इनकी संख्या में कमी आयेगी।

11.4.2 बाल श्रम का प्रभाव-

हमारे देश में बाल श्रमिकों की संख्या सर्वाधिक है निश्चित रूप से इनका प्रभाव निम्न रुपों में पड़ता है।

- विदेशी मुद्रा की प्राप्ति में सहायक- बाल श्रमिक श्रम का सस्ता साधन है। इनकी संख्या अधिक होने के कारण देश को करोड़ों रुपये की विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है।
- अपराधों में कमी- हमारे देश में बड़ी संख्या में बाल श्रमिक कार्य कर रहे हैं यदि ये कुछ काम नही करेगें तो इनमें आपराधिक प्रवृत्तियाँ बढ़ेगी। काम इन्हें अपराध की ओर जाने से रोकता है।
- शारीरिक एवं मानिसिक विकास में बाधा छोटी सी उम्र में ज्यादा काम के बोझ से इनका न तो शारीरिक विकास ठीक ढ़ंग से हो पाता है और न ही मानसिक विकास शिक्षा व खेलने की उम्र में ये अपनी दो वक्त की रोटी के लिए पूरे दिन काम पर लगे रहते हैं।

- स्वास्थ्य पर प्रभाव- बाल श्रमिकों को मशीनों के भयंकर शोर ज्यादा तापमान या एक स्थिति खड़े रहना, या रसायनों के साथ काम करने पर इनके फेफडें आंखों पर ज्यादा प्रभाव पड़ता है साथ ही ये बहरापन असीमित कमरदर्द, जोड़ों का दर्द आदि कई शिकार हो जाते हैं और इनका स्वास्थ्य गिरता चला जाता है। यद्यपि बाल श्रम का प्रभाव बालक एवं समाज दोनों के लिए हानिकारक है बाल श्रम से भले ही देश को विदेशी मुद्रा हो रही हो लेकिन इनका भविष्य अंधकारमय है।

11.4.3 बाल श्रमिकों की संख्या में कमी लाने हेतु सुझाव -

- जनसंख्या पर नियंन्त्रण- बाल श्रमिकों की संख्या में कमी लाने के लिए हमें जनसंख्या नियंत्रण के उपायों पर ध्यान देना होगा।
- गरीबी- गरीबी कम करके इनकी संख्या में कभी लाई जा सकती है भारत की लगभग 32 प्रतिशत जनसंख्या आज भी गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रही है इनकी गरीबी इन्हें बाल श्रमिक बनने पर मजबूर कर देती है।
- शिक्षा का प्रसार करके- देश में शिक्षा का जितना प्रचार प्रसार होगा, बाल श्रमिकों की संख्या में उतनी ही कमी आयेगी । शिक्षा द्वारा इन्हें अपने अधिकारों का ज्ञान होगा और कोई भी इनका शोषण नहीं कर पायेगा।
- कठोर कानून व्यवस्था- बाल श्रमिक रखने वाले लोगों के प्रति कड़ी कार्यवाही की जानी चाहिए। ताकि ये लोग बाल श्रमिक न रखें।

बच्चों इस शोषण से बचाने के लिए एक समन्वित नीति बनाने की आवश्यकता है। सतत विकास, आधुनिक क्षेत्रों में तेजी से विस्तार, अनिवार्य स्कूली शिक्षा, गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों की संख्या में लगातार कमी बाल श्रम उन्मूलन हेतु आवश्यक है। बाल श्रम का पूर्ण उन्मूलन का लक्ष्य तो अधिकांश देशों की पहुँच से बाहर है किन्तु इसमें सभी के लिए मानवाधिकार आयोग व गैर सरकारी संगठनों के बीच एक साझेदारी बन सकती है। इस दिशा में गैर सरकारी संगठनों का कार्य सराहनीय है। जब तक समाज का हर वर्ग मन से बाल श्रमिकों के विरुद्ध नहीं होगा, बाल श्रमिकों की मुक्ति असम्भव है।

11.5 सामाजिक / घरेलू हिंसा

मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि मानव हिंसा की भावना को जन्म से ही अर्जित करता है मां की गोद में जब नवजात शिशु को भूख सताती है तो वह मॉ की ओर लपकता है मॉ की अनिच्छा पर पर वह उस पर वार करता है। हाथ पैर पटकता है यहीं से क्रोध और फिर हिंसा पनपती है जिस पर यह हिंसा उतारी जाती है वह कभी न कभी दहशत में इसका शिकार होता है। और दूसरी ओर साधु प्रवृत्ति भी जन्म हम समाज में व्याप्त कुछ ऐसी ही सामाजिक और घरेलू हिंसा के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।

11.5.1 सामाजिक हिंसा-

सामाजिक रूप से हिंसा की शुरूआत उस समय हुई जब से मनुष्य के मन में तेरे मेरे की भावना ने घर किया बात अगर सुलझ गई तो शान्ति, वरना इसी से घर मोहल्ले, राज्य, देश और फिर विश्व स्तर पर हिंसा पनप उठती है। पुरूष प्रधान समाज में क्योंकि मूलतः पुरूष को ही हिंसा का कारण माना जाता है क्योंकि वह सबसे ताकतवर है इसलिये अपने से कमजोर को दबाने में नहीं चूकता। परिवार में जब पति की हिंसा पत्नी पर हावी होती है तो पूरे परिवार में भय और दहशत पैदा होती है कभी कभी ये स्थिति इसके विपरीत भी होती है। जहॉ पत्नी हावी होती है तब पति को सिर्फ अपनी इज्जत परिस्थितियों और गृहस्थी चलाने की गरज से पत्नी की तुनकमिजाजी सहनी पड़ती है। अन्ततः स्थिति ऐसी भी आती है जब सब्र का बॉध टूट जाता है और बात हिंसा पर आ जाती है तब व्यक्ति में तनाव, कुण्ठा हिंसा व दहशत जनम लेती है।

ज्वैलरी शॉप पर दिन दहाड़े लूटपाट, लड़की के साथ छेड़छाड़ भीषण नरसंहार, बम विस्फोट, लड़की पर कुछ लड़कों द्वारा तेजाब फेकने जैसे घटनाएं हमें प्रतिदिन अखबारों में पढ़ने को मिलती है।ये खबरें आपकों पढ़ने में भले ही अच्छी न लगें लेकिन समाज की इस हकीकत से हम सभी वाकिफ हैं, जो हिंसा भय दहशत और कुंठा, तनाव, हिंसा आदि को जन्म दे रही हैं। सामाजिक रूप से यदि हिंसा को देखा जाए ज्यादा हिंसा धर्म और जाति के प्रति हुई है।

(i) **जातिगत हिंसा-** भारत में विभिन्न धर्म और जाति के रहते हैं समस्त जातियों में लगभग 15 प्रतिशत जातियाँ पिछड़ी जातियों के लोग रहते हैं 2008 के आंकड़ो के मुताबिक जातिगत हिंसा के 10,000 से भी ज्यादा मामले दर्ज हुए हैं । भारत में अभी भी उच्च जातियों निम्न जातियों पर हिंसक होती हैं और टकराव होते रहते हैं।

(ii) भ्रूण हत्या- यह एक सामाजिक हिंसा भी है और घरेलू हिंसा भी कयोंकि आज समाज में बड़े पैमाने पर इस तरह की घटना हो रही है और घर के भीतर महिलाओं को भूण हत्या के लिए मजबूर किया जा रहा है इसलिए यह घरेलू हिंसा भी है अल्ट्रासाण्ड की सुविधा, कानून की सख्ती पालन न होना है इस हिंसा को बढ़ावा दे रहा है।

(iii) **धार्मिक हिंसा-** भारत विभिन्न घर्मो वाला देश है। यहॉ हिन्दू मुसिलम सिक्ख, इसाई चार धर्मों के लोग निवास करते हैं जिसमें हिन्दुओं के बाद सबसे ज्यादा संख्या मुसिलम निवास करते है और सबसे ज्यादा दंगें हिन्दू और मुस्लिम निवास करते है और सबसे ज्यादा दंगे हिन्दू और मुस्लिमों के बीच हुए है आंकड़ो के अनुसार आजादी के बाद 1947 के बाद से अब तक लगभग 8000 धार्मिक दंगें चुके है इन दंगों में सैकड़ों लोग बेघर हो जाते हैं धन और जन दोनों की ही हानि होती है। आतंकवाद अपहरण सामूहि बलात्कार ये सभी सामाजिक हिंसा के अनतर्गत आत हैं। हमारे यहाँ आये दिन अखबार इस तरह की हिंसक घटनाओं से भरे पढ़े होते हैं बिहार और झारखण्ड में बारबार हो रही भीषण नरसंहार, जम्मू कश्मीर में आतंकवाद दिल्ली में बलात्कार से सम्बन्धित हिंसक घटनाएं आ, दिन घर रही है।

(iv) **हथियार और हिंसा**- विश्व आंकड़ों के अनुसार हथियारों के मामले में अग्रणी अमेरिका में हिंसा की स्थिति सबसे विकट है यहाँ के नेशनल इंन्स्टीटयूट ऑफ हैल्थ के वैजानिकों ने हथियारों को हिंसा का जीवाणु माना है वैज्ञानिकों ने हथियारों और हिंसा के सम्बन्ध में शोध कार्य किये और उनका मानना है कि यदि समाज में हथियारों की संख्या पर काबू पा लिया जाए तो हिंसा की वारदातों में गिरावट आ जायेगी। हमारे देश में स्थिति यह है कि हथियार केवल अपराधियों के पास ही नही आम नागरिकों के पास भी है। घरों में ही तैयार कट्टे छर्रो से लेकर, एके 47 तक उपलब्ध है । कुछ लोग शौकिया भी हथियार रखते हैं हथियारों के प्रति यह लालसा, शौक और जखीरा समाज में हिंसा को बढ़ायेगा, इसे रोकने के लिए सरकारी प्रयास ही सब कुद नहीं है हम सबको इस पर काबू करने का प्रयास करना होगा।

(v) समाज को हिंसा सौंपते धारावाहिक व फिल्म- बेहद डरावनी दहशत से भरी, वीभत्स चेहरे, रक्त रंजित हाथ अजीबो गरीब सन्नाटा दहशत से भरी फिल्मों व धारावहिक तेजी से लोकप्रिय हो रहे है। सर्वेक्षण के मुताबिक इस तरह के धारावाहिक और फिल्में हमारी मानसिकता को विकृत करते हैं। खाशकर बच्चों और युवाओं को बर्बाद करते हैं । निर्माता निर्देशक तो अपनी कमाई कर जाते हैं लेकिन कल्पना से युक्त दहशत भरी ये रचनाएं समाज में भय और हिंसा की सौगात दे जाते हैं और युवा अक्सर इन धारावहिकों और फिल्मों से प्रेरित होकर बड़ी बड़ी हिंसक वारदातों को भी अंजाम दे जाते हैं।

11.5.1 घरेलू हिंसा

घरेलू हिंसा की जड़ें हमारे समाज तथा परिवार में गहराई तक जम गई हैं। इसे व्यवस्थागत समर्थन भी मिलता है। घरेलू हिंसा के खिलाफ यदि कोई महिला आवाज मुखर करती है तो इसका तात्पर्य होता है अपने समाज और परिवार में आमूलचूल परिवर्तन की बात करना। प्राय: देखा जा रहा है कि घरेलू हिंसा के मामले दिनों-दिन बढ़ते जा रहे हैं। परिवार तथा समाज के संबंधों में व्याप्त ईर्ष्या, द्वेष, अहंकार, अपमान तथा विद्रोह घरेलू हिंसा के मुख्य कारण हैं। परिवार में हिंसा की शिकार सिर्फ महिलाएं ही नहीं बल्कि वृद्ध और बच्चे भी बन जाते हैं। प्रकृति ने महिला और पुरूष की शारीरिक संरचनाएं जिस तरह की हैं उनमें महिला हमेशा नाजुक और कमजोर रही है, वहीं हमारे देश में यह माना जाता रहा है कि पति को पत्नी पर हाथ उठाने का अधिकार शादी के बाद ही मिल जाता है। हालांकिमहिलाओं का संरक्षण अधिनियम (पीडब्ल्यूडीवीए), 2005 से महिलाओं को घरेलू हिंसा से संरक्षण व सहायता प्राप्त हुई है यह अधिनियम घरेलू हिंसा से पीड़ित महिलाओं को संरक्षण देने और उनकी सहायता करने के लिए बनाया गया है। यह कानून प्रकृति में सिविल है और घरेलू हिंसा जिसमें जाने-अनजाने में किए गए वे सभी कृत्य जिनसे महिलाओं को शारीरिक, सैक्सुअल् या मानसिक स्वास्थ्य को चोट पहुँचती है और उसमें हिंसा के विशिष्ट रूप जैसे शारीरिक, सैक्सुअल्, मौखिक, भावनात्मक और आर्थिक दुरूपयोग किया जाना शामिल है, को परिभाषित करता है। पीडब्ल्यूडीवीए सभी महिलाओं को घर के निजि दायरे में हिंसा से मुक्त जीने

के अधिकार को मान्यता देता है। इस कानून का उद्देश्य हिंसा को रोकना और प्रतिवादी के साथ महिला के रिश्ते के बावजूद ऐसी परिस्थितियों में तुरन्त एवं आपातकालीन सहायता प्रदान करना है।

घरेलू हिंसा की परिभाषा

पुलिस - महिला, वृद्ध अथवा बच्चों के साथ होने वाली किसी भी तरह की हिंसा अपराध की श्रेणी में आती है। महिलाओं के प्रति घरेलू हिंसा के अधिकांश मामलों में दहेज प्रताड़ना तथा अकारण मारपीट प्रमुख हैं।

राज्य महिला आयोग - कोई भी महिला यदि परिवार के पुरूष द्वारा की गई मारपीट अथवा अन्य प्रताड्ना से त्रस्त है तो वह घरेलू हिंसा की शिकार कहलाएगी। घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम 2005 उसे घरेलू हिंसा के विरूद्ध संरक्षण और सहायता का अधिकार प्रदान करता है।

आधारशिला (एन.जी.ओ.) - परिवार में महिला तथा उसके अलावा किसी भी व्यक्ति के साथ मारपीट, धमकी देना तथा उत्पीड़न घरेलू हिंसा की श्रेणी में आते हैं। इसके अलावा लैंगिक हिंसा, मौखिक और भावनात्मक हिंसा तथा आर्थिक हिंसा भी घरेलू हिंसा संरक्षण अधिनियम 2005 के तहत अपराध की श्रेणी में आते हैं। (पुलिस, राज्य महिला आयोग तथा एन.जी.ओ. द्वारा घरेलू हिंसा की जो परिभाषाएं दी गई हैं उनका तात्पर्य लगभग एक जैसा ही है हालांकि भाषा परिवर्तित है।)

घरेलू हिंसा- विश्व की स्थिति

महिलाओं को अधिकारों की सुरक्षा को अंतर्राष्ट्रीय महिला दशक (1975-85) के दौरान एक पृथक पहचान मिली थी। सन् 1979 में संयुक्त राष्ट्र संघ में इसे अंतर्राष्ट्रीय कानून का रूप दिया गया था। विश्व के अधिकांश देशों में पुरूष प्रधान समाज है। पुरूष प्रधान समाज में सत्ता पुरूषों के हाथ में रहने के कारण सदैव ही पुरूषों ने महिलाओं को दोयम दर्जे का स्थान दिया है। यही कारण है कि पुरूष प्रधान समाज में महिलाओं के प्रति अपराध, कम महत्व देने तथा उनका शोषण करने की भावना बलवती रही है।

शारीरिक हिंसा :

इस हिंसा के बारे में सभी बहुत भली भांति जानते हैं । जैसे- मारपीट करना, थप्पड़ मारना, ठोकर मारना, दांत काटना, मुक्का मारना, धक्का देना, लात मारना या किसी अन्य तरीके से महिला को शारीरिक चोट पहुंचाना आदि शारीरिक हिंसा के उदाहरण हैं।

मानसिक हिंसा :

1. बहुत से लोग महिलाओं को मारते पीटते नहीं लेकिन वे उसे इतनी ज्यादा मानसिक पीड़ा देते हैं कि वे अपने हालातों पर मजबूर हो जाती है। मानसिक हिंसा में गाली गलौच करना, कलंक लगाना, बुराई

करना, मजाक उड़ाना, दहेज आदि के लिए अपमानित करना, बच्चा या बेटा न होने पर ताना देना, शिक्षा या नौकरी में अवरोध उत्पन्न करना, बाहर जाने या किसी व्यक्ति से मिलने के लिए रोकना, अपनी पसंद के व्यक्ति से विवाह करने या नहीं करने पर दबाब डालना, आत्महत्या की धमकी देना, चरित्र और आचरण पर दोषारोपण, नौकरी छोड़ने के लिये दबाव डालना आदि सम्मिलित हैं।

(2) लैंगिक हिंसा

1. बलात्कार
2. अश्लील साहित्य या कोई अन्य अश्लील तस्वीरों या को देखने के लिए विवश करना
3. दुर्व्यवहार करने, अपमानित करने, अपमानित या नीचा दिखाने की लैंगिक प्रवृत्ति का कोई अन्य कार्य अथवा जो प्रतिष्ठा का उल्लंघन करता हो या कोई अन्य अस्वीकार्य लैंगिक प्रक्रति का हो।

आर्थिक हिंसा :

ये अक्सर वे ही पुरुष करते है जो या तो ठीक से कमा नहीं पाते या उन्हें नौकरी करने में कोई रूचि नहीं होती। ऐसे पुरुष अपने जीवनयापन की वस्तुएं भी महिला के वेतन से खरीदते हैं। घर में खाने, कपडे, दवाई आदि का खर्च नहीं देना या अगर घर में है तो उनका उपयोग नहीं करने देना, घर का किराया नहीं देना, घर से जबरदस्ती महिला को निकाल देना, नौकरी कर रही महिला का वेतन ले लेना, नौकरी नहीं करने देना, बिलों का भुगतान नहीं करना, घर के किसी भी मौद्रिक कार्य में अपना सहयोग नहीं देना, महिला का वेतन छीनकर शराब आदि पीना आर्थिक हिंसा के उदाहरण है।

(4) आर्थिक हिंसा

1. बच्चों के अनुरक्षण के लिये धन उपलब्ध न कराना
2. बच्चों के लिए खाना, कपड़े और दवाइयॉं उपलब्ध न कराना
3. रोजगार चलाने से रोकना अथवा उसमें विघ्न डालना
4. रोजगार करने के अनुज्ञात न करना
5. वेतन पारिश्रमिक इत्यादि से आय को ले लेना
6. वेतन पारिश्रमिक उपभोग करने का अनुज्ञात न करना
7. घर से निकलने को विवश करना

भारत में घरेलू हिंसा

दिल्ली में स्थित एक सामाजिक संस्था द्वारा कराये गये अध्ययन के अनुसार भारत में लगभग पांच करोड़ महिलाओं को अपने घर में ही हिंसा का सामना करना पड़ता है। इनमें से मात्र 0.1 प्रतिशत ही हिंसा के

खिलाफ रिपोर्ट लिखाने आगे आती हैं। पालन-पोषण में पितृसत्तात्मक अधिक महत्व रखती है इसलिए लड़की को कमजोर तथा लड़के को साहसी माना जाता है। लड़की के व्यक्तित्व को जीवन की आरम्भि अवस्थाओं में ही कुचल दिया जाता है। घरेलू हिंसा के प्रमुख कारण निम्न माने जाते हैं-

I. समतावादी शिक्षा व्यवस्था का अभाव।
II. सामाजिक कुप्रथाएँ
III. अशिक्षा
IV. पुरूष प्रधान समाज
V. महिला के चरित्र पर संदेह करना
VI. शराब की लत
VII. इलेक्ट्रानिक मीडिया का दुष्प्रभाव
VIII. महिला को स्वावलम्बी बनने से रोकना।

घरेलू हिंसा का दुष्प्रभाव

महिलाओं तथा बच्चों पर घरेलू हिंसा के शारीरिक, मानसिक तथा भावनात्मक दुष्प्रभाव पड़ते हैं। इसके कारण महिलाओं के काम तथा निर्णय लेने की क्षमता पर प्रभाव पड़ता है। परिवार में आपसी रिश्तों और आस-पड़ौस के साथ रिश्तों व बच्चों पर भी इस हिंसा का सीधा दुष्प्रभाव देखा जा सकता है। घरेलू हिंसा के कारण दहेज मृत्यु, हत्या और आत्महत्या बढ़ी हैं। वेश्यावृत्ति की प्रवृत्ति भी इसी कारण बढ़ी है। महिला की सार्वजनिक भागीदारी में बाधा होती है। महिलाओं का कार्य क्षमता घटती है, साथ ही वह डरी-डरी भी रहती है। परिणाम स्वरूप प्रताड़ित महिला मानसिक रोगी बन जाती है जो कभी-कभी पागलपन की हद तक पहुंच जाती है। पीडित महिला की घर में द्वितीय श्रेणी की स्थिति स्थापित हो जाती है।(http://www.mediaforrights.org/infopack/hindi-infopack/551)

2015-16 में कराए गए राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS 4) में इस बात का उल्लेख किया गया है कि भारत में 15-49 आयु वर्ग की 30 फीसदी महिलाओं को 15 साल की आयु से ही शारीरिक हिंसा का सामना करना पड़ा है। कुल मिलाकर NFHS 4 में कहा गया है कि उसी आयु वर्ग की 6 फीसदी महिलाओं को उनके जीवनकाल में कम से कम एक बार यौन हिंसा का सामना करना पड़ा है। आमतौर पर बदनामी के डर से काफी बड़ी संख्या में ऐसे मामले दर्ज ही नहीं हो पाते, खासतौर पर तब जब पीड़िता को अपने पति, परिवार के सदस्य या किसी अन्य परिचित के खिलाफ शिकायत दर्ज करानी हो।

8. घरेलू हिंसा से बचाव

मनोवैज्ञानिक और समाज सुधारक अनुजा कपूर कहती हैं, ''हमारे समाज की सब से बड़ी समस्या यही है कि महिलाओं को लगता ही नहीं कि उन के साथ घरेलू हिंसा हो रही है। समाज में यही धारणा व्याप्त है कि पति हमेशा सही होता है, वह कुछ भी कर सकता है। ''समाज को बदलने के लिए हमें स्वयं को बदलना होगा। अब पिता की संपत्ति में बेटी को बराबर की हिस्सेदारी मिलती है। वह अलग हो सकती

है। शोषित होने से इनकार कर सकती है। बच्चे मां-बाप को रोल मॉडल मानते हैं। पर जब वे देखते हैं कि कोई व्यक्ति आपका हाथ मोड़ रहा है, कपड़े फाड़ रहा है, धक्के दे रहा है या फिर गालियां बक रहा है। फिर भी महिला उसे सही कहती हैं, क्योंकि वह पति है, यही हम बच्चों को अप्रत्यक्ष रूप से सिखा रहे होते हैं। यह वूमन ऐंपावरमैंट नहीं है। ''महिला अन्याय का विरोध करेंगी तो कानूनों की कमी नहीं। महिला के हित में सरकार ने कानून बनाए हैं। ऐसे एनजीओ की भी कमी नहीं जो महिला को सहयोग देते हैं।''

यदि घरेलू हिंसा से भारत की लड़कियों को बचाना है, तो जरूरी है कि घर में बच्चों को शुरू से ही सही संस्कार दिए जाएं। उन्हें बताया जाए कि लड़के लड़की में कोई फर्क नहीं और ऐसा कतई सही नहीं है कि भाई अपनी बहनों के साथ मारपीट करें या उन्हें दबा कर रखें।जब तक वे बचपन से महिलाओं का सम्मान करना नहीं सीखेंगे, आगे चल कर भी बीवी पर हाथ उठाने की उन की आदत नहीं जाएगी। लड़कों को बचपन से जो यह सिखाया जाता है कि "लड़के रोते नहीं हैं" उस की जगह यह सिखाया जाए कि लड़के रुलाते नहीं हैं।

यद्यपि घरेलू हिंसा का कोई कारण बता पाना अत्यन्त कठिन कार्य है। पितृ सत्तात्मक समाज होने के कारण भारतीय समाज में इस प्रकार की हिंसा निरन्तर बढ़ती जा रही है।

भारत में महिलाओं के साथ होने वाली हिंसा को व्यापक सूचना-शिक्षा-संचार के जरिए रोका जा सकता है। इस प्रकार के अभियान मौजूदा कानूनी प्रावधानों जैसे — घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम, 2005, कार्यस्थल पर महिलाओं का यौन उत्पीड़न (निवारण, प्रतिषेध और प्रतितोष)अधिनियम, 2013 और भारतीय दंड संहिता की धारा 354A, 354B, 354C और 354D का अनुपूरक हो सकते हैं और उन्हें पूर्णता प्रदान कर सकते हैं — ये सभी कानून यौन प्रताड़ना और दर्शनरति तथा पीछा करने जैसे दुर्व्यवहार के अन्य स्वरूपों से सम्बंधित हैं। हालांकि ये कानून तभी प्रभावी हो सकते हैं, जब महिलाएं आगे आएं और दोषियों के खिलाफ मामले दर्ज कराएं, इसलिए, आपराधिक गतिविधियों की रोकथाम के लिए बनाए गए ये कानूनी प्रावधान आमतौर पर अपराध होने के बाद पीड़िता को सदमे से उबारने के उपायों के तौर पर ही इस्तेमाल होते हैं।

भारत अभी तक हमलावरों की मानसिकता का अध्ययन करने, समझने और उसमें बदलाव लाने का प्रयास करने के मामले में पिछड़ रहा है। हम अभी तक विशेषज्ञों द्वारा प्रचारित इस दृष्टिकोण की मोटे तौर पर अनदेखी कर रहे हैं कि "महिलाओं और लड़कियों के साथ होने वाली हिंसा और भेदभाव को सही मायनों में समाप्त करने के लिए पुरुषों और लड़कों को समस्या के भाग से बढ़कर देखना होगा; उन्हें इस मसले के समाधान के अविभाज्य अंग के तौर पर देखना होगा।" महिलाओं से होने वाली हिंसा से निपटने का समग्र दृष्टिकोण अपराधियों के व्यवहार में बदलाव लाने के गंभीर प्रयासों के बगैर कभी पूरा नहीं हो सकता।

हिंसा करने वाले अपराधी जन्म से ही दुव्यर्वहार करने के आदी नहीं होते। वे बचपन से ही उस तरह का व्यवहार करने के लिए मानसिक तौर पर तैयार किए जाते हैं। ब्रिटेन की एंग्लिया रस्किन

यूनिवर्सिटी के अपराध विज्ञान विभाग में एक डॉक्टोरल शोध के लिए बलात्कार के 100 दोषियों से जब बात की कि तो महसूस हुआ कि वे कोई अनोखे इंसान नहीं थे। वे बेहद सामान्य इंसान थे। उन्होंने जो भी किया था वह अपने पालन-पोषण और सोच के कारण किया था।"

इस तरह का सुधार लाने के लिए सबसे पहले कदम के तौर पर यह आवश्यक होगा कि "पुरुषों को महिलाओं के खिलाफ रखने" के स्थान पर पुरुषों को इस समाधान का भाग बनाया जाए। मर्दानगी की भावना को स्वस्थ मायनों में बढ़ावा देने और पुराने घिसे-पिटे ढर्रे से छुटकारा पाना अनिवार्य होगा।

संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष (UNFPA) इस बारे में चर्चा करता है कि किस तरह ऐसी विषाक्त मर्दानगी की भावनाएं युवाओं के जहन में बहुत छोटी उम्र से ही बैठा दी जाती हैं। उन्हें ऐसी सामाजिक व्यवस्था का आदी बनाया जाता है, जहां पुरुष ताकतवर और नियंत्रण रखने वाला होता है तथा उन्हें यह विश्वास दिलाया जाता है कि लड़कियों और महिलाओं के प्रति प्रभुत्व का व्यवहार करना ही उनकी मर्दानगी है। इन्हीं घिसी-पिटी बातों के परिणामस्वरूप महिलाओं और पुरुषों दोनों को नुकसान पहुंच रहा है और संतोषजनक, परस्पर सम्मानजनक संबंध स्थापित करने की संभावनाएं धूमिल हो रही हैं।

घरेलू हिंसा को रोकने या कम करने के लिए निम्न सुझाव अपनाए जाने आवश्यक हैं।

I. शिक्षा की सतुचित व्यवस्था हो

II. रोजगार की व्यवस्था हो

III. आश्रम की व्यवस्था हो
IV. महिला न्यायालयों की स्थापना
V. बैचारिक परिवर्तन की आवश्यकता
VI. अधिकारों के प्रति चेतना

यद्यपि भारत में महिला संगठन घरेलू हिंसा के विरोध में समय-समय पर अपनी आवाज बुलन्द करते रहे हैं। महिलाओं के विरुद्ध हिंसा रोकने, इनके स्तर में सुधार करने एवं पुरूषों के समान दर्जा देने हेतु वर्ष 2002 में बनाई राष्ट्रीय नीति में महिला हिंसा रोकने के लिए निम्न संकेत दिए गए हैं -

I. राजनीतिक निर्णय प्रक्रिया में भागीदारी निर्धारित की गई

II. शिक्षा, स्वास्थ्य, सम्पत्ति का समान अधिकार

III. लैंगिक मामलों में पुरूष के समान अधिकार

IV. वैधानिक प्रक्रिया में परिवर्तन

V. महिला हिंसा एवं उत्पीड़न रोकने हेतु समुचित विकास

संसार के सभी सभ्य देश और समाज इस दिशा में कार्यरत हैं। यद्यपि पहले की अपेक्षा मानव चेतना का विकास भी हुआ है, किन्तु विकास की गति ने संस्थाओं को कमजोर किया है जिससें सामाजिक असंतुलन बढ़ा है और लिंग आधारित हिंसा में शर्मनाक बढ़ोत्तरी हुई है।

केंद्र सरकार ने महिलाओं की सुरक्षा से संबंधित परियोजनाओं के लिए अपने स्तर पर वर्ष 2013 में निर्भया कोष की स्थापना की थी। जिसके अंतर्गत 22 प्रस्ताव निरुपित और अनुशंसित किए गए हैं। इन 22 प्रस्तावों में 'वन-स्टॉप सेंटर' जैसी योजनाएं शामिल हैं, जिनकी स्थापना हिंसा की शिकार महिलाओं की सहायता के लिए चिकित्सकीय, कानूनी और मनोवैज्ञानिक सेवाओं की एकीकृत रेंज तक उनकी पहुंच सुगम बनाने के लिए की गई है। उन्हें '181' और अन्य हेल्पलाइन्स से जोड़ा जाएगा। अब तक, 151 वन-स्टॉप सेंटर्स शुरु किए जा चुके हैं। 'महिलाओं की हेल्पलाइन का सार्वजनीकरण' योजना का उद्देश्य हिंसा से पीड़ित महिला को रेफरल के माध्यम से 24 घंटे तत्काल और आपात राहत पहुंचाना है। यह हेल्पलाइन देश भर में महिलाओं से संबंधित सरकारी योजनाओं के बारे में भी जानकारी प्रदान करती है।

"महिलाओं के खिलाफ हिंसा से मुक्त भारत" बनाने के लिए सामूहिक तौर पर इस बारे में चर्चा करना आवश्यक है।

11.6 कार्य स्थल पर शोषण

विभिन्न कार्य स्थलों पर काम करने वाले लोग प्राय: तीन प्रकार के होते हैं जिनका शोषण किया जाता है

1.पुरूष 2. महिला 3. बच्चे

उच्च जाति द्वारा निम्न जाति पर, धनी व्यक्तियों द्वारा निर्धन व्यक्तियों पर, मालिक द्वारा श्रमिकों पर, पुरूषों द्वारा महिलाओं पर। शोषण अत्याचार प्राचीन समय से चला आ रहा है आज भी शोषण होता है ऐसे कार्य स्थल को हम निम्न भागों में बॉट सकते हैं।

- परिवार
- आफिस
- कारखाने या उद्योग धन्धे
- शिक्षण संस्थान
- होटल या ढॉवे

परिवार में सबसे ज्यादा शोषण महिलाओं का होता है। परिवार में प्रायः सास, पति, जेठानी या ननद द्वारा बहू पर अत्याचार होता है। ज्यादातर केस में अप्रत्यक्ष रूप से पुरुष ही महिलाओं को ऐसे उत्पीड़न का शिकार बनाते हैं। ऑफिस में बॉस द्वारा महिला और पुरूष दोनों का ही शोषण किया जाता है। महिलाओं से काम पूरा लिया जाता है और पैसा बहुत कम दिया जाता है। बात बात पर उन्हें निकाल देने व दूसरे व्यक्ति को काम पर रखने की

धमकी भी दी जाती है। ऑफिस में प्रमोशन आदि को लेकर परेशान करना, महिलाओं पर छीटाकशी द्वारा महिला कर्मचारी को बार-बार बिना किसी काम के अपने केविन में बुलाना, उसके साथ अभद्र व्यवहार करना आदि कार्य स्थल पर देखे जा सकते हैं।

कार्य स्थलों में महिलाओं के खिलाफ सभी तरह के उत्पीड़न या हिंसा के पीछे का सामान्य कारण हमारे समाज में प्रचलित पितृसत्तात्मक संरचना है जहां एक पुरुष सदैव अपने आप को जीवन के हरेक पहलू में महिलाओं से अधिक स्वंय को सर्वशक्तिमान समझता है। ये श्रेष्ठता अपने आप में महिलाओं और कार्यशील महिलाओं के खिलाफ विभिन्न प्रकार के जटिल भेदभावों को व्यवहार में प्रकट करती है। इस प्रकार, एक पुरुष कर्मचारी ये कभी नहीं चाहता कि उसके साथ कोई महिला सहयोगी बराबरी के साथ काम करे या वो कार्यालय में उससे ऊँचे स्तर पर पहुँचे, और उसे असहज बनाने, नीचा दिखाने के लिये उसका उत्पीड़न करते है।

यद्यपि हमारे पास कार्यस्थल पर महिलाओं के साथ हो रहे अत्याचार को रोकने के लिए विशेष प्रावधान है इसके अलावा भारत के सुप्रीम कोर्ट द्वारा पहले से दिये गये ऐतिहासिक दिशा निर्देश भी है लेकिन इस बुराई को तब तक नियंत्रित नहीं किया जा सकता जब तक कि पुरुषों की सोच को नहीं बदला जा सकता। जब तक कि पुरुषों के द्वारा महिलाओं की बुनियादी मानवता को सम्मान नहीं दिया जायेगा, कोई भी कानून प्रभावी नहीं हो सकेगा।

कारखाने और उद्योग धन्धों में भी मजदूरों और कर्मचारियों का शोषण होता है- जैसे काम के घण्टे ज्यादा होना, बीमारी में छुट्टी लेने पर वेतन काट लेना, ज्यादा से ज्यादा काम लेना और कम वेतन देना, निश्चित मजदूरी न देना। कहीं-कहीं तो कारखानों में (जैसे चूड़ी उद्योग, कालीन उद्योग आदि) बाल श्रमिकों को रखा जाता है उनसे ये ज्यादा से ज्यादा काम लेते हैं और बहुत कम पैसे देते हैं, उन्हें डराया धमकाया भी जाता है जिससे ये उनके खिलाफ आवाज न उठाये।

प्राइवेट शिक्षण संस्थाएं भी लोगों का शोषण करने से नही चूकती। हमारे यहाँ शिक्षित बेरोजगारी की वजह से इन्हें शिक्षक आसानी से मिल जाते हैं। ये इनसे 8 घण्टे काम करवाते हैं और पैसा बहुत कम देते हैं। ज्यादातर कॉन्वेट स्कूल भिन्न-भिन्न फण्ड या अन्य चीजों के नाम पर पैसे वसूलते रहते हैं। पैसा न जमा करने पर वे बच्चों को बेइज्जत या दण्ड देने से नही चूकते और अविभावक बच्चों की वजह से चुपचाप इनकी मनमानी सहते रहते हैं। होटल या ढ़ाबों में सबसे ज्यादा शोषण बाल श्रम का होता है उन्हें सुबह जल्दी ही उठा कर काम पर लगा दिया जाता है और खाने के नाम पर -सूखा भोजन दिया जाता है, तन ढकने के लिए उनके पास ठीक से कपड़े नही होते हैं। उन्हें वेतन भी बहुत कम देते हैं। कभी कप या प्लेट टूट जाए तो उसकी पूर्ति वे उनके वेतन से काटकर करते हैं। उन्हें हर समय अपशब्द बोलकर अपमानित करने से भी नही चूकते हैं।

11.7 सामाजिक समस्याओं के विभिन्न समाधान

सामजिक समस्याओं के समाधान से पहले विभिन्न सामाजिक समस्याओं के बारे में जानना आवश्यक है कि वे कौन सी सामाजिक समस्यायें हैं जिनका समाधान अत्यन्त आवश्यक है।

- गरीबी या निर्धनता की समस्या
- वंचन की समस्या
- जनसंख्या विस्फोट की समस्या
- बेरोजगारी
- भिक्षावृत्ति
- भ्रष्ट्राचार
- अपराध
- बाल अपराध
- महिलाओं पर अत्याचार
- बाल शोषण
- वृद्धजनों की समस्यायें
- एड्स
- पर्यावरण प्रदूषण
- निम्न आय वर्ग में बढ़ती कुष्ठा
- यौन जनित समस्यायें
- आत्महत्या
- मादक पदार्थो का सेवन
- आतंकवाद
- वेश्यावृत्ति
- जातिवाद
- क्षेत्रवाद
- भाषावाद

पारिवारिक जीवन से सम्बन्धित समस्यायें, विवाह विच्छेद, टूटते परिवार, बंधुआ मजदूर आदि जैसी अनेक सामाजिक समस्यायें हमारे समाज में व्याप्त हैं जिनका समाधान अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि ये सभी समस्यायें हमारे देश के विकास से जुडी हैं। विभिन्न सामाजिक समस्याओं के समाधान के प्रति मनुष्य में प्रारम्भ से ही

चेतना रही और समय समय पर इनकी समाधान होता रहा है ऐसी समस्याओं का समाधान निम्न रुपों में बॉट कर किया जा सकता है।

1. उपचारक विधियाँ
2. निरोधक विधियाँ
3. उपचारक विधियों में उन विधियों को सम्मिलित किया जाता है जिसमें सामाजिक समस्या के परिणामों या लक्षणों की पहचान करके उस समस्या को दूर करने की कोशिश की जाती है।

निरोधक विधि से तात्पर्य उन विधियों से होता है जिसमें सामाजिक समस्याओं के कारणों का पता लगाकर उन्हें दूर करने के उपाय सोचे जाते हैं जैसे- गरीबी या निर्धनता से उत्पन्न तंगी की पहचान करके यदि इन समस्याओं को दूर करने का उपाय किया जाता है तो इसे उपचारक विधि कहा जायेगा परन्तु यदि इनके कारणों को ध्यान में रखकर उसे दूर करने का उपाय किया जाता है तो इसे निरोधक विधि कहा जाता है।

सामाजिक समस्याओं का समाधान हम निम्न प्रकार से कर सकते हैं।

- अधिकांश लोगों का मानना है कि अनुपयुक्त शिक्षा प्रणाली ही अधिकांश समस्याओं की जड़ है अतः उपयुक्त शिक्षा प्रणाली द्वारा अधिकांश समस्याओं का समाधान किया जा सकता है।
- कुछ सामाजिक समस्यायें ऐसी हैं (जैसे निर्धनता, बेकारी आदि) जिनके समाधान के रास्ते में धन की कमी होने से अवरोध उत्पन्न हो जाता है। विभिन्न सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए प्रर्याप्त मात्रा में धन उपलब्ध हो।
- सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए लोग खुलकर अपनी मनोवृत्ति चिन्तन भाव आदि की अभिव्यक्ति करें जिससे समस्या का समाधान ठीक ढंग से हो सके।
- पुलिस और न्याय व्यवस्था में सुधार करके क्योंकि पुलिस एवं न्याय व्यवस्था की सामाजिक समस्याओं के समाधान में अहम् भूमिका होती है।
- लोगों को अपने अधिकारों के प्रति जागरुक होना अत्यन्त आवश्यक है।
- मानसिकता में परिर्वतन- किसी वर्ग जाति व धर्म के प्रति लोगों में जो भेदभाव है उसके लिए उनकी मानसिकता में परिवर्तन करके हम काफी हद तक सामाजिक समस्याओं से छुटकारा पा सकते हैं।
- मीडिया की महत्वपूर्ण भूमिका- विभिन्न सामाजिक समस्याओं में मीडिया को अपनी नैतिक जिम्मेदारी समझनी चाहिए।
- विभिन्न सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए कानून और समाज दोनों के समन्वित प्रयासों की आवश्यकता होती है। प्राचीन समस्याओं के समाधान में इन दोनों कारकों का समन्वित सहयोग रहा है।
- सामाजिक समस्याओं के विरोध में अधिनियम को पारित करके सख्ती पूर्वक उसे समाज पर लागू किया जाए। समय समय पर उस अधिनियम से प्राप्त परिणामों का मूल्यांकन किया जाए और आवश्यकता पड़ने पर

पूर्व में पारित अधिनियम में संशोधन किया जाए और नवीन परिस्थितियों के अनुरूप नये अधिनियम का निर्माण किया जाए।

- सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए सरकार द्वारा जो कानून बनाये गये हैं उनका सख्ती से पालन किया जाना चाहिए।
- सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए जो भी सरकारी व गैर सरकारी उल्लेखनीय कार्य करती है उन्हें समय -समय पर पुरस्कृत करके प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
- आर्थिक विकास होने से व्यक्ति की उपलब्धि में वृद्धि होती हैं तथा सामाजिक समस्याएँ घटती हैं।

11.8 सारांश

सामाजिक शोषण व सामाजिक समस्याओं के फलसवरूप हिंसा की प्रवृत्ति जन्म लेती है ये समस्या सिर्फ भारत के लिए ही नही वरन सम्पूर्ण विश्व के लिए चिन्ता का विषय है। सामाजिक शोषण हो या बाल श्रम, सामाजिक हिंसा हो या घरेलू हिंसा इन सभी समस्याओं के समाधान हेतु निरन्तर प्रयास होते रहे हैं। इसमें कोई दो राय नहीं कि बढ़ती हुई हिंसा ने द्वार-द्वार भय और फिर दहशत की दस्तक दी है। इस पर काबू पाना सहज प्रक्रिया नहीं है अपने आप पर काबू पाने में मानव जिस हद तक सफल हो जायेगा हिंसा उसी हद तक रुक जायेगी। कभी -कभी इन हिंसक वारदातों के कारण व्यक्ति अनेक मानसिक रोगों का शिकार भी जो जाता है।

विभिन्न सामाजिक पहलुओं चाहे वह सामाजिक शोषण या सामाजिक हिंसा हो या घरेलू हिंसा, स्वयं हमारी जागरुकता और प्रयास द्वारा ही इस पर अंकुश लगा सकते हैं।

11.9 शब्दावली

- **स्वावलंबी:** आत्म निर्भर
- **परिश्रमिक:** वेतन
- **प्रताड़ना:** पीड़ा कष्ट उत्पीड़न

11.10 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

- किसी एक पर सही का निशान लगाऐं -

1) कितने वर्ष तक की आयु वाले बच्चे बाल श्रम के अन्तर्गत आते हैं ।

(अ) 12 वर्ष (ब) 16 वर्ष

(स) 14 वर्ष (द) 18 वर्ष

2) बाल श्रम का मुख्य कारण नहीं है।

(अ) गरीबी (ब) अच्छी शिक्षा

(स) अति जनसंख्या (द) सरकारी प्रयासों में कमी

3) बाल श्रम उन्मूलन का उपाय है-

(अ) जनसंख्या नियंन्त्रण (ब) अशिक्षा का दूर करना

(स) कठोर कानूनों का निर्माण (द) बाल विवाह को प्रोत्साहन

4) निम्नलिखित में से कौन सा कारण घरेलू हिंसा के अन्तर्गत आता है -

(अ) शारीरिक दुर्व्यवहार (ब) बेमेल विवाह

(स) पारिवारिक समन्वय (द) बाल विवाह को प्रोत्साहन

5) भारत में दहेज निरोधक अधिनियम कब पारित किया गया -

(अ) 1960 में (ब) 1961में

(स) 1962 (द) 1970 में

उत्तर : 1) 14 वर्ष 2)अच्छी शिक्षा 3) उपर्युक्त सभी 4) शारीरिक दुर्व्यव्यवहार 5)1961 में

- सत्य/असत्य बताइये-

1. बाल श्रम का मुख्य कारण गरीबी है। (सत्य/असत्य)
2. कार्य स्थल पर सबसे ज्यादा शोषण पुरूषों का होता है। (सत्य/असत्य)
3. सामाजिक क्रोध , भय, दहशत के फलस्वरूप हिंसा की उत्पत्ति होती है। (सत्य/असत्य)
4. शोषण आर्थिक विषमता का परिणाम है। (सत्य/असत्य)
5. घर के भीतर महिलाओं पर होने वाले अत्याचार सामाजिक हिंसा के अन्तर्गत आता है। (सत्य/असत्य)
6. अनुपयुक्त एवं दोषपूर्ण शिक्षा प्रणाली सामाजिक समस्याओं की जड़ हैं। (सत्य/असत्य)
7. सामाजिक समस्याओं का समाधान में मीडिया की कोई भूमिका नहीं होती है। (सत्य/असत्य)
8. सामाजिक समस्याओं का समाधान अपचारक और निरोधक विधि की सहायता से किया जाता है। (सत्य/असत्य)

11.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- डा0 अरुण कुमार सिंह- समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा प्रकाशन मोती लाल बनारसी दस नई दिल्ली।
- डा0 एम0एम0 लवानिया- भारतीय महिलाओं का समाजशास्त्र प्रकाशन रिसर्च पब्लिकेशन जयपुर।
- डा0 रविन्द्र नाथ मुखर्जी डा0 भरत अग्रवाल व्यावहारिक समाजशास्त्र विवेक प्रकाशन दिल्ली।
- http://www.mediaforrights.org/infopack/hindi-infopack/551

11.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1. प्रमुख सामाजिक समस्यायें क्या है?
2. घरेलू हिंसा क्या है ?
3. कोई दो कार्य स्थल बताइये जहॉ बाल श्रम का सर्वाधिक शोषण होता है।
4. हिंसा का मुख्य कारण क्या है ?
5. बाल श्रमिकों की संख्या में कमी लाने हेतु कुछ सुझाव दीजिए।
6. विभिन्न कार्य स्थलों पर होने वाले शोषण का वर्णन कीजिए।
7. विभिन्न सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए अपने कुछ सुझाव दीजिए।

इकाई-12 सीमांतता(हाशियाकरण) एवम सामाजिक पीडा, विभिन्न सांस्कृतिक और सामाजिक-राजनीतिक संदर्भों में भलाई /कल्याण और आत्म-विकास की सुविधा प्रदान करना (Marginalization and social suffering; facilitating wellbeing and self-growth in diverse cultural and socio-political contexts)

इकाई संरचना

12.1 प्रस्तावना

12.2 उद्देश्य

12.3 सीमांतता / हाशियाकरण का अर्थ

12.4 भारत में सामाजिक हाशियाकरण

12.5 हाशियाकरण की प्रक्रियाएं

12.6 हाशियाकरण के कारण

12.7 सामाजिक पीड़ा

12.8 हाशियाकरण/ सामाजिक पीड़ा से निपटने हेतु किए गए प्रयास

12.9 सारांश

12.10 शब्दावली

12.11 स्वमूल्यांकन हेतु प्रश्न

12.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

12.13 निबंधात्मक प्रश्न

12.1 प्रस्तावना -

किसी भी राष्ट्र का निर्माण वहां के वासियों के सम्यक विकास से जुड़ा होता है | यदि विकास की धारा समाज के एक एक व्यक्ति तक सही ढंग से पहुंच रही है तो वह समाज खुशहाल होगा और राष्ट्र समृद्ध होगा | परंतु, यदि किसी राष्ट्र के नागरिकों के बीच विकास व प्रगति के साधनों का दुरुपयोग हो या संसाधनों पर खास वर्ग का कब्जा हो तो समाज में बड़ी संख्या में लोग पिछड़ते चले जाएंगे, हाशियाकृत होते चले जाएंगे | यही सामाजिक सीमांतता कहलाती है | इसी प्रकार, यदि किसी समाज का सदस्य या पूरा समुदाय युद्ध, अकाल, महामारी, अवसाद या मानसिक क्षति से उत्पन्न हालातों को झेलने के लिए मजबूर होता है तो इसे सामाजिक पीड़ा कहते हैं|

पिछले इकाइयों में आपने विभिन्न प्रकार की सामाजिक समस्याओं का अध्ययन किया| निरक्षरता, गरीबी, जनसंख्या विस्फोट, लैंगिक पक्षपात, सामाजिक शोषण, बाल श्रम, घरेलू हिंसा, कार्यस्थल के शोषण आदि के संबंध में विस्तृत जानकारी प्राप्त की|

प्रस्तुत इकाई का मुख्य उद्देश्य सीमांतता या सामाजिक हाशियाकरण एवं सामाजिक पीड़ा के अर्थ, प्रकार, प्रक्रियाएं, कारण तथा इनसे निपटने के उपायों पर प्रकाश डालना है |

12.2 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि आप -

1. सीमांतता एवं सामाजिक पीड़ा के संप्रत्यय को समझ सके |
2. सामाजिक हाशियाकरण की प्रक्रियाएं बता सके |
3. हाशियाकरण के कारणों पर प्रकाश डाल सकें |
4. सीमांतता एवं सामाजिक पीड़ा से निपटने के विभिन्न उपायों पर चर्चा कर सकें |

12.3 सीमांतता / हाशियाकरण का अर्थ:

हाशियाकरण एक सामाजिक प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति या समुदाय सामाजिक विकास की मुख्यधारा में शामिल होने से वंचित रह जाता है, वह समाज की मुख्यधारा के हाशिए से बाहर हो जाता है|हाशियाकरण की

प्रक्रिया दुनिया के कोने कोने में , हर तरह के समाज में चलती रहती है, कहीं धर्म के आधार पर, कहीं क्षेत्र तो कहीं भाषा के आधार पर| लिंग के आधार पर भेदभाव एवं हाशियाकरण तो लगभग पूरे संसार में व्याप्त है तभी तो नारी सशक्तिकरण की ओर आज पूरे विश्व का ध्यान है और मानवाधिकार तथा महिला अधिकार को लेकर पूरी दुनिया सजग है| फिर भी हाशियाकरण जारी है और व्यक्ति तथा समुदाय दुनिया के कोने कोने में इसका शिकार हो रहे हैं|

हाशियाकरण एक ऐसा संप्रत्यय है जो अस्थिर एवं बहु स्तरीय होता है | यदि सामाजिक व्यवस्था काफी प्रभुत्व शाली हो तो वैश्विक स्तर पर भी किसी भी समुदाय को पूर्णत: हाशियाकृत किया जा सकता है और किसी खास क्षेत्र में कोई जातीय समूह, कोई परिवार या कोई व्यक्ति भी हाशियाकृत हो सकता है | एक निश्चित सीमा के भीतर , हाशियाकरण सामाजिक स्तर से जुड़ा हुआ एक परिवर्तनीय घटना है | कोई व्यक्ति या समूह एक समय में उच्च सामाजिक स्तर प्राप्त कर सकता है जबकि कुछ कालखंड के पश्चात वही हाशिया कृत भी हो सकता है | ऐसा प्राय: सामाजिक परिवर्तन की स्थिति में होता है | इसी प्रकार जीवन वृत्त की अवस्थाओं के परिवर्तन के साथ व्यक्ति की हाशियाई स्थिति भी परिवर्तित हो सकती है | चार्ल्सवर्थ (2000) ने इंग्लैंड के एक स्टील निर्माण करने वाले शहर के कर्मचारियों के जीवन में होने वाले परिवर्तन का उदाहरण प्रस्तुत कर सामाजिक परिवर्तन के साथ हाशियाकरण की स्थिति की चर्चा की है |

जीवन वृत्त की एक खास अवस्था में हाशियाकरण के जोखिम में वृद्धि या कमी हो सकती है | यह कोई आवश्यक नहीं है कि बचपन में जो व्यक्ति हाशियाकरण के अंदर हो वह वयस्क होने पर भी उसी स्थिति में रहे | इसी प्रकार, एक गरीब मां बाप भी बच्चों के बड़े होने एवं होनहार निकलने पर अपनी हाशियाकृत स्थिति से बाहर निकल सकता है | ठीक विपरीत, नालायक संतानों की स्थिति में एक सामान्य मां बाप भी हाशियाकृत हो सकता है | इस दिशा में कगन एवं स्कॉट -रॉबर्ट्स (2002) का अध्ययन महत्वपूर्ण है जिन्होंने कोलकाता की एक स्लम बस्ती में वहां के लोगों की मदद करने वाले एक एनजीओ के सहयोग से किए गए अपने एक अध्ययन में पाया कि अपंग बच्चों के माता-पिता की स्थिति शनैः शनैः हाशियाकृत हो गई | इसी तरह के एक अन्य अध्ययन में वेंजेल केवोगेल,तथा गेलवर्ग (2000) ने पाया कि गृह विहीन अवस्था में पुरुषों की तुलना में महिलाओं की स्थिति ज्यादा दयनीय और जोखिम भरा होती है |

पीटर लियोनार्ड (1984) मैं अपनी पुस्तक" पर्सनालिटी एंड आईडियोलॉजी " में लिखा है-" सामाजिक हाशियाकरण समाज की उत्पादक गतिविधियों और/ या पुनरूत्पादक गतिविधियों की मुख्यधारा से बाहर हो जाना है"| इसमें दो तरह के समूह पाए जाते हैं- एक पैसा समूह है जो ऐच्छिक रूप से किसी सामाजिक व्यवस्था से हाशियाकृत हो जाते हैं | यह समूह प्रायः बहुत छोटा होता है, जैसे- कुछ खास धार्मिक समूह, नई उम्र के यात्री,

समुदाय के कुछ सदस्य, कुछ कलाकार आदि | परंतु दूसरा समूह जो अनैच्छिक रूप से ,उसके ना चाहते हुए भी, पूंजीवादी उत्पादक और पुनरूत्पादक गतिविधि की मुख्य धारा से अलग कर दिया जाता है-वास्तव में वहीं सामाजिक हाशियाकरण के अंतर्गत आता है | ऐसा समूह सामाजिक भेदभाव (रंगभेद, जातिभेद आदि) के कारण सामाजिक व्यवस्था से अलग अलग कर दिया जाता है और जीवन पर्यंत सामाजिक हाशियाकरण का दंश भोगता रहता है |

कुछ ऐसे भी लोग होते हैं जिनके लिए हाशियाकरण अर्जित होता है | ऐसा जीवन वृत्त की किसी अवस्था में विकलांगता के कारण या सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था में परिवर्तन के कारण होता है | उदाहरण स्वरूप-सोवियत संघ के धराशाई होने के पश्चात बेरोजगारी के कारण बड़ी संख्या में लोग सामाजिक हाशियाकरण का शिकार हुए | अकाल, बाढ़, युद्ध, भूकंप, महामारी आदि जैसी आपदाओं के कारण बड़ी संख्या में लोगों का एक स्थान से दूसरे स्थान पर पलायन होता है और सामाजिक हाशियाकरण में वृद्धि हो जाती है | चोम्स्की (2000) , पिल्गर (2002) आदि ने बताया कि जैसे-जैसे वैश्विक पूंजीवाद का विस्तार होता है इस तंत्र के अंतर्गत अधिकाधिक लोगों को आर्थिक विकास का मौका मिलता है, परंतु काफी संख्या में लोगों को अपनी जमीन, जीविका एवं सामाजिक सहायता के उपायों से हाथ भी धोना पड़ता है जिसके कारण सामाजिक हाशियाकरण को बढ़ावा मिलता है |

हाशियाकरण के कारण ऐसे व्यक्ति जो इसका शिकार होते हैं उन्हें अपनी जीविका पर नियंत्रण नहीं रह पाता| वे उपलब्ध जीविका स्रोतों से वंचित रह जाते हैंऔर अन्ततः समाज में अपना उपयोगी योगदान दे सकने में असमर्थ हो जाते हैं| अतः किसी भी व्यक्ति अथवा समुदाय का हाशियाकरण ना सिर्फ समाज बल्कि पूरी मानवता के उपयुक्त विकास पर बुरा प्रभाव डालता है | जिस समाज में हाशियाई लोगों यह समुदायों की संख्या अधिक होती है वहां सामाजिक उपद्रव बना रहता है, सामाजिक मानक हीनता की स्थिति बनी रहती है, उस समाज का समूह मनोबल हमेशा निम्न स्तर का रहता है| उस समाज में हमेशा उथल-पुथल की स्थिति रहती है , नतीजतन समाज की उत्पादकता घट जाती है और समाज पिछड़ता चला जाता है|

12. 4 भारत में सामाजिक हाशियाकरण: -

भारतीय संदर्भ में सामाजिक हाशियाकरण का एक लंबा इतिहास है| इसमें यहां की जाति व्यवस्था, जो वर्ण व्यवस्था का विकृत रूप है, शनै शनै सामाजिक वंचना और अछूत वाद जैसी विकृति से ग्रसित हो गई और बड़े पैमाने पर सामाजिक हाशियाकरण एवं उपेक्षा की जन्म दात्री बनी| वैसे भारत में वर्तमान जातिगत व्यवस्था का विकास मुगल साम्राज्य के पतन और अंग्रेजी शासन के प्रारंभ के साथ ही हो गया था और सन 1860 से 1920 के मध्य तो अंग्रेजों ने भारतीयों को जाति के आधार पर बांटना भी प्रारंभ कर दिया था, परंतु इसका आधार

वैदिक काल से लेकर मध्यकाल तक वर्ण आधारित व्यवस्था का जाति आधारित व्यवस्था में बदलाव की एक अनवरत प्रक्रिया है |

प्रसिद्ध मानवशास्त्री सुसान बेली (2001) ने अपनी पुस्तक "कास्ट, सोसाइटी एंड पॉलिटिक्स "मैं लिखा है कि भारत में जाति भारतीय जीवन का स्थिर तथ्य कभी नहीं रही और आज जो जाति प्रथा दिखाई दे रही है और इसका जो सामाजिक स्तरीकरण हुआ है वह मुगल काल के पश्चात दो चरणों में विकसित हुआ | 18वीं शताब्दी और मध्य 19वीं शताब्दी के कालखंड में तीन व्यवस्थाओं के तहत जाति व्यवस्था को बढ़ावा मिला- 1. पुरोहित पदानुक्रम,2. शासन और 3. सशस्त्र सन्यासी | इसमें ब्रिटिश उपनिवेशवाद की बडी महत्वपूर्ण भूमिका रही | ईस्ट इंडिया कंपनी ने अपने व्यापार को बढ़ाने के लिए जो नियम बनाएं उसमें हिंदू और मुस्लिम कानूनों के लिए अलग-अलग औपनिवेशिक प्रशासनिक प्रैक्टिस शुरू कर दिया और शनै: शनै: धर्मगत और जातिगत भेदभाव भारतीय समाज का हिस्सा बन गया | स्वभावत: समाज के पढ़े-लिखे लोग, आर्थिक रूप से मजबूत लोग सामाजिक स्तर को प्राप्त हुए और विभिन्न सेवाओं में निचले स्तर के लोग, मजदूरी करके जीने वाले लोग निम्न सामाजिक स्तर को प्राप्त हुए और धीरे-धीरे ऐसे लोग सामाजिक हाशियाकरण के शिकार हो गए |

भारत में जाति व्यवस्था जाति का एक अलग किस्म का नृवंशविज्ञानी उदाहरण है जिसका उद्गम तो प्राचीन भारत में ही हो गया था| इसका रूपांतरण एवं विकास मध्यकालीन पूर्व आधुनिक एवं आधुनिक भारत में भी विभिन्न शासकों के समय में होता रहा, खासकर मुगल शासन और अंग्रेजी शासन में| भारतीय महाद्वीपों में भी जाति आधारित अंतर विभिन्न क्षेत्रों और धर्मों में दिखाई देता रहा | इनमें नेपाली, बौद्ध, ईसाई, इस्लाम, यहूदी, सिख आदि शामिल है, सुधारवादी हिंदू आंदोलनों द्वारा इस्लाम, सिख, ईसाई आदि धर्मों द्वारा वर्ण एवं जाति प्रथा के प्रति आवाज बुलंद होती रही, फिर भी जाति प्रथा व्याप्त रही और विकृत रूप लेती गई | 'वर्ण ' की व्याख्या वर्ग के रूप में की गई जो वैदिक काल के 4 सामाजिक वर्गों को इंगित करता है- ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र | शूद्रों को, जो आज दलित के रूप में भी जाने जाते हैं, अतीत में वर्ण व्यवस्था से बाहर कर दिया गया तथा उन्हें अछूत करार कर दिया गया | वर्ण जो वर्ग आधारित था जाति में परिणत होकर जन्म आधारित हो गया| जाति आधारित पेशा और प्रतिष्ठा निर्धारित हो गई, नतीजतन बड़ी संख्या में निम्न श्रेणी की जातियों का हाशियाकरण हो गया| वर्ण से जाति और वर्ग से जन्म आधारित सामाजिक व्यवस्था उत्तर वैदिक काल से प्रारंभ होकर एक लंबे कालखंड तक चलती रही | एक गैर सरकारी आंकड़े के अनुसार आज की तिथि में भारत में लगभग 30 करोड लोग सामाजिक हाशियाकरण के शिकार हैं| जाति आधारित विभेद के कारण विभिन्न प्रकार के सामाजिक एवं आर्थिक निष्कासन, पृथक्कीकरण ,अस्वीकरण एवं अन्यनिषेध एवं प्रतिबंध भी देखने को मिल रहे हैं | दासता एवं बंधुआ मजदूरी भी इसी का परिणाम है | हालांकि कुछ कानूनी संरक्षण और और धनात्मक प्रयासों के कारण जाति आधारित हाशियाकरण में वर्तमान में कुछ कमी आई है |

भारतीय समाज में सर्वाधिक हाशियाकरण अनुसूचित जाति और जनजाति का हुआ है | भारत में जनजातियां सामाजिक व आर्थिक वंचना का शिकार रही हैं इसका कारण उनकी संजातीयता है | इनके पास ना जमीन है और ना आए के ऐसे स्रोत जिन पर इनका नियंत्रण है | जंगल में रहकर भी ये जमीन, पानी और वन संपदा से वंचित हैं | इनमें से ज्यादातर कृषि, उद्योग या बागवानी के क्षेत्रों में कार्य करने वाले श्रमिक हैं | इनमें भुखमरी, गरीबी, अशिक्षा एवं अस्वस्थता व्याप्त है |

अनुसूचित जातियों की स्थिति भी अत्यंत दयनीय है | वे अछूतवाद का शिकार है | गांव या शहर में में उन्हें सवर्णों के साथ रहने की छूट नहीं है | उनके लिए गांव का बाहरी हिस्सा, सरकारी जमीन का टुकड़ा, सड़क किनारे, रेलवे लाइन के किनारे स्लम बस्तियों में या बहुत ही निर्धन आवासीय अवस्था भी मुश्किल से उपलब्ध होती है | दलितों को हाशियाकरण के चलते नागरिक, राजनीतिक व सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक अधिकारों से वंचित रहना पड़ता है | हजारों साल से उन्हें उच्च वर्ग के लोगों या ऊंची/ दबंग जातियों के रहमो करम पर निर्भर रहना पड़ता है | न इन के पास अपना घर है ,न खेत या खलिहान | इनकी बड़ी संख्या आज भी दूसरों के खेतों में मजदूरी करके, उद्योगों में श्रमिक बन कर या जमींदारों के यहां बंधुआ मजदूर बनकर जिंदगी बसर करते हैं | कई समाज शास्त्रियों का कहना है कि दलित आज एक खास जाति न रह कर एक ऐसा समूह बन गया है जो सामाजिक अयोग्यता, उत्पीड़न, निस्सहायता , गरीबी, अशिक्षा ,अल्प क्रय शक्ति और बहुत ही दीन हीन आवासीय अवस्था का सामना कर रहा है ,जो आज भी शारीरिक, मनोवैज्ञानिक, सांवेगिक एवं सांस्कृतिक भेदभाव का शिकार है तथा जिसे न तो किसी तरह की सामाजिक हकदारी है और न ही जीविका हेतु कोई संसाधन और यदि है भी तो बहुत ही निम्न स्तर का |

भारतीय समाज में आज निम्नलिखित स्तर के लोग सामाजिक हाशियाकरण के अधिक शिकार हैं -

1. **स्त्रियां :-** भारतीय समाज में किसी भी जाति या धर्म की महिलाएं तुलनात्मक रूप से अधिक हाशियाकृत दिखाई देती हैं क्योंकि उन्हें विभिन्न प्रकार के अधिकारों से वंचित रखा गया | मनुस्मृति के समय से ही महिलाओं को "बचपन में पिता के संरक्षण में, जवानी में पति के संरक्षण में और बुढ़ापे में पुत्र के संरक्षण में " रखने की बात कही गई | दुनिया के ज्यादातर समाजों का पुरुष प्रधान होने के कारण महिलाओं की भूमिका तय करने का कार्य भी पुरुषों द्वारा हुआ, नतीजतन लगभग दुनिया के ज्यादातर समाज ने पुरुषों की तुलना में महिलाओं को कम अधिकार दिए,साथ ही उनके लिए पेशे की सीमाएं भी तय की गई | भारत में तो महिलाओं के लिए घर की चारदीवारी से बाहर निकलने तक की मनाही थी | बाद में शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में व्यवसाय के दरवाजे खुले | परंतु धीरे-धीरे व्यवसाय के लगभग सारे दरवाजे खुलते चले गए|

2. **अपंग व्यक्ति:-** सामाजिक हाशियाकरण का बड़े पैमाने पर प्रभाव उन लोगों पर पड़ता है जो किसी ना किसी प्रकार की अपंगता के शिकार होते हैं - चाहे पोलियो ग्रस्त होने के कारण शारीरिक विकलांगता हो अथवा अंधापन, बहरापन या मानसिक मंदता | समाज हर प्रकार की अपंगता को कार्य करने की अक्षमता से जोड़ता है और उन्हें अलग थलग कर देता है | परिणामत भेज सामान्य व्यक्तियों को प्राप्त होने वाले लाभ व सुविधाओं से वंचित रह जाते हैं |

3. **वयोवृद्ध:-**उम्र का अंतिम पड़ाव विभिन्न प्रकार की शारीरिक, मनोवैज्ञानिक, पारिवारिक वह सामाजिक समस्याओं को लेकर आता है | इन समस्याओं को हल कर पानी में असफल होने पर वयोवृद्ध व्यक्ति सामाजिक हाशियाकरण का शिकार हो जाता है और नतीजतन न सिर्फ उसे अनेक प्रकार की सुविधाओं से वंचित रहना पड़ता है बल्कि अकेलेपन की जिंदगी गुजारने को भी विवश होना पड़ता है |

4. **जातीय अल्पसंख्यक : -**जातीय अल्पसंख्यक से तात्पर्य किसी देश की आबादी के वैसे हिस्से से है जो अपनी अलग संस्कृति, रहन सहन, रीति रिवाज, पर्व त्यौहार के कारण मुख्य आबादी से भिन्न दिखता है और इस भिन्नता के कारण उसे मुख्य आबादी को प्राप्त सामाजिक लाभ व सुविधाओं से वंचित रहना पड़ता है | ऐसा समूह आर्थिक पिछड़ेपन का शिकार तो होता है, शैक्षिक और स्वास्थ्य संबंधी सुविधाओं से भी वंचित रहता है | कुछ समूह तो आवारा समूह होता है जो कभी एक स्थान पर टिक भी नहीं पाता, हमेशा स्थान बदल बदल कर घुमक्कड़ की जिंदगी जीना | ऐसे समूह छोटे होते हैं और प्राय: सड़क के किनारे या किसी सरकारी मैदान या जमीन में टेंट लगाकर कुछ दिन रह लेते हैं, फिर वहां से चल देते हैं | ऐसे समूह सामाजिक हाशियाकरण के अंदर हमेशा बने रहते हैं |

5. **जाति समूह :** भारत में सामाजिक हाशियाकरण के अंतर्गत बड़े पैमाने पर यहां की वैसी जातियां आती हैं जो निम्न सामाजिक स्तर प्राप्त होने के कारण समाज की मुख्यधारा से काफी पिछड़ी हुई है | इनमें अनुसूचित जाति एवं अति पिछड़ा वर्ग की संख्या सर्वाधिक है जो आज भी सामान्य वर्ग के लोगों की तुलना में शिक्षा, स्वास्थ्य, रहन सहन आदि के मामले में काफी पीछे हैं | इनकी क्रय शक्ति अत्यंत निम्न स्तर की है, शिक्षा का स्तर गिरा हुआ है, रहने को आवास नहीं है - बल्कि यूं कहें की आजादी के 75 वर्षों के बाद भी इन्हें शौचालय संबंधी सीख दी जा रही है और पीने के पानी की व्यवस्था की जा रही है | यानी, सामान्य अधिकार के उपयोग, सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक अधिकारों के उपयोग के मामले में अज्ञानता और अनभिज्ञता के कारण ये जातियां लंबे समय से सामाजिक हाशियाकरण का शिकार बनी हुई हैं |

6. **जनजातियां :---** भारत में अनुसूचित जनजातियों की संख्या लगभग 10 करोड़ है और एक सामाजिक एवं आर्थिक रूप से काफी पिछड़े हुए हैं| भारत में ये वनवासी के नाम से जाने जाते हैं, ज्यादातर आबादी जंगलों में ही छोटे-छोटे कच्चे घरों, झोपड़ियों में रहती है | इनके पास जंगल में रहते हुए भी न अपनी जमीन है, न जल और न हीं जंगल | बहुत कम लोगों के पास आर्थिक विकास हेतु सुविधाएं उपलब्ध हैं | ज्यादातर वंचित समूह है और मुख्यधारा से कटे हुए हैं | शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं का घोर अभाव है| वास्तव में, भारत में ज्यादातर जनजातीय समूह सामाजिक हाशियाकरण का शिकार हैं| अतः लगभग पूरी जनजाति को हाशियाकृत समूह कहा जा सकता है |

12.5 हाशियाकरण की प्रक्रियाएं: -

बर्टन एवं कगन (1996) ने हाशियाकरण में सामूहिक सामाजिक क्रियाओं को बढ़ावा देने अथवा रोकने की कुछ सामाजिक मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं का उल्लेख किया है जो निम्नवत है -

गरीबी एवं आर्थिक सीमांतता:- सामाजिक हाशियाकरण के अंतर्गत आने वाले लोगों या समुदायों मैं समाज की आर्थिक गतिविधियों में बहुत ही कम संलग्नता होती है | उनकी आय के स्रोतों में भिन्नता पाई जाती है| कुछ तो दैनिक मजदूरी पर जीवन गुजारते हैं तो कुछ सरकार से प्राप्त सहायता पर | इनके पास नियमित काम धंधे नहीं होते, चैरिटी पर जीने की आदत विकसित हो जाती है| गरीबी, निर्भरता एवं शर्मिंदगी की भावना इनके दिन-प्रतिदिन की आर्थिक अव्यवस्था एवं सामाजिक हाशियाकरण के पहलू होते हैं |

खराब समर्थन नेटवर्क्स एवं सामाजिक हाशियाकरण :- सामाजिक हाशियाकरण कीसमस्या की जड़ में सामाजिक नेटवर्क से हाशियाकृत व्यक्तियों या समुदाय का सापेक्षिक अथवा पूर्णता बहिष्करण है | वैसे व्यक्ति जो जन्मजात रुग्ण अथवा दिव्यांग (विकलांग) होते हैं, यदि वह धनी परिवार से हैं तब तो सामाजिक नेटवर्क उपलब्ध हो जाता है, अन्यथा खराब समर्थन नेटवर्क के कारण सामाजिक हाशियाकरण के अंतर्गत आ जाते है| ऐसे लोगों का अपने आस-पड़ोस अथवा विभिन्न सहायता समूह से संपर्क कट जाता है, और यदि रहता भी है तो बहुत ही कमजोर | ऐसे व्यक्तियों के पास सामाजिक समस्याओं का अंबार होता है और वह कार्य की दुनिया से पृथक होकर बेकारी की जिंदगी जीने को मजबूर होते हैं | वैसे व्यक्ति जो असहाय हैं अथवा जिनके बच्चे दिव्यांग/ असहाय हैं वे अपने मित्रों,रिश्तेदारों से अस्वीकृत कर दिए जाते हैं अथवा अलग अलग हो जाते हैं |

हाशियाकरण के वैचारिक पहलू :-

हाशियाकरण के शिकार व्यक्ति अथवा समुदाय जहां एक तरफ आर्थिक अव्यवस्था से गुजर रहे होते हैं वहीं दूसरी तरफ सामाजिक अव्यवस्था के शिकार भी हो जाते हैं | यह दोनों ही मौलिक पदार्थमुलक अपमान है | इसके परे, एक हाशियाकृत समूह का सदस्य होने के कारण इन्हें कहीं अधिक मनोसामाजिक- वैचारिक धमकियों का जोखिम उठाना पड़ता है | इसमें प्रथम है अन्य व्यक्तियों द्वारा किसी व्यक्ति की पहचान की परिभाषा- यानी समाज में प्रभावशाली समूहों के हित में किसी व्यक्ति के हाशियाकृत पहचान की वैचारिक परिभाषा | उदाहरण स्वरूप, ऐसा कोई भी सामाजिक आंदोलन नहीं है जो दबे कुचले और हाशियाकृत समूहों के लिए चलाया गया हो और उसकी इस आधार पर आलोचना न हुई हो कि " अरे ये लोग ऐसे ही होते हैं,इनका चरित्र ही ऐसा है "| हाशियाकृत व्यक्ति या समूह के संबंध में इस तरह की वैचारिक धारणा इनके लिए अन्य कई तरह की सामाजिक समस्याएं भी खड़ी करती हैं और अंत में खुद भी स्वीकार करने लगते हैं कि इनकी किस्मत में यही लिखा हुआ है | कुछ मनोवैज्ञानिकों का कहना है (फैनन ,1986 ; मार्टिन- बेरो,1996 - अ) कि हाशियाकृत व्यक्ति और उनका समूह अत्यंत ही भाग्यवादी होते हैं और भाग्यवादिता को वे अंगीकार कर चुके होते है| इस कारण उनका एक विशेष सांस्कृतिक संदर्भ, जैसे- निर्धनता की संस्कृति, में व्यक्तित्व गुण विकसित हो जाते हैं |

मनो सामाजिक रूप से, हाशियाकृत समूह भाग्यवादिता को अंगीकार कर लेने के कारण सामाजिक प्रभुत्व को भी स्वीकार करना अपनी नियति समझते हैं | दबंग समूह द्वारा किए गए अत्याचार और हिंसा को स्वीकार करने की लाचारी उन्हें भाग्यवादी अभिवृत्ति को विकसित करने में मदद करती है और उनका पूरा परिवेश शोषितोँ का हो जाता है |

12. 6 हाशियाकरण के कारण: -

सामाजिक हाशियाकरण किसी भी सामाजिक व्यवस्था के अंतर्गत तब उत्पन्न होता है जब उस व्यवस्था को बनाए रखने और उसे उन्नत बनाने के क्रम में उसके ऐसे सदस्यों को व्यवस्था से अलग कर दिया जाता है जिन जिनके पास उस सामाजिक व्यवस्था में बने रहने हेतु उपयुक्त क्षमता नहीं होती या जो उस व्यवस्था के लिए अवांछित होते हैं | सामाजिक व्यवस्था से तिरस्कृत किए गए लोगों का एक समूह बन जाता है जो हाशियाकृत समूह कहलाता है| यह समूह अपनी सुरक्षा और साधन का उपाय खुद करता है | सामाजिक व्यवस्था की मुख्यधारा से इसका संबंध कट जाता है| निम्नलिखित कारणों से कोई व्यक्ति या समुदाय सामाजिक व्यवस्था की मुख्यधारा से तिरस्कृत होकर अपना एक हाशियाकृत समूह बना लेता है -

1. बहिष्करण:- अपनी अयोग्यता या सामाजिक व्यवस्था के हाशिए पर खड़े होने के कारण जब सामाजिक व्यवस्था के द्वार को व्यक्ति या समुदाय बंद पाता है तो उसे मुख्यधारा से अलग होना पड़ता है | जबकि वैसे व्यक्ति जो सामाजिक व्यवस्था के मध्य स्थित होते हैं उन्हें हर सुविधाएं प्रदान की जाती हैं | हाशियाकृत व्यक्ति को सामाजिक वंचना एवं निषेध का सामना करना पड़ता है, न तो उन्हें किसी प्रकार की आर्थिक सहायता मिल पाती है और न ही कोई अन्य सामाजिक लाभ |

2. वैश्वीकरण :- वैश्वीकरण के कारण विश्व बाजार तो सबके लिए खुल गया है, परंतु यह मानवीय मूल्यों की कीमत पर खुला है | वैश्वीकरण ने अमीरों और गरीबों के बीच एक गहरी खाई बना दी है- अमीर और अमीर हुआ है , गरीब और गरीब | इससे न्यूनीकरण को बढ़ावा मिला है | सामाजिक हाशियाकरण की वृद्धि में यह एक महत्वपूर्ण कारक है |

3. विस्थापन :- दुनिया में जैसे-जैसे विकास की गति बढ़ती है, विस्थापन की समस्या भी उसी गति से बढ़ती है और परिणामतः न्यूनीकरण को बढ़ावा मिलता है | नदी घाटी योजना, विद्युत परियोजना, हवाई अड्डे का निर्माण, कारखानों का निर्माण, सड़कों एवं रेलवे लाइनों का विस्तार- ये सभी निस्संदेह विकास के प्रतीक हैं, परंतु इनके कारण बड़ी संख्या में लोगों का पलायन होता है, उसके पूर्व स्थापित रोजगार छीन जाते हैं तो कुछ के प्रभावित हो जाते हैं | विस्थापन के कारण सामाजिक हाशियाकरण को बढ़ावा मिलता है |

4. आपदा:-आपदाओं का स्वरूप विश्वव्यापी है और इससे मनुष्य द्वारा किए जा रहे हैं विकासात्मक कार्यों की वास्तविक परीक्षा होती है,आपदाएं प्राकृतिक भी होती हैं, मानव निर्मित भी| दोनों ही तरह की आपदाएं हाशियाकृत व्यक्ति में रक्षा हीनता उत्पन्न करती हैं, साथ ही नए व्यक्तियों/ समुदायों को हाशियाकृत कर देती हैं | महामारी, भूकंप, बाढ़, अकाल आदि प्राकृतिक आपदाएं हैं जबकि किसी फैक्ट्री से विषैली गैस का लीक होना, तटबंधों का टूटना, परमाणु बम गिराना, युद्ध से उत्पन्न हालात आदि मानव निर्मित आपदाएं हैं | इन दोनों ही आपदाओं से सामाजिक हाशियाकरण में वृद्धि होती है |

12. 7 सामाजिक पीड़ा :-

सामाजिक पीड़ा से तात्पर्य व्यक्ति की उस दयनीय स्थिति से है जिसमें वह युद्ध, अकाल, महामारी, अवसाद या मानसिक क्षति से उत्पन्न हालातों को झेलने के लिए विवश होता है, मजबूर होता है उसे किसी प्रकार की सहायता उपलब्ध नहीं हो पाती और उसके समक्ष मानवीय समस्याएं विकराल रूप धारण किए खड़ी नजर आती हैं| ये सभी समस्याएं राजनीतिक, आर्थिक एवं संस्थागत शक्ति की उपज होती है तथा सामाजिक समस्याओं के प्रति इन शक्तियों के प्रभाव स्वरूप उत्पन्न मानवीय अनुक्रियाएं होती हैं |

सामाजिक पीड़ा के कई रूप हैं, जैसे- तनाव, उत्पीड़न, गरीबी का अनुभव, किसी के प्रभुत्व या वर्चस्व का अनुभव| ये सभी व्यक्ति को दयनीय अवस्था में ला देते हैं और शनै: शनै;व्यक्ति सामाजिक रूप से हाशियाकृत हो जाता है |

इमैनुएल, रेनॉल्ट ने अपनी पुस्तक "सोशल सफरिंग" में स्पष्ट किया है कि दुख के विविध रूपों में सामाजिक पीड़ा भी एक महत्वपूर्ण दुख है जो सामाजिक सरोकार का विषय है| सामाजिक विज्ञानों में उपेक्षित इस महत्वपूर्ण विषय को रेनॉल्ट ने समकालीन बहस का विषय बना दिया, उनके ज्ञान मीमांसा और राजनीतिक दांव को जोड़ा, सामाजिक पीड़ा एवं सुसंगत अवधारणा का निर्माण किया ताकि व्यक्ति को उसकी सामाजिक दुनिया की बेहतर समझ हो सके|

रेनॉल्ट का तर्क है कि सामाजिक पीड़ा को सामाजिक सिद्धांत के साथ-साथ सामाजिक आलोचना में गंभीरता से लिया जाना चाहिए | रेनॉल्ट उन तरीकों का एक व्यवस्थित विवरण प्रदान करता है जिसमें सामाजिक पीड़ा की अवधारणा की जा सकती है| वह सामाजिक पीड़ा के राजनीतिक संदर्भों के राजनीतिक उपयोगों की जांच करता है,सामाजिक विज्ञान में समकालीन विवादों का सर्वेक्षण करता है, और एक एकीकृत मॉडल का प्रस्ताव करने और सामाजिक आलोचना के प्रभावों पर चर्चा करने से पहले आर्थिक, सामाजिक चिकित्सा, समाजशास्त्रीय और मनोविश्लेषणात्मक दृष्टिकोणों के बीच अंतर करता है|

सामाजिक पीड़ा के कुछ महत्वपूर्ण कारक है:-

1. बेरोजगारी एवं अर्द्ध - रोजगारी,
2. जनसंख्या का बड़े स्तर पर गांव से शहर के केंद्रों में स्थानांतरित होना,
3. मूल्यों का टकराव
4. सामाजिक तनाव
5. हिंसा एवं संघर्ष
6. गृह-युद्ध |

12. 8 हाशियाकरण से निपटने हेतु किए गए प्रयास:-

हाशियाकरण या सीमांतता से निपटने के लिए न सिर्फ हाशियाई समूहो एवं सामाजिक पीड़ा से ग्रसित लोगों द्वारा आवाज उठाई गई है बल्कि दबंगों एवं अन्यों के वर्चस्व का विरोध करने हेतु ये लगातार संघर्ष करते आ रहे हैं| इन्होंने अपने लंबे इतिहास में अनेकों रणनीतियों के सहारे हालात को बदलने का प्रयास किया है| धार्मिक सांत्वना, सशस्त्र संघर्ष, शिकार, आर्थिक बेहतरी, आदि के सहारे अपनी स्थिति में सुधार हेतु इन समूहों द्वारा तरह तरह के रास्ते अपनाए गए हैं | आजादी के 7 दशक बीत जाने के बाद भी इस तरह का संघर्ष और दलीलें जारी हैं, हालांकि उनका स्वरूप बदल गया है |

आज हमारे देश के आदिवासी, दलित, मुसलमान एवं अन्य अल्पसंख्यक समूह, महिलाएं एवं अन्य हाशियाकृत समूह यह दलील दे रहे हैं कि एक लोकतांत्रिक देश का नागरिक होने के नाते उन्हें भी बराबर का हक मिलना चाहिए और उनके अधिकारों की रक्षा होनी चाहिए | इन संघर्षों एवं आंदोलनों का परिणाम है कि आज इन समूहों को विकास का लाभ प्रदान करने के लिए सरकार की ओर से अनेकों नीतिगत प्रयास किए गए हैं ताकि इस सीमांत समूहों की भलाई एवं कल्याण का मार्ग प्रशस्त हो सके |

1. मौलिक अधिकारों का उपयोग: -

   सीमांत समूहों ने अपने मौलिक अधिकारों का उपयोग 2 तरह से किया है -

   (क) अपने मौलिक अधिकारों पर जोर देकर उन्होंने सरकार को अपने साथ हुए अन्याय पर ध्यान देने के लिए मजबूर किया है |

   (ख) कानूनों को लागू करने के लिए इन समूहों ने सरकार पर दबाव डाला है |

कई बार सीमांत समूहों के संघर्ष के कारण ही सरकारों को मौलिक अधिकारों की भावना के अनुरूप कानून भी बनाने पड़े हैं | उदाहरण स्वरूप, संविधान के अनुच्छेद- 17 के अनुसार अस्पृश्यता या छुआछूत का उन्मूलन किया जा चुका है | अब दलितों को स्कूलों, मंदिरों या अन्य सार्वजनिक स्थानों पर जाने और सार्वजनिक सुविधाओं का उपयोग करने से कोई रोक नहीं सकता| इसी प्रकार, संविधान के अनुच्छेद- 15 में कहा गया है कि भारत के किसी भी नागरिक के साथ धर्म, नस्ल ,जाति, लिंग, भाषा या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव नहीं किया जा सकता| समानता के अधिकार का हनन होने पर वंचित समूह इस प्रावधान का सहारा लेते हैं | यदि व्यक्ति या सत्ता द्वारा कानून का पालन नहीं किया जाता है तो हाई कोर्ट और सुप्रीम कोर्ट उसके अधिकारों की रक्षा के लिए सदा तत्पर रहता है |

मुसलमानों एवं अन्य अल्पसंख्यक समुदायों को भी अपने धर्म और सांस्कृतिक व शैक्षिक अधिकारों की स्वतंत्रता बनाए रखने का अधिकार प्राप्त है और हमारा संविधान इन अल्पसंख्यकों को इनके सांस्कृतिक अधिकारों की व्यवस्था करके इन्हें सांस्कृतिक न्याय देने का प्रयास करता है ताकि इन समूहों की संस्कृति पर ना तो बहुत संख्यक समुदाय की संस्कृति का वर्चस्व और ना ही वह नष्ट हो |

2. सीमांत समूहों के लिए कानून: -

सीमांत या हाशियाकृत समूहों के कल्याण और विकास के लिए, इन्हें देश की मुख्यधारा में शामिल करने के लिए सरकार ने न विभिन्न आयोगों का गठन किया है, बल्कि आयोग और समितियों की सिफारिशों के आधार पर इन समूहों के संरक्षण, कल्याण व विकास के लिए तरह तरह की योजनाओं का निर्माण भी किया है |

सामाजिक न्याय को प्रोत्साहन देने के लिए दलितों, आदिवासियों, महिलाओं के लिए मुफ्त या रियायती दरों पर छात्रावास की व्यवस्था की गई है, शिक्षण संस्थानों, नौकरियों, पंचायतों, विधानसभाओं, पार्लियामेंट आदि में आरक्षण की व्यवस्था की गई है | इसके अतिरिक्त, विद्यार्थियों के लिए वजीफे की व्यवस्था, विशेष थानों का गठन, सरकारी स्कूलों में छात्राओं के लिए विशेष योजनाएं सामाजिक न्याय को प्रोत्साहन देने हेतु प्रदान की गई हैं|

दलितों और आदिवासियों के अधिकारों की रक्षा हेतु 1989 में एक अत्यंत ही महत्वपूर्ण कानून बनाया गया जिसे" अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति अत्याचार निवारण अधिनियम 1989" के नाम से जाना जाता है | यह कानून 1989 में दलितों तथा अन्य समुदायों की मांगों के जवाब में बनाया गया था | उस समय इस बात के लिए सरकार पर भारी दबाव पड़ रहा था कि वह दलितों और आदिवासियों के साथ दिन प्रतिदिन होने वाले दुर्व्यवहार और अपमान पर रोक लगाने के लिए ठोस कदम उठाए |

इसी प्रकार, हाथ से मैला उठाने की प्रथा समाप्त करने हेतु कानून, मुस्लिम महिलाओं की मांग पर उन्हें तलाक की सामाजिक पीड़ा से बचाने हेतु तीन तलाक कानून इस दिशा में उठाए गए महत्वपूर्ण कदम हैं |

12.9 सारांश

सीमांतता एक सामाजिक प्रक्रिया है इसे सामाजिक हाशियाकरण भी कहते हैं | हाशियाकरण के कारण व्यक्ति या समुदाय समाज की मुख्यधारा के हाशिए में चला जाता है, यानी हाशियाकरण की स्थिति में व्यक्ति या समुदाय

को अपनी जीविका पर नियंत्रण नहीं रह पाता| वे उपलब्ध जीविका स्रोतों से वंचित रह जाते हैं और समाज के विकास में अपना योगदान सही ढंग से नहीं दे पाते हैं |

भारत में सामाजिक हाशियाकरण का एक लंबा इतिहास है | वैदिक काल से लेकर अब तक शनैःशनैः कुछ खास समूह के लोग, विशेषकर दलित व आदिवासी समुदाय के लोग, महिलाएं, विकलांग सामाजिक हाशियाकरण का शिकार होते आए हैं | सामाजिक हाशियाकरण के निम्नलिखित व्यक्ति व व्यक्ति समूह ज्यादा शिकार होते हैं - स्त्रियों, अपंग व्यक्ति, वयोवृद्ध, जातीय अल्पसंख्यक, जाति समूह एवं जनजातियां|

हाशियाकरण की प्रक्रिया के अंतर्गत गरीबी एवं आर्थिक सीमांतता, खराब समर्थन नेटवर्क्स एवं सामाजिक हाशियाकरण तथा हाशियाकरण के वैचारिक पहलुओं की चर्चा बर्टन एवं कगन (1996) द्वारा की गई है |

सामाजिक हाशियाकरण के कारणों में 1. बहिष्करण 2. वैश्वीकरण 3. विस्थापन तथा 4. आपदा महत्वपूर्ण हैं |

सामाजिक पीड़ा से तात्पर्य व्यक्ति या समुदाय की उस दयनीय स्थिति से है जिसमें वह युद्ध, अकाल, महामारी, अवसाद या मानसिक क्षति से उत्पन्न हालातों को झेलने के लिए विवश होता है |

हाशियाकरण और सामाजिक पीड़ा से निपटने के लिए सरकार द्वारा उठाए गए कदम / किए गए उपाय निम्नवत हैं ----

मौलिक अधिकारों की रक्षा के उपाय, अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति अत्याचार निवारण अधिनियम 1989, मानवाधिकार, महिला अधिकार, अनुसूचित जाति जनजाति आयोग, वंचित वर्गों हेतु शिक्षा, नौकरी, पंचायत, स्थानीय निकाय, विधानसभा, पार्लियामेंट में आरक्षण आदि |

12.10 शब्दावली

सीमांतता :- समाज की उत्पादक गतिविधियों या / और पुनरूत्पादक गतिविधियों की मुख्यधारा से बाहर हो जाना सीमांतता या हाशियाकरण कहलाता है |

सामाजिक पीड़ा : - वह स्थिति जिसमें व्यक्ति युद्ध, अकाल, महामारी, अवसाद या मानसिक क्षति से उत्पन्न हालातों को झेलने के लिए विवश व मजबूर होता है, सामाजिक पीड़ा कहलाती है |

आर्थिक सीमांतता : -- समाज की आर्थिक गतिविधियों में बहुत कम संलग्नता होने के कारण आय के स्रोतों पर नियंत्रण न होना और घोर गरीबी का सामना करना आर्थिक सीमांतता कहलाती है |

12.11 स्व मूल्यांकन हेतु प्रश्न

1. भारत में इनमें से कौन से सामाजिक हाशियाकरण के अंतर्गत नहीं रखे गए हैं ?

   अ. अनुसूचित जाति ब. स्त्रियां

   स. जनजातियां द. इनमें से कोई नहीं

2. समाज में उपलब्ध आय के स्रोतों पर नियंत्रण ना रहने के कारण जब व्यक्ति हाशियाकृत हो जाता है तो उसे कहते हैं -

   अ. सामाजिक पीड़ा ब. आर्थिक सीमांतता

   स. सामाजिक हाशियाकरण द. इनमें से कोई नहीं

12.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. रेनॉल्ट , ई. , सोशल सफरिंग: सोशियोलॉजी, सायकोलॉजी, पॉलिटिक्स, रोमैन एंड लिटिल फिल्ड इंटरनेशनल, 2017.
2. आशीष सक्सेना, मार्जिनलिटी, एक्सक्लूजन एंड सोशल जस्टिस, रावत पब्लिकेशंस , 2013.

12.13 निबंधात्मक प्रश्न

1. सीमांतता से आप क्या समझते हैं ? भारत में सामाजिक सीमांतता पर प्रकाश डालें |
2. सामाजिक सीमांतता के अंतर्गत आने वाले व्यक्तियों या समुदायों को रेखांकित करें |
3. हाशियाकरण की प्रक्रियाओं का उल्लेख करें | सामाजिक हाशियाकरण क्यों होता है?